राजीव गाँधी के प्रधानमंत्रित्वकाल (1984 - 1989) में भारत का पडोसी देशों से सम्बन्ध

डॉक्टर ऑफ फिलास्फी
की उपाधि हेतु
प्रस्तुत शोध-प्रबन्ध

प्रस्तुत कर्ता
केशरी नन्दन मिश्र
प्रवक्ता
हेमवती नन्दन बहुगुणा
राजकीय महाविद्यालय नैनी
इलाहाबाद

निदेशक
डा० हेरम्ब चर्तुवेदी
रीडर
मध्य/आधु इतिहास विभाग
इलाहाबाद विश्वविद्यालय
इलाहाबाद

मध्यकालीन एव आधुनिक इतिहास विभाग
इलाहाबाद विश्वविद्यालय
इलाहाबाद
2000

प्राक्कथन

इलाहाबाद विश्वविद्यालय की डी० फिल० उपाधि हेतु प्रस्तुत शोध प्रबन्ध "राजीव गॉधी के प्रधान मन्त्रित्व काल (1984-1989) मे भारत का पडोसी देशो से सम्बन्ध" के अन्तर्गत एक महत्वपूर्ण काल का अध्ययन है क्योकि यह सक्रमण काल था। भारतीय राजनीतिक नेतृत्व स्वातन्त्रोत्तर पीढी के हाथ मे पहली बार गया था अत स्वाभाविवक रूप से यह पीढी विभाजन तथा अन्य समस्याओ को नये दृष्टिकोण से देखने को उत्सुक थी। इसी काल मे सूचना क्राति का प्रस्फुटन हो रहा था तथा विश्व सिकुडता सा नजर आ रहा था ऐसे मे पडोसियो के साथ पारस्परिक सम्बन्धो को पुन परिभाषित करना अपरिहार्य हो गया था।

इस रोचक एवम् महत्वपूर्ण विषय के चयन के लिए मै अपने निदेशक डा० हेरम्ब चतुर्वेदी व विभागाध्यक्ष प्रो० श्रीमती रेखा जोशी का सदैव आभारी रहूगा। मैं अपने निदेशक डा० हेरम्ब चतुर्वेदी के प्रति बार-बार सम्मान प्रकट करता हूँ, जिनके कुशल एव स्नेहिल निर्देशन मे इस शोध प्रबन्ध को पूर्ण करने मे महत्वपूर्ण भूमिका का निर्वाह किया। मै अपने निदेशक की पत्नी श्रीमती आभा चतुर्वेदी के प्रति आभार प्रकट करता हूँ जिनका स्नेह मुझे हमेशा मिलता रहा और जिन्होने इस शोध प्रबन्ध को पूर्ण करने के लिए सदैव प्रेरित किया।

मै काग्रेस अध्यक्षा माननीया श्रीमती सोनिया गॉधी तथा सासद मणिशकर अय्यर का हृदय से आभार प्रकट करता हूँ जिन्होने समय-समय पर अति उपयोगी पुस्तको को उपलब्ध कराया।

मै अपने अग्रज डा० रामचन्द्र मिश्र (सहायक निदेशक, उच्च शिक्षा) को शत् शत् नमन करता हूँ जिनके स्नेह व उत्साहवर्धन ने इस शोध प्रबन्ध को पूर्ण करने के लिए मुझे प्रेरणा व शक्ति प्रदान की।

मै डा० अजय शकर पाण्डे (सचिव, नेडा) तथा विनय शकर पाण्डे (एस०डी०एम० गौरीगज) के प्रति आभार प्रकट करने के लिए किन शब्दो का प्रयोग करूँ, मैं नहीं जानता, परन्तु इतना अवश्य है कि उनका सहयोग इस शोध प्रबन्ध के पूर्ण होने मे अविस्मरणीय है।

मै अपनी सौम्य पत्नी श्रीमती अन्नो मिश्रा के प्रति आभार प्रकट करता हूँ जो सदैव शोध-प्रबन्ध को पूर्ण करने मे सहायता प्रदान करने के साथ-साथ प्रेरित करती रही। विशेष रूप से मै अपने बेटे अर्चित शिवम् के प्रति आभारी हूँ जिसकी पढाई के प्रति उचित ध्यान न दे सका, अपितु निरन्तर शान्त रहने को भी विवश किया।

मै श्री एस०एन० श्रीवास्तव (सयुक्त सचिव, लोक सेवा आयोग) का विशेष आभारी हूँ जिन्होने अपना सहयोग विशेष रूप से मुझे प्रदान किया।

मै अपने परम मित्रो श्री रमाकान्त शुक्ल, राजा दिनेश सिह, श्री सिद्धाशरण पाण्डे तथा श्री कमलाकान्त मिश्र को जीवन पर्यन्त विस्मृत नही कर सकता जिनके प्रेरणात्मक सहयोग ने इस शोध प्रबन्ध को पूर्ण करने मे योगदान किया।

मै राष्ट्रीय पुस्तकालय कलकत्ता, पुस्तकालय इलाहाबाद विश्वविद्यालय इलाहाबाद, केन्द्रीय पुस्तकालय इलाहाबाद, जी० बी० पन्त शोध सस्थान इलाहाबाद के पुस्तकालय, इलाहाबाद सग्रहालय के पुस्तकालय, राजीव गॉधी फाउन्डेशन, नई दिल्ली, उत्तर प्रदेश सचिवालय के पुस्तकालय, क्षेत्रीय अभिलेखागार इलाहाबाद, हे० न० ब० राजकीय महाविद्यालय आदि के पुस्तकालयाध्यक्षो के प्रति आभार प्रकट करता हूँ, जिन्होने मुझे शोध कार्य हेतु पुस्तके उपलब्ध कराई।

अन्त मे मै नितिन प्रिन्टर्स 1 मनमोहन पार्क, पुराना कटरा, इलाहाबाद के प्रबन्धक सुहैल अहमद के प्रति आभार प्रकट करता हूँ जिन्होने व्यक्तिगत रूचि के साथ इस शोध प्रबन्ध को तैयार कराने मे महती भूमिका निभाई।

साभार

केशरी नन्दन मिश्र

"शोध छात्र"

मध्य / आधुनिक इतिहास विभाग,

इलाहाबाद विश्वविद्यालय

इलाहाबाद

विषय प्रवेश

स्वर्गीय श्री राजीव गाधी का काल विदेश नीति के क्षेत्र मे अपने समकालीन परिप्रेक्ष्य के साथ-साथ एव उपग्रह क्रान्तियो के कारण अध्ययन को जटिल एव दिलचस्प बना देता है। स्वय राजीव गाधी एक नवीन पुर्नजागरण का प्रतिनिधित्व करते थे जिन्होने अपने माता-पिता को स्वतत्रता सग्राम मे जूझते हुए देखा था, किन्तु स्वय एक स्वतन्त्रोत्तर भारत मे जन्मी या पली-पोषी पीढी का नेतृत्व करते थे। अत परम्परा के साथ-साथ एक नवीन दिशा बोध उनके व्यक्तित्व एव कृतित्व मे स्पष्टत परिलक्षित होती है। अत यह अध्ययन भारत मे परम्परा और नवीनता के समन्वय का अच्छा प्रतीक है।

सुविधा की दृष्टि से इस शोध प्रवध का विभाजन नौ अध्यायो मे किया गया है।

सर्वप्रथम (1) प्रथम अध्याय मे भारतीय विदेश नीति के मौलिक सिद्धान्तो की चर्चा की गयी है। जैसे कि असलग्नता साधनो की पवित्रता का सिद्धान्त, उपनिवेशवाद तथा सम्राज्यबाद विरोधी सिद्धान्त, जातिवाद एव नस्लवाद विरोधी सिद्धान्त तथा पचशील का महत्वपूर्ण सिद्धान्त। भारतीय विदेश नीति का वास्तविक निर्माण प० जवाहर लाल नेहरू ने 1947 मे कैसे किया यह भी इसी अध्याय के अर्न्तगत विश्लेषित करने का प्रयास किया गया है। साथ ही उत्तर नेहरू युग मे स्वर्गीय लाल बहादुर शास्त्री एव स्वर्गीय श्रीमती इन्दिरा गाधी के नेतृत्व मे भारतीय विदेश नीति के अग्रिम चरणो का

विश्लेषणात्मक अध्ययन किया गया है । तत्पश्चात जनता सरकार कालीन राष्ट्रीय सहमति की विदेश नीति पर भी कुछ प्रकाश डाला गया है ।

② दूसरे अध्याय मे श्री राजीव गाधी के काल मे भारतीय राजनीतिज्ञो द्वारा अर्न्तराष्ट्रीय रगमच पर किये गए निर्णयो क्रियान्वयनो तथा अदा की गयी भूमिका का अध्ययन किया गया है। इसके अर्न्तगत सर्वप्रथम सयुक्त राष्ट्रसघ तथा उसके अर्न्तगत आने वाली सस्थाओ का भारतीय योगदान मे मूल्याकन किया गया है । गुटनिरपेक्षता भारतीय विदेश नीति का अविभाज्य अग रही है अत गुटनिरपेक्ष आन्दोलन तथा श्री राजीव गाधी भी अध्ययन के एक महत्वपूर्ण बिन्दु है । राजीव गाधी के काल मे CHOGM तथा सार्क (SAARC) जैसे दो सगठनो मे भी भारतीय योगदान तथा भूमिका की चर्चा करे बिना पडोसियो के साथ सम्बधो का वाडमय पूर्ण नही होता हे । अत यह अध्ययन बहुत महत्वपूर्ण है ।

③ जहा तक श्री राजीव गाधी के प्रधानमत्रित्व काल की पडोसियो के साथ नीति का प्रश्न है तीसरे अध्याय मे सर्वप्रथम भारत-चीन के पारस्परिक सम्बन्धो पर प्रकाश डालने का प्रयास किया गया है । इस काल मे चीन के साथ एक सकारात्मक पहल हुई अवश्य दिखती है हालाकि इसके तात्कालिक ठोस परिणाम तो

दृष्टिगोचर नही होते किन्तु एक निश्चित दिशाबोध एव सुस्पष्ट आधार निर्मित हो सका। नवम्बर 1986 तथा नवम्बर 1987 मे दोनो देशो के मध्य पारस्परिक वार्ताओ के दौर चले। इन्ही के परिणामस्वरूप मई 1988 को भारत और चीन के मध्य प्रथम पचवर्षीय सास्कृतिक सन्धि सम्भव हो सकी। अन्तत श्री राजीव गाधी जी की पाच दिवसीय चीन यात्रा के दौरान 22 दिसम्बर को भारत तथा चीन के नागरिक उडडयन सेवाओ, विज्ञान व प्राद्योगिकी तथा सास्कृतिक विनमय के लिए तीन समझौतो पर हस्ताक्षर भी किये गए। 23 दिसम्बर 1988 को चीन यात्रा समाप्ति पर जारी सयुक्त विज्ञप्ति मे दोनो देशो ने पचशील के आधारभूत सिद्धान्तो के तहत सौहार्दपूर्ण सम्बधो की स्थापना तथा सीमा विवाद समेत समस्त समस्याओ के समाधान हेतु सकारात्मक प्रयास का आश्वासन भी दिया।

चौथे अध्याय मे भारत-नेपाल तथा भारत- भूटान के मध्य पारस्परिक सम्बधो का सिहावलोकन किया गया है। स्वर्गीय श्री राजीव गाधी ने नेपाल के साथ अच्छे सम्बध के अनेक प्रयास किए जिसमे जुलाई 1986 की भारतीय राष्ट्रपति की नेपाल यात्रा तथा 1987 मे काटमाडू मे आयोजित सार्क सम्मेलन मे दोनो देशो के नेताओ का एक मच पर आना आदि महत्वपूर्ण थे, किन्तु बदलते चीन-नेपाल समीकरणो के चलते इस दौर मे भारत-नेपाल के पारस्परिक सम्बधो पर प्रतिकूल प्रभाव भी पडा तथा मैत्री एव

परागमन की सन्धि को लेकर हुए विवाद ने कटुता को जन्म दिया। इसी प्रकार भारत-भूटान के सम्बधो के बदलते समीकरणो की व्याख्या करना आवश्यक हो जाता है। 1985 मे भारत के सैद्धान्तिक विरोध के बावजूद भूटान द्वारा अणु प्रसार सधि पर हस्ताक्षर तथा 1988 मे भूटान -चीन समझौता मे दो ऐसे प्रकरण थे जिनसे स्थानीय शक्ति सन्तुलन परिवर्तित होता था। अत दोनो बार तनाव को कम करने के नियत से भारतीय प्रधानमत्री ने 1985 तथा 1988 मे भूटान की यात्रा की। भारत-भूटान मैत्री का प्रतीक चूखा जल विद्युत परियोजना अक्टूबर 1988 मे भारतीय राष्ट्रपति द्वारा उदघाटित हुई। अत स्वर्गीय श्री राजीव गाधी जी सम्बधो मे कटु व्यवहार को दूर करने मे सफल रहे।

(5)

प्रस्तावित शोध प्रबन्ध के पाचवे अध्याय मे श्री राजीव गॉधी के काल मे भारत पाकिस्तान सबधो का विश्लेषणात्मक अध्ययन किया गया है क्योकि अपने उतार चढाव के कारण इस काल मे भी इन देशो के सम्बन्ध अपने आप मे महत्वपूर्ण हो जाते है। इस पूरे काल मे दोनो राष्ट्रो के नेताओ के साथ साथ अनेक स्तरो पर पारस्परिक वार्तायें होती रही। भारत पाक सबधो मे जैसा कि सदैव होता आया है एक तरफ वार्ताओ का दौर चलता रहा तो दूसरी ओर सीमाओ पर सैनिक मुठभेडो का क्रम वदस्तूर जारी रहा। इसी दौर मे पाकिस्तान मे सत्ता परिवर्तन भी हुआ और श्रीमती बेनजीर द्वारा सत्ता सभालते

ही दोनो देशो के युवा नेताओ द्वारा ऐसे गतिशील प्रयास किये गये जो दोनो देशो के स्वतत्रयोत्तर पीढी के मानसिकता के परिचायक थे। वे परम्परागत शत्रुओ के प्राय विस्मृत कर आगे मैत्रीपूर्ण सबधो के इच्छुक थे।

(6) छठे अध्याय मे अब तक के सर्वाधिक विवादित विषय भारत-श्रीलका सबध का तटस्थ, वैज्ञानिक एव पूर्णता के साथ अध्ययन किया गया है। भारत तथा श्रीलका सबधो की वास्तविकता क्या थी, एव भारत की श्रीलका के प्रति नीति एव पारस्परिक सबध कितने सार्थक व सफल थे, इन बिन्दुओ पर गहन दृष्टि डाली गई है। विशेष तौर से २९ जुलाई १९८७ के भारत-श्रीलका के उस समझौते का सूक्ष्म अध्ययन किया गया जिसके अतर्गत भारत ने भारतीय शाति सस्थापक सेना (आई पी के एफ) के ३० ००० सैनिको को श्रीलका भेजा था।

(7) सातवें अध्याय मे कुछ अन्य पडोसी देशो के साथ भारतीय सबध की चर्चा की गई है। पूर्वी पडोसी देश बर्मा अथवा म्यामार मे सैनिक शासन के विरोध मे चल रहे प्रजातात्रिक आन्दोलन की पृष्ठभूमि मे भारत-बर्मा पारस्परिक सम्बधो का अध्ययन दिलचस्प हो जाता है क्योकि स्पष्ट रूप से प्रजातात्रिक भारत का झुकाव आन्दोलनकारियो की ओर थी। इस अध्याय मे हिन्द महासागर क्षेत्र की घटनाओ को

लेकर भारतीय विदेश नीति का मूल्याकन किया गया है। हिन्द महासागर भारतीय रक्षा सामरिक एव व्यावसायिक तीनो दृष्टियो से महत्वपूर्ण है अत उसको लेकर इस काल मे किए गए चिन्तन पर भी प्रकाश डालना अपरिहार्य हो जाता है ।

(8) आठवे अध्याय मे भारत के साथ बाग्लादेश के सम्बन्धो की विवेचना की गयी है । बाग्लादेश के भारत के साथ सम्बध विशेष सवेदनशील रहे हैं । क्योकि इस देश की स्थापना भारत के प्रयास से ही हुई थी । इस अध्याय मे बाग्लादेश के साथ भारत के सबधो की एतिहासिक विवेचना करते हुए राजीव गाधी के कार्यकाल मे उसके सकारात्मक और नकारात्मक पहलुओ पर गहन रूचि डाली गयी है। साराशत फरक्का विवाद मूरद्वीप का विवाद अवैध आव्रजन तथा सीमा विवाद आदि बिन्दुओ पर विशेष बल दिया गया है ।

नवा अध्याय सम्पूर्ण शोध पत्र का निचोड है तथा इसे उपसहार शीर्षक से सज्ञानित किया गया है । इस अध्याय मे श्री राजीव गाधी के पडोसी देशो के साथ सम्बधो की सफलता एव असफलता को बेबाक दृष्टि से समग्रता के साथ मूल्याकित किया गया है । यही नही चूँकि श्री राजीव गाधी की सम्पूर्ण विदेश नीति का 'रिफ्लेक्शन' अथवा प्रभाव पडोसी देशो के साथ सम्बधो पर पडा है अत इस अध्याय मे श्री राजीव गाधी की विदेश नीति पर सम्पूर्णता के साथ निष्कर्षात्मक टिप्पणिया प्रस्तुत की गयी है।

पडोसी देशो के साथ राजीव गाधी के सम्बधो पर निष्कर्षात्मक निर्णय देने के पूर्व यह आवश्यक था कि इन देशो के साथ राजीव गाधी के पूर्व काल मे सम्बधो की पृष्ठभूमि को समझ लिया जाय । यही कारण है कि प्रत्येक अध्याय के प्रारभ मे सम्बधित देश के साथ भारत के एतिहासिक सम्बधो की पर्याप्त विवेचना की गई है।

अन्तत इस अध्ययन के लिए जहा सामग्री का अभाव था वही दूसरी ओर निकट अतीत की घटना होने के कारण इसमे प्राय वस्तुनिष्ठ मूलयाकन का अभाव पडा । हमे उस काल के समस्त दैनिक समाचार पत्रो के साथ प्रमुख शोध पत्रिकाए व अन्य पत्रिकाओ का अध्ययन करना पडा । वही भारत की ससद की कार्यवाहियो का अध्ययन भी अपरिहार्य था । स्वर्गीय श्री राजीव गाधी तथा तमाम भारत के पडोसी देशो पर लिखे गये ग्रथो से भी सहायता लेनी पडी । उपरोक्त सामग्री किसी एक छत के नीचे सहज उपलब्ध नही थी अत शोधकर्ता को राष्ट्रीय पुस्तकालय कलकत्ता, राष्ट्रीय अभिलेखागार नई दिल्ली लोकसभा राज्यसभा तथा केन्द्रीय सचिवालय के पुस्तकालयो (दिल्ली) मे अध्ययन करना पडा वही नेहरू मेमोरियल म्यूजिसम तथा लाइब्रेरी इन्दिरा गाधी राष्ट्रीय कला केन्द्र तथा राजीव गाधी फाउण्डेशन आदि स्थानो मे भी शोध सामग्री एकत्रित करने हेतु जाना पड़ा । मै इन सभी सस्थानो के अधिकारियो एव कर्मचारियो द्वारा प्रदान की गयी सहायता के लिए हृदय से आभारी हूँ ।

अध्याय - १

आज सूचना क्राति ने 'ग्लोबल विलेज' की अवधारणा को साकार कर दिया है। देशो की दूरियॉ कम हो रही है दुनिया सिमट रही है। सूचना प्रौद्योगिकी या कम्प्यूटर ने इण्टरनेट, ई-मेल ई-कामर्स जैसी तमाम विधाये इजाद की है। भारत को कम्प्यूटर युग मे ले जाने का सपना राजीव गाधी का था। भारत मे राजीव गाधी इन्फार्मेशन टेक्नालॉजी के पुरस्कर्ता थे।

सूचना प्रौद्योगिकी और उदारीकरण से ग्लोबलाइजेशन (वैश्वीकरण) को बल मिला है। तेजी से बदलते हुए विश्व परिदृश्य मे यह आवश्यक हो गया है कि हमारे सम्बन्ध अपने पडोसियो से मैत्रीपूर्ण एव हितैषी के हों। इस सदर्भ मे यह स्पष्ट कर देना समीचीन प्रतीत होता है कि भारत सदा से ही 'वसुधैव कुटुम्बकम' का पोषक और पूरक रहा है। दल छद्म से परे हमारी विदेश नीति सदा से ही सुस्पष्ट एव पारदर्शी ही है। जॉन डन ने कहा है कोई भी द्वीप बनकर नही रह सकता है अत स्वाभाविक है कि पड़ोसी देशो से भारत के बेहतर सम्बन्ध आज के युग की माग है।

राजीव गाधी स्वातत्रोत्तर भारत मे जन्मी या पली पोसी नयी पीढी का प्रतिनिधित्व करते थे। विज्ञान और प्रौद्योगिकी मानसिकता की पृष्ठभूमि मे उनकी विदेश नीति नवोन्मेषक, अत्याधुनिक और प्रासगिक थी [1]। प्रस्तावित शोध प्रबध राजीव गाधी के प्रधानमत्रित्व काल मे भारत का पडोसी देशो से सम्बन्ध के सागोपाग और सूक्ष्म

विश्लेषण के लिये यह आवश्यक है कि भारतीय विदेश नीति के उन मूलभूत सिद्धातो का विवेचन कर लिया जाय जिनके आलोक मे हम आगे राजीव गाधी की विदेश नीति का मूल्याकन करेगे।

भारतीय विदेश नीति के नीति निर्धारक तत्व व सिद्धान्तो का आधार है-विश्व शाति गुटनिरपेक्षता निरस्त्रीकरण का समर्थन साम्राज्यवाद उपनिवेशवाद व नस्लवाद का विरोध, अफ्रो-एशियाई एकता का आह्वान और सयुक्त राष्ट्र सघ के सिद्धान्तो मे आस्था। यही भारतीय विदेश नीति की नीव के पत्थर समझे जा सकते है। भारतीय विदेश नीति के प्रमुख सिद्धातो का विश्लेषण निम्नाकित बिन्दुओ के तहत किया जा सकता है-

प्रथम बिन्दु है विश्व शान्ति| स्वतत्र भारत के प्रथम प्रधानमत्री प० जवाहर लाल नेहरू ने भारतीय सस्कृति और सभ्यता के अनुकूल विश्व बधुत्व की अवधारणा को साकार करने के लिए विश्व शाति की नीति अपनायी। विश्व शान्ति मे नेहरू की आस्था सिर्फ इस लिये नही थी कि वह बुद्ध और अशोक के देश मे जन्मे थे या अहिसक महात्मा गॉधी के पटु शिष्य थे[2]। नेहरू मे व्यक्तिगत साहस की कोई कमी नही थी। उनके जीवन के अनेक प्रकरण उन्हे दुस्साहसी ही बताते है। विश्व शान्ति के प्रति उनका आकर्षण उस व्यक्तिगत अनुभव से उपजा था, जिसमे उन्होने यूरोप के समृद्ध-सम्पन्न देशो को युद्ध की आग मे झुलसते और बर्बाद होते देखा था। जिस समय भारत आजाद हुआ उस समय सारा विश्व द्वितीय महायुद्ध के ध्वस

का बोझ उठा रहा था । नेहरू जी इस बात को भलीभॉति समझते थे कि यदि विश्व शान्ति अक्षत नही रखी जा सकी तो अफ्रीका और एशिया के अनगिनत देशो को आजाद होने का मौका नही मिलेगा[3] । जब तक बडी शक्तिया सघर्षरत रहेगी उन्हे सामरिक दृष्टि से साम्राज्यवादी रणनीति के अनुसार अपने-अपने प्रभाव क्षेत्र बनाने ही होगे ।इन प्रभाव क्षेत्रो के अन्तर्गत आने वाले छोटे राष्ट्र-विपन्न समाज ऐसी हालत मे स्वाधीनता की कल्पना ही नही कर सकते ।नेहरू जी ने यह बात बहुत पहले आत्मसात कर ली थी कि विकास और विनाश के बीच गहरा अन्तर-सबध है। जब तक विश्व पर युद्ध के बादल मडराते रहेगे, तब तक विकासशील-नवोदित राष्ट्रो के लिए राष्ट्र निर्माण के ससाधन सुलभ नही हो सकते[4] । नेहरू यूरोप मे महायुद्ध तथा अफ्रो-एशियाई देशो मे गृहयुद्ध के अपने निजी अनुभवो से यह बात भलीभॉति समझते थे कि युद्ध का दबाव अन्य सभी समाजिक प्राथमिकताओं को पीछे धकेल देता है वह मनुष्य के पाशविक पक्ष को उकसाता-उभारता है तथा अधिनायक को बढावा देता है। फासीवाद-नाजीवाद का उदय प्रथम विश्वयुद्ध के मलबे के बिना सम्भव नही था ।परमाणु अस्त्रो के अविष्कार ने नेहरू जी के शॉन्तिवादी चिन्तन को और पुष्ट किया । भारत की स्वाधीनता को सार्थक बनाने तथा विकास की गति तेज रखने के लिये विश्व शान्ति अनिवार्य थी, इसीलिये नेहरू जी ने अपने विदेश नीति नियोजन मे विश्वशान्ति को प्राथमिकता दी ।

द्वितीय बिन्दु है गुटनिरपेक्षता किसी उभरते हुए राष्ट्र की विदेश नीति के ढाचे की विकास प्रक्रिया तथा मौजूदा अतर्राष्ट्रीय पद्धतियो के साथ उसके समायोजन का निरीक्षण अपने आपमे अत्यत आकर्षक होता है । विदेश नीति के आयाम विभिन्न कारको से प्रभावित होते है, जैसे विभिन्न राज्यो का सूक्ष्म विश्लेषणात्मक मानचित्रण, सरचनात्मक बाधाओ की अनुभूति निर्णयकर्ताओ का व्यक्तित्व, सूचना अर्जन प्रणाली का आधारिक नमूना और राजनीतिक वैधता का सामाजिक आर्थिक मनोवैज्ञानिक विशलेषण[5] । रोजनो के शब्दो मे **राज्य की कार्यवाही का स्वरूप उन लक्ष्यो द्वारा निर्धारित होता है जिनकी ओर वह उन्मुख होती है** । ऐसा कुछ तो उन साधनो के द्वारा होता है जो उनका पोषण करने के लिये उपलब्ध होते है और कुछ उस सगठनात्मक एव बौधिक प्रक्रिया के द्वारा होता है जिसके माध्यम से उस कार्यवाही का चयन किया गया था[6] । किसी भी शासन प्रणाली की विदेश नीति की चर्चा करते समय राष्ट्रीय हित की धारणा की चर्चा करना बहुत उपयुक्त होगा । **हैस जे मारगेन्थो राष्ट्रीय हित सबधी धारणा की तुलना सामान्य कल्याण और सम्यक प्रक्रिया जैसी सविधान की भारी भरकम उदघोषणा से करते है ।** उनके अनुसार इस धारणा के अनेक अर्थ हो सकते है जिनका निर्धारण उन राजनैतिक परम्पराओ और समग्र सास्कृतिक सदर्भ के आधार पर होता है जिनकी परिधि मे कोई राष्ट्र अपनी नीतियो का निरूपण करता है । किसी भी विदेश नीति का

विश्लेषण तीन चरणो के आधार पर किया जा सकता है सकल्पना विषय वस्तु, और कार्यान्वयन[7] । सकल्पना का सबध वाछनीय एव व्यावहारिक लक्ष्यो के युक्तिपूर्ण मूल्याकन से होता है विषयवस्तु मे मूल्याकन का परिणाम और प्रतिफलन अतर्निहित होता है और कार्यान्वयन का सबध राज्य के समन्वय तत्र और उन तत्वो से होता है जिनके माध्यम से राज्य अन्य देशो से अपने सवध निर्मित करता है । उन्ही सदर्भो मे हमे भारत की गुट निरपेक्ष नीति के मुख्य अभिप्राय प्रयोज्यता सुसगति की जाच और विश्लेषण करना होगा[8]।

भारत की विदेश नीति के प्रमुख लक्ष्य है - अतराष्ट्रीय शाति एव सुरक्षा को कायम रखना और उसका सवर्धन करना, सभी उपनिवेशो के निवासियो के आत्मनिर्णय के अधिकार को बढावा देना, रगभेद का विरोध और समानता पर आधारित समाज की स्थापना का समर्थन, अतर्राष्ट्रीय विवादो और झगड़ो का शातिपूर्ण निपटारा अफ्रीकी-एशियाई देशो का समर्थन आणविक नि शस्त्रीकरण तथा नवीन अतर्राष्ट्रीय आर्थिक व्यवस्था की स्थापना और इन सभी लक्ष्यो की प्राप्ति सयुक्त राष्ट्र की व्यवस्था मे रहकर करना[9] । गुटनिरपेक्ष नीति के निरूपण पर विशेषकर उसके आरम्भिक काल मे, साम्राज्यवाद-विरोधी उस सघर्ष का और उसके द्वारा घोषित आदर्शो एव मान्यताओ का प्रत्यक्ष प्रभाव पड़ा जिसका नेतृत्व गाधी ने किया था । समय के साथ-साथ गुटनिरपेक्ष नीति का विश्लेषण करते समय ऐसी मान्यताओ के प्रभाव को दृष्टि से ओझल नही किया जा

सकता जैसे राजनीतिक एव सत्ता का आदर्शवादी दृष्टिकोण, एशियावाद, सिद्धातत पश्चिमी जनतत्र प्रणाली और साम्यवाद दोनो का खडन और अतर्राष्ट्रीय सवधो के प्रति आदर्शवादी दृष्टिकोण[10] ।

गुट निरपेक्षता की अवधारणा विश्वशान्ति की स्थापना के लिये एक महत्वपूर्ण पहल थी । द्वितीय महायुद्ध के बाद युद्ध विराम तो हो गया परन्तु शान्ति नही लौटी ।मित्र राष्ट्रो मे फूट पड गयी और शीतयुद्ध का आविर्भाव हुआ परमाणु अस्त्रो के आविष्कार के बाद पारम्परिक शक्ति सतुलन का स्थान आतक के सतुलन ने ले लिया[8]। यहाँ सिर्फ इतना रेखाकित करना यथेष्ट होगा कि द्वितीय विश्व युद्ध के बाद अर्न्तराष्ट्रीय स्थिति बेहद तनाव पूर्ण एव जोखिम भरी हो गयी थी। नेहरू जी ने बेहद समझदारी के साथ नवोदित राष्ट्रो के सामने गुट निरपेक्ष नीति अपनाने का सुझाव रखा । जाहिर है कि गुट निरपेक्षता का अर्थ निष्क्रिय उदासीनता तटस्थतायया अवसरवादिता नही था। अपनी स्वाधीनता को मुखर कर स्व-विवेक के अनुसार अपने राष्ट्र हित के अनुकूल विकल्प चुनना असली गुट-निरपेक्षता थी। इस नीति पर डटे रहना कट्टरपन नही, बल्कि साहस का काम था[11] ।

नेहरू जी ने यह बात आरम्भ मे ही स्पष्ट कर दी थी कि उनका इरादा अपने देश को महाशक्तियो के दगल से अलग बचाकर रखने का है और क्रमश शान्ति के क्षेत्र मे विस्तार का । उन्होने यह भी स्पष्ट कर दिया था कि भारत की कोई भी महात्वाकाक्षा तीसरे खेमे के गठन और उसके मुखिया के रूप मे उभरने का अर्थ किसी

न किसी महाशक्ति का शिविरानुचर बनना ही हो सकता है और ऐसा करना कठिनाई से अर्जित आजादी को गवाना होता है[12]। नेहरू जी ने कभी यह समझने- समझाने की नादानी नही की कि गुट निरपेक्षता का अर्थ निष्क्रिय रहना है। इसके अतिरिक्त गुट निरपेक्षता के कारण भारत जैसा नवोदित राष्ट्र दोनो खेमो मे आर्थिक सहायता ग्रहण कर सकता था। आरम्भ मे भले ही तत्कालीन सोवियत शासक स्टालिन और अमरीकी विदेश सचिव डलेस ने गुट निरपेक्षता को उपहास का विषय समझा, किन्तु कोरिया और हिन्द चीन के अनुभव के बाद उनके द्वारा भारत की ईमानदारी पर प्रश्न-चिन्ह लगाना सम्भव नही रहा। नेहरू जी ने गुट-निरपेक्ष आन्दोलन के बहाने मिश्र कम्पूचिया इण्डोनेशिया और युगोस्लाविया जैसे देशो से सम्बन्ध घनिष्ट कर अफ्रो-एशियाई भाईचारे और विश्व बन्धुत्व के भाव को पुष्ट किया[13]। जब साम्राज्यवाद व उपनिवेशवाद के विरूद्ध मुहिम छेड़ना जरूरी समझा गया, तब गुट निरपेक्षता का मन्त्र बेहद उपयोगी सिद्ध हुआ। इसीलिए शिशिर गुप्त जैसे विद्वानो ने टिप्पणी की है कि शायद गुट निरपेक्षता को भारतीय विदेश नीति का एक प्रमुख सिद्धान्त कहने की अपेक्षा इसे विदेश नीति के उद्देश्यो की प्राप्ति के लिए अपनायी गयी रणनीति कहना अधिक समीचीन है।

तीसरा बिन्दु है निशस्त्रीकरण जिस तरह गुट निरपेक्षता विश्व शान्ति से जुड़ी हुई थी, उसी तरह निशस्त्रीकरण का मुद्दा गुट

निरपेक्षता से गुँथा हुआ था। जब तक शस्त्रास्त्रो की अन्धी दौड जारी थी, तब तक विश्व शान्ति को निरापद नही समझा जा सकता था[14] । शस्त्रीकरण की प्रक्रिया अनिवार्यत युद्ध की मानसिकता को पुष्ट करती थी जिसमे सैनिक सगठन शत्रु की घेराबन्दी जोर अजमाइश आदि से बचना कठिन था। परमाणु अस्त्रो के आविष्कार ने शस्त्रीकरण की समस्या के और भी खतरनाक आयाम उद्घाटित किये थे। कई लोगो का यह भी मानना है कि नेहरू जी के लिए विश्व शान्ति और निशस्त्रीकरण अलग-अलग मुद्दे नही थे। नेहरू जी ने हर उपलब्ध अर्न्तराष्ट्रीय मच से निशस्त्रीकरण का सदेश प्रसारित किया। इसके खातिर वह अपने आत्मीय मित्रो से टकराने मे भी कभी कतराये नही। गुट निरपेक्ष देशो के बेलग्रेड शिखर सम्मलेन (1961) मे सुकार्णो के साथ उनकी मुठभेड़ निशस्त्रीकरण बनाम नव-उपनिवेशवाद को लेकर ही हुई थी[15]। कुछ अन्य विद्वानो का यह भी मानना है कि सयुक्त राष्ट्र सघ मे नेहरू जी की आस्था इसीलिए गहरी थी क्योकि वह समझते थे कि बिना व्यावहारिक सामूहिक सुरक्षा व्यवस्था के सम्प्रभु राष्ट्र स्वेच्छा से शस्त्र त्याग नही करने वाले। नेहरू जी का निशस्त्रीकरण के प्रति आर्कषण किसी दुर्बलता से नही उपजा था । न्यायसगत विषय पर आत्मरक्षा के लिए शस्त्र प्रयोग से नेहरू जी को कोई हिचकिचाहट नही होती थी । गोवा कश्मीर और चीन के प्रसग इसका अच्छा उदाहरण प्रस्तुत करते है।

चौथा बिन्दु है साम्राज्यवाद उपनिवेशवाद व रगभेद का विरोध विश्व शाति, गुटनिरपेक्षता व निशस्त्रीकरण की पक्षधरता के बाबजूद नेहरू द्वारा निर्धारित भारतीय विदेश नीति के सिद्धान्तो मे साम्राज्यवाद उपनिवेशवाद व नश्लवाद का कटटर विरोध शामिल था । सतही दृष्टि से इसमे भले ही विरोधाभास जान पड़े, लेकिन वास्तव मे ऐसा नही था । नेहरू जी ने यह बात बहुत पहले स्पष्ट कर दी थी कि विश्व शान्ति को सबसे बडा सकट साम्राज्यवाद उपनिवेशवाद एव नश्लवाद से है[16] । नेहरू जी का ऐतिहासिक अध्ययन और राजनीतिक अनुभव उन्हे यह बात भी भलीभॉति आत्मसात करवा चुका था कि नश्लवाद और उपनिवेशवाद बिना साम्राज्यवादी समर्थन के टिके नही रह सकते । भारतीय अनुभव 'के कारण नेहरू जी वास्तव मे इस सघर्ष का शातिपूर्ण परामर्श द्वारा समाधान चाहते थे, परन्तु आवश्यकता पड़ने पर सशस्त्र जन-मुक्ति सग्राम को भारतीय समर्थन देने मे उन्हे सकोच नही होता था ।

पाचवा बिन्दु है एफ्रो एशिआई एकता नेहरू जी ने यह बात बहुत पहले अच्छी तरह गॉठ बॉध ली थी ससार के सभी विपन्न और वचित राष्ट्रो और समाजो के हित एक समान है । साम्राज्यवाद, उपनिवेशवाद व नश्लवाद का विरोध हो या गुट निरपेक्षवाद आन्दोलन के सचालन द्वारा विश्व शाति और निरस्त्रीकरण को आगे बढाने का सवाल इसके लिए अफ्रो-एशियाई एकता की पुष्टि

परमाश्यक थी । इस प्रकार नेहरू द्वारा अफ्रो-एशियाई भाईचारे की बात उठाना महज भावावेश नही बल्कि एक तर्कसगत कदम था । ***छठा बिन्दु है सयुक्त राष्ट्र सघ मे आस्था*** सयुक्त राष्ट्र सघ के प्रति नेहरू जी का आर्कषण किसी आदर्शवाद नादानी से प्रेरित नही था बल्कि सिद्धान्तो के व्यवहार मे रूपान्तरण की सम्भावना के कारण उपजा था[17] । नेहरू जी निहायत यथार्थवादी ढग से जानते थे कि वीटो के कारण दो महाशक्तियो के बीच जिच की स्थिति पैदा हो जाने से स० रा० सघ मे भारत जैसे गुट निरपेक्ष देश को रचनात्मक भूमिका निभाने का मौका मिल सकता है और सदस्य देशो की जमात मे अफ्रो-एशियाई देशो की बृद्धि होने के साथ इस मच का उपयोग विश्व शान्ति की स्थापना, निशस्त्रीकरण के प्रसार और साम्राज्यवाद उपनिवेशवाद व नश्लवाद के विरूद्ध सघर्ष के लिए बखूबी किया जा सकता है ।

अब हम आते है राजीव गॉधी के पूर्व स्वतत्र भारत की विदेश नीति पर । विभिन्न चरणो मे भारतीय विदेश नीति मे निरन्तरता और परिवर्तन की दोनो धाराएँ साथ-साथ चलती रही है । आजादी के बाद भारत ने जहॉ उपनिवेशवाद, साम्राज्यवाद व रगभेद और बडी शक्तियो की गुटबाजी का कड़ा विरोध किया, वही १९६२ के बाद भारतीय विदेश नीति की प्राथमिकताए और जोर कुछ अन्य मसलो पर केन्द्रित हो गया । कुछ और वर्षो बाद नई विश्व अर्थव्यवस्था की

तलाश समुद्री कानून सम्मेलन, उत्तर दक्षिण सवाद दक्षिण-दक्षिण सवाद और परमाणु निशस्त्रीकरण जैसे मसले विश्व राजनीति मे छा गये । जाहिर है कि भारत इनके प्रति मौन नही रह सकता था । इसके अतिरिक्त पडोसी देशो के साथ भारत के सम्बन्ध भी अनेक बार काफी तनावग्रस्त हुए। इन सभी बातो का अध्ययन विभिन्न भारतीय प्रधान मन्त्रियो के शासन काल के दौरान अपनायी गई विदेश नीति के विश्लेषण से करना उचित होगा।

<u>नेहरू कालीन विदेश नीति</u>

नेहरू की विदेश नीति के प्रमुख सिद्धान्त स्वाधीनता सग्राम के दिनों मे ही सुनिश्चित हो गये थे । व्यावहारिक रूप मे इनको औपचारिक ढग से पचशील के नाम से परिभाषित किया गया । भले ही भारत व चीन के बीच पचशील समझौते पर हस्ताक्षर अप्रैल १९५४ मे किया गया, परन्तु १९४७ से लेकर १९५४ तक भारत के अन्तर्राष्ट्रीय क्रियाकलाप इसी आधार पर सचालित व समायोजित होते रहे[18] ।

पचशील के पॉच सिद्धान्त निम्नवत है-

१ सभी राष्ट्र एक दूसरे की प्रादेशिक अखण्डता व सम्प्रभुता का सम्मान करे ।

२ कोई राज्य दूसरे राज्य पर आक्रमण न करे और दूसरो की राष्ट्रीय सीमाओ का अतिक्रमण न करे ।

३ कोई राज्य दूसरे राज्य के आन्तरिक मामलो मे हस्तक्षेप न करे ।

४ प्रत्येक राज्य एक दूसरे के साथ समानता का व्यवहार करे तथा पारस्परिक हित मे सहयोग प्रदान करे अर्थात् न कोई देश बडा है और न ही छोटा ।

५ सभी राष्ट्र शान्तिपूर्ण सह-अस्तित्व के सिद्धान्त मे विश्वास करें तथा इसी सिद्धान्त के आधार पर एक-दूसरे के साथ शान्तिपूर्वक रहे और अपनी पृथक सत्ता एव स्वतन्त्रता बनाये रखे ।

कुछ विद्वानो का मानना है कि पचशील योजना नेहरू जी की आदर्शवादी रूमानियत का उदाहरण भर थी, और कुछ नही । परन्तु वास्तविकता की अनदेखी नही की जानी चाहिए कि पचशील की राजनयिक रणनीति भारतीय राष्ट्रीय हितो की यथार्थवादी कसौटी पर खरी उतरती है । भारत का विभाजन आजादी के साथ हो गया और पाकिस्तानी रजाकारो ने कश्मीर को हथियाने के लालच मे भारतीय सीमा का अतिक्रमण किया । यह अघोषित युद्ध लगभग दो वर्ष तक चलता रहा । १९४७ मे सारा भारतीय भू-भाग एक साथ स्वतत्र नही हुआ । रजवाडो की स्थिति सदिग्ध थी और गोवा, दमन दीव चन्द्रनगर व पाण्डिचेरी जैसे इलाके अग्रजो से इतर दूसरी औपनिवेशिक शक्तियो के आधिपत्य मे थे।

इसके शीघ्र बाद एक और महत्वपूर्ण परिवर्तन हुआ । १९४९ मे चीन मे साम्यवादियो ने सरकार का गठन किया और १९५० मे तिब्बत को मुक्त कराने का प्रयास शुरू किया । इसके साथ ही ब्रिटिश साम्राज्यवादी शासन काल मे सीमाकित किया गया सारा

हिमालयी भू-भाग सीमान्त विवादास्पद बन गया[19] । ऐसी परिस्थित मे यदि नेहरू जी ने नवोदित राष्ट्रो की सम्प्रभुता की रक्षा, भौगोलिक सीमाओ के सम्मान और आन्तरिक मामलो मे हस्तक्षेप से बचने के पक्ष मे अन्तर्राष्ट्रीय जनमत तैयार करने की चेष्टा की तो इसे आदर्शवादी कतई नही समझा जा सकता । समस्याओ के शान्तिपूर्ण समाधान की प्रस्तावना के बिना सह-अस्तित्व की बात सोची भी नही जा सकती थी । पचशील योजना मे यह बात अन्तर्निहित थी की इसका अभिगम सिर्फ प्रतिरक्षात्मक नही बल्कि रचनात्मक भी है । पचशील समझौते मे साझीदार पक्षो के लिए लाभप्रद उभयपक्षीय सहकार के लक्ष्य तय करना नेहरू जी की दूरदर्शिता थी ।

पचशील के बारे मे विदेशी और भारतीय विद्वानो के मत स्पष्टत दो ध्रुवो के बीच झूलते है । कुछ विद्वानो का मानना है कि पचशील की बात उठाना नेहरू जी की दुर्बलताजनित विवशता थी । सैनिक शक्ति और आर्थिक ससाधनो के अभाव मे वह और कुछ कर भी नही सकते थे। जयन्तनुज वन्द्योपाध्याय जैसे कुछेक विद्वान अपवाद है जो मानते है कि नेहरू जी ने जान बूझकर यह जोखिमभरा कदम उठाया, ताकि अन्तर्राष्ट्रीय राजनीति को नई दिशा दी जा सके [20]। दूसरी ओर लोर्न काविक और नेविल मैक्सवेल सरीखे लेखक है जिनकी समझ मे पचशील एक धूर्ततापूर्ण पाखण्ड था, जिसका एकमात्र उद्देश्य भारत को सैनिक दृष्टि से शक्तिशाली बनाने के जिए कुछ मोहलत जुटाना था । वैसे इन दोनो बातो मे

कोई बुनियादी अन्तरविरोध नही है। आर्थिक और सैनिक उपकरणो के अभाव मे यदि बाडुग सम्मेलन १९५५ के अवसर पर नेहरू जी ने भारत को अदभूत प्रतिष्ठा दिला दी थी तो उसके आधार मे पचशील की सफलता ही थी।

बाडुग सम्मेलन के बारे मे मजेदार बात यह है कि अफ्रो-एशियाई देशो के इस जमघट का आयोजन भारत के सुझाव पर नही किया गया था। कोलम्बो परियोजना मे शामिल पश्चिमी खेमे के पक्षधर राष्ट्रो ने इसकी पहल की परन्तु नेहरू जी और कृष्णा मेनन ने समझदारी दिखाते हुए इसे नवोदित राष्ट्रो की स्वाधीनता और गुट-निरपेक्षता का प्रतीक बना दिया[21]। आज कई दशक बाद बाडुग सम्मेलन की सीमाओ और असफलताओ का छिद्रान्वेषण सहज है। परन्तु नेहरू जी ने शीत युद्ध के सकटो से जूझते हुए जिस तरह सैनिक गठबन्धनो को निरस्त करने का प्रयास किया, वह प्रशसनीय था। ऐसा सोचना ठीक नही कि नेहरू जी ने सिर्फ शब्दाडम्बर या वक्तृता से तीसरी दुनिया का नेतृत्व हथियाने के लिए किया। बाडुग सम्मेलन के आयोजन के पहले कोरिया मे अपनी निष्पक्ष मध्यस्थता और हिन्द - चीन मे युद्ध विराम के लिए सक्रियता से भारत ने अपनी पात्रता प्रमाणित कर दी थी। नासिर सुकार्णो आदि के साथ व्यक्तिगत स्तर पर सार्थक सवाद का सूत्रपात भी बाडुग सम्मेलन से ही सम्भव हुआ [22]।

बाडुग सम्मेलन का एक और दृष्टि से अन्तर्राष्ट्रीय महत्व है। इस सम्मेलन मे हिस्सेदारी के बाद ही चीन की साम्यवादी सरकार का मानवीय पक्ष अन्य देशो के सामने आया और उसको वाछित स्वीकृति मिल सकी। इस सम्मेलन मे अपनाये गये प्रस्तावो का अध्ययन करने पर यह बात स्पष्ट होती है कि पचशील समझौते की ही तरह इस बार भी नेहरू जी ने आदर्श ओर यथार्थ का सन्तुलन बैठाने की कोशिश्न की थी[23]। उनका प्रमुख प्रयत्न यही कि अधिकाधिक अफ्रो-एशियाई देशो को ब्रिटिश ससदीय प्रणाली से प्रेरित सभा-सम्मेलनीय राजनय मे शामिल किया जा सके ताकि भविष्य मे उठने वाले विवादो के शान्तिपूर्ण समाधान की सम्भावना बची रहे। बाडुग सम्मेलन की उपलब्धि सही थी कि दोनो महाशक्तियो को यह बात स्पष्टत समझायी जा सकी कि अफ्रो-एशियाई देशो का उनसे कोई जन्मजात बैर सैद्धान्तिक विचारधारा या नस्ल के आधार पर नही है। पाकिस्तान और सीलोन (अब श्रीलका) के साथ भारतीय प्रतिनिधियो की नोक-झोक भले ही होती रही परन्तु बाडुग मे ही उस अफ्रो-एशियाई गुट का गठन हुआ, जिसने सयुक्त राष्ट्र सघ मे इनकी हस्ती को महत्वपूर्ण बनाया। बाडुग भावना के बिना गुट-निरपेक्ष आन्दोलन का बेगवान बनना कठिन होता[24]।

परन्तु इससे यह समझना उचित नही कि नेहरू जी की विदेश-नीति तर्क सगत और दूरदर्शी होने के कारण सभी प्रकार

की दुर्बलताओ से मुक्त थी । नेहरू जी सदैव इस बात को अनदेखा करते रहे कि अधिकतर अफ्रो-एशियाई नेताओ का स्वभाव और सस्कार उससे भिन्न है और यह जरूरी नही कि वे हमेशा बदली परिस्थिति मे अन्तर्राष्ट्रीय राज्य विषयक उनकी सभी स्थापनाओ को लाभप्रद उपयोगी उपदेश के रूप मे ग्रहण करते रहे । बाडुग सम्मेलन के सस्मरण लिखते वक्त नासिर और चाऊ एन लाई दोनो ने यह स्वीकार किया है कि नेहरू जी हमेशा इस तरह आचरण करते थे जैसे वह उनके भाई या पथ प्रदर्शक हो । दोनो नेताओ को यह बात अपमानजनक लगती रही थी [25] । इस बात से इनकार नही किया जा सकता कि नेहरू जी की विदेश नीति और राजनय व्यक्ति-केन्द्रित थे और व्यक्तिगत समीकरण बदलने पर विदेश नीति और राजनय बहुत सीमित प्रभाव वाले रह जाते थे । बेलग्रेड सम्मेलन मे सुकार्णो और नेहरू जी के बीच टकराव के बाद पुरानी स्थिति कभी लौटाई नही जा सकी ।

नेहरू जी की एक और कमजोरी थी। वह अपनी पसन्द-नापसन्द को छिपा कर नही रख सकते थे ।उनकी आस्था समाजवादी जनतत्र मे थी । वह राजशाही सामन्त वाद तथा सैनिक शासन को प्रति क्रिया वादी समझते थे । नेपाल तथा पाकिस्तान के साथ उनका व्यवहार इसी कारण कभी सहज नही हो सका । श्रीलका के प्रधानमत्री जोन कोटनेवाला ने यह एक बार सटीक टिप्पणी की थी कि भारत जैसा बडा राष्ट्र गुट-निरपेक्षता की

विलासिता भोग सकता है परन्तु छोटे राष्ट्रो के सामने यह सुविधापूर्ण मार्ग उपलब्ध नही । आचारण मे व्यावहारिक होने के बावजूद घोषणाओ के स्तर पर सैद्धान्तिक शुद्धि का दुराग्रह नेहरू जी की विश्वसनीयता और भारतीय विदेश नीति का प्रभाव कम करता रहा[5] । समस्याओ के शान्तिपूर्ण निपटारे की बात करते वक्त नेहरू जी कश्मीर मे जनमत सग्रह के अपने आश्वासन के निरन्तर टालते रहने के लिये बाध्य हुये ।वह गोवा की मुक्ति के लिये बल-प्रयोग के बाद कथनी और करनी मे दोहरे मानदण्डो के लिये भी बाध्य हुये । इसी तरह भारत चीन सम्बधो की गलतफहमी एक बडी सीमा तक इस बात से पैदा हुई कि जहॉ नेहरू जी एक ओर स्वय को स्वतत्र भारत के प्रगतिशील प्रधानमत्री के रूप मे पेश करते थे वही देश की भौगोलिक सीमा के बारे मे औपनिवेशिक उत्तराधिकार को अक्षत रखने के लिये वह बचनबद्ध थे । नेहरूकालीन भारतीय विदेश-नीति की सबसे बड़ी विशेषता यही पुरानी और नयी परम्परा तथा अन्तर्द्वन्द्व थी । महाशक्तियो और पडोसियो के साथ १९४७ से १९६४ तक भारत के राजनयिक सबधो के उतार चढाव मे इसका तनाव स्पष्ट प्रतिबिम्बित होता है ।

अब हम आते है शास्त्रीकालीन विदेश नीति पर । १९६४ मे नेहरू जी की मृत्यु के बाद लाल बहादुर शास्त्री ने देश की बागडोर सॅभाली । शास्त्री जी का व्यक्तित्व अपने पूर्ववर्ती प्रधानमत्री नेहरू जी से इतना भिन्न था कि कई लोगो के मन मे यह शक पैदा होना

स्वाभाविक था कि विदेश-नीति नियोजन और निर्धारण के मामले मे शास्त्री जी असमर्थ रहेगे। न तो उनकी शिक्षा-दीक्षा विदेश मे हुई थी और न ही प्रधानमत्री बनने के पहले उन्होने अन्तर्राष्ट्रीय मामलो मे कोई विशेष रूचि दर्शायी थी। इसी कारण जब शास्त्रीकालीन भारतीय विदेश नीति का विश्लेषण किया जाता है तो नेहरू युगीन विदेश नीति के साथ उसका फर्क दर्शाने का लोभ सवरण् कम ही लोग कर पाते है[26] । शास्त्रीकालीन विदेश नीति के सदर्भ मे अक्सर यह कहा जाता है कि उन्होने निरर्थक आदर्शवाद को सार्थक यथार्थवाद से विस्थापित किया और शान्ति प्रेमी होने के वावजूद राष्ट्र-हित के सरक्षण-सवर्धन के लिए सैनिक उपकरणो की उपयोगिता को स्वीकार किया । उनके कार्य काल का विशेष अध्ययन करने वाले प्रोफेसर एल०पी० सिह का मानना है कि भले ही उन्होने भारतीय विदेश नीति के क्षितिज सकुचित किये, किन्तु उन्हे कुल मिलाकर भौतिक सूझ से वचित नही समझा जा सकता और न ही उनके योगदान को नगण्य माना जा सकता ।

शास्त्रीय युग की भारतीय विदेश नीति मे दो प्रमुख स्मारक बिन्दु है -

१ पाकिस्तान के साथ सैनिक मुठभेड के बाद ताशकन्द समझौता और

२ श्रीलका की प्रधानमत्री श्रीमती सिरीमाओ भण्डारनायके के साथ परामर्श के बाद नागरिकता-विहीन प्रवासी तमिलो के बारे मे शान्तिपूर्ण समाधान । जहॉ एक ओर कच्छ के रण मे और उसके बाद पाकिस्तान के साथ युद्ध मे शास्त्री जी ने यह स्पष्ट किया कि वह

शान्ति प्रिय ओर शान्तिपूर्ण सह-अस्तित्व के नाम पर भारतीय राष्ट्रीय हित की बलि देने को तैयार नही है वही श्रीलका के साथ समझौते से उन्होने अन्य छोटे पडोसी देशो को इस बारे मे आश्वस्त भी किया कि भारत का कोई इरादा बल प्रयोग द्वारा उन पर हावी होने का नही था । मैत्रीपूर्ण सम्बन्धो की स्थापना के लिए वह रियायते देने को प्रस्तुत थे । नेहरू जी की तरह अपनी अन्तर्राष्ट्रीय छवि या अह को बरकरार रखने की कोई समस्या शास्त्री जी के सामने नही थी ।

शास्त्री जी की विदेश नीति के बारे मे दो-तीन विन्दु उल्लेखनीय है । एक तो उन्होने प्रधानमत्री सचिवालय का गठन कर अपने सलाहकारो की एक नई टोली जुटायी। इससे विदेश मत्रालय के अवमूल्यन की प्रक्रिया चाहे-अनचाहे शुरू हुई। इसके अतिरिक्त परमाणु नीति के मामले मे शास्त्री जी ने ऐसा निर्णय लिया कि सामरिक विकल्प को त्यागा न जा सके[27] । ताशकन्द सम्मेलन मे दौरा पडने से शास्त्री जी की मृत्यु हो गयी ।गुट-निरपेक्ष आन्दोलन राष्ट्रमण्डलीय राजनय अफ्रो-एशियाई भाईचारे आदि के क्षेत्र मे निजी छाप छोडने का कोई अवसर उसे नही मिला। यह भी स्मरणीय है कि १९६४-६६ मे भारत भयकर दुर्भिक्ष से ग्रस्त था और अपमानजनक ढग से विदेशो से खाद्यान्नके आयात पर निर्भर था। ऐसी परिस्थिति मे अर्न्तराष्ट्रीय रगमच पर भारत की भूमिका कतई प्रमुख नही हो सकती थी । इसे शास्त्रीजी की एक बडी उपलब्धि समझा जाना चाहिए कि १९६२ के घाव को भरने का काम उन्होने

अपने छोटे से कार्यकाल मे बखूबी किया ।

जहा तक इन्दिरागाधी कालीन विदेश नीति का सम्बन्ध है जनवरी १९६६ मे शास्त्रीजी के निधन के बाद इन्दिरा गाधी प्रधानमत्री बनी । जिस तरह की भ्रान्तिया शास्त्रीजी के बारे मे फैली है उसी तरह तर्कहीन अतिसरलीकरण इन्दिरा गाधी की विदेश नीति और राजनय के बारे मे भी प्रचलित है। पत्रकारो और जीवनीकारो की कृपा से श्रीमती गाधी की छवि लौह महिला और रणचण्डी वाली प्रसिद्ध हुई है। लोगो के मन मे आज भी या तो १९७१ के बगला देश मुक्ति अभियान की याद ताजा है या मई १९७४ मे पोखरन मे परमाणु विष्फोट और जून १९७५ मे आपातकाल की घोषणा की । यदि चुन-चुनकर ऐसे उदाहरण पेश किये जाय तो श्रीमती गाधी को अति यर्थाथवादी प्रमाणित करना कठिन नही होगा। इसी तरह के प्रयत्न श्रीमती गाधी के अन्तर्मुखी स्वभाव उनके पारिवारिक एकाकीपन एव मानसिक असुरक्षा के भाव को उनके अर्न्तराष्ट्रीय आचरण के साथ जोड़ने के लिए किये जाते है[28] । ऐसा नही कि यह विश्लेषण श्रीमती गाधी के आलोचक विरोधी ही करते रहे है बल्कि श्रीमती गाधी के साथ सहानुभूति रखने वाले विद्वान भी इस भ्रान्ति के शिकार हुए है। उदाहरणार्थ इन्दिरा गॉधी की विदेश नीति का विस्तार से विश्लेषण प्रस्तुत करने वाली लेखिका सुरजीत मानसिह की पुस्तक का शीर्षक ही 'India's Search for Power' अर्थात 'भारत शक्ति के तलाश मे' है। यदि अध्येता

सतर्कता न बरते तो इस निष्कर्ष तक अनायास पहुचा जा सकता है कि श्रीमती गाधी ने ही सर्वप्रथम पारम्परिक शक्ति सतुलन के आधार पर राष्ट्र हित सपादन का कार्य किया । जैसा कि ऊपर कहा जा चुका है कि काश्मीर ,पाकिस्तान गोवा आदि के सन्दर्भ मे नेहरू और शास्त्रीजी का आचरण भी आर्दशवादी नही समझा जा सकता है[29] ।

श्रीमती गाधी के सन्दर्भ मे यह टिप्पणी अधिक सार्थक लगती है कि उनकी विदेश नीति का अमूर्त वैचारिक पक्ष कही अधिक मुखर था । तीसरी दुनिया का खाद्यान्न सकट हो या पर्यावरण के सरक्षण का प्रश्न श्रीमती गाधी का उदबोधन-आह्वान सिर्फ भारतीय जनता के लिये ही नही, बल्कि समग्र विश्व के लिए होता था । इसी तरह यह भी कहा जा सकता है कि पडोसी देशो और परमाणु नीति के सन्दर्भ मे वह उसी दिशा मे आगे बढी जिस तरफ कदम पहले ही उठाये चुके थे । श्रीमती गाधी को अपनी घोषणाओ-वक्तव्यो मे क्रान्तिकारी प्रगतिशील मुद्रा ग्रहण करना अच्छा लगता था, परन्तु व्यवहार मे नेहरू जी की सुझायी गुट-निरपेक्ष नीति मे किचित मात्र परिवर्तन या सशोधन की जरूरत नही समझी ।

श्रीमती गाधी की विदेश नीति का अध्ययन करते समय इस तथ्य की अनदेखी नही की जानी चाहिये कि उन्होने कठिनतम चुनौतियो से जूझते हुए भारत को अर्न्तराष्ट्रीय राजनय का केन्द्र बिन्दु बनाये रखने मे सफलता प्राप्त की। १९६६ से १९६९-७० तक काग्रेस पार्टी मे उनकी अपनी स्थिति निरापद नही थी और भारत

विकट आर्थिक समस्याओ से जूझ रहा था । रुपये का अवमूल्यन प्रिवीपर्स की समाप्ति बैको का राष्ट्रीयकरण काग्रेस का विभाजन, बिहार मे अकाल का सामना आदि चुनौतिया उन्हे अपने कार्यकाल के पहले चरण मे पूरी तरह व्यस्त रखे रही। बगला देश प्रकरण मे पराक्रमी प्रदर्शन और १९७१ के चुनाव मे अभूतपूर्व सफलता के बाद थोड़े ही समय के लिये वैदेशिक मामलो मे एकाग्रचित होने का अवसर मिला । १९७२ मे शिमला समझौता सम्पन्न हुआ तो १९७३-७५ मे जयप्रकाश नारायण के नेतृत्व मे उनके राजनैतिक अस्तित्व की चुनौती देने वाला व्यापक जन-आन्दोलन शुरू हुआ । इसकी परिणति जून १९७५ मे आपातकाल की घोषणा और अन्तत मार्च १९७७ के ससदीय आम चुनाव मे श्रीमती गाधी की हार मे हुई ।

जहा तक जनता सरकार की विदेश नीति का सम्बन्ध है इसकी रूपरेखा मार्च १९७७ मे मोरारजी देसाई के नेतृत्व मे जनता पार्टी के शासन की बागडोर सम्भालने से बनी । जिन परिस्थितियो मे जनता सरकार का गठन हुआ उसमे गाधी ही नही, बल्कि नेहरू वश के प्रति रोष-आक्रोश का स्वर तेज था । आपात काल की तानाशाही की दुस्वपन जैसी स्मृति जनता के मन मे थी । जनता सरकार के नेता श्रीमती इन्दिरा गाधी की सभी नीतियो को बदलने के लिये व्यग्र थे । फिर भी नए विदेश मन्त्री अटल बिहारी बाजपेयी ने कार्यभार सम्भालने के बाद यह घोषणा की कि वह नेहरू की

विदेश नीति के अनुसार ही आचरण करेगे । कहने को भले ही उन्होने खालिस गुट निरपेक्षता की बात की परन्तु इसका प्रमुख अभिप्राय यह दर्शाना था कि इन्दिरा गाधी ही अपने पिता के मार्ग से विचलित हुई थी । पडोसी देशो के साथ सम्बन्धो के क्षेत्र मे जरूरत से ज्यादा रियायती व नरम रुख अपनाना जनता सरकार के लिये शायद इसलिये जरूरी हुआ कि उसके विदेश मन्त्री बाजपेयी की अब तक छवि आक्रामक हिन्दु राष्ट्रवादी वाली थी [30] । जनता सरकार का गठन विभिन्न वैचारिक रुझानो वाले राजनीतिक दलो को मिलाकर हुआ था । इसी कारण किसी स्पष्ट अर्न्तराष्ट्रीय परिपेक्ष्य या सैद्धान्तिक सरोकार की अपेक्षा उनसे नही की जा सकती थी । यह स्वभाविक था कि नौकरशाही का महत्व विदेश नीति नियोजन के क्षेत्र मे बढा ।

अर्न्तराष्ट्रीय मामलो मे जनता सरकार के वरिष्ठ सदस्यो की अनुभवहीनता भी भारत के लिये हानिप्रद सिद्ध हुई । तत्कालीन अमरीकी राष्ट्रपति कार्टर की भारत यात्रा १९७८ के दौरान मोरारजी देसाई के साथ उपजी गलतफहमी और जनता सरकार (चरण सिह के नेतृत्व मे) के दूसरे विदेश मन्त्री श्याम नन्दन मिश्र की विदेश यात्राएँ इसका उदाहरण है । जहा एक ओर गृहमन्त्री चरण सिह इसे गौरव का विषय समझते थे कि उन्हे दीन दुनिया की कोई खबर नही रहती वही उन्हे बिना किसी प्रमाण के अपने मन्त्रिमण्डल के एक सहयोगी को विदेशी गुप्तचर बताने मे कोई सकोच नही हुआ । इसी

तरह प्रधानमन्त्री मोरारजी देसाई शान्ति प्रेमी थे परन्तु इतने नही कि सिद्धान्तो के लिये वह राष्ट्र के सामरिक हित बलि कर देते । परमाणु नीति के मामले मे एकपक्षीय घोषणाए या पाकिस्तान मे भुटटो की कानूनी हत्या की भर्त्सना न करना उनकी निरपेक्षता ही प्रकट करते है[31] ।

अनेक बार जनता सरकार की विदेश नीति का अध्ययन - विश्लेषण करते वक्त परिवर्तन एव निरन्तरता की बात कही जाती है । यह कहना अधिक सटीक होगा कि ढाई वर्ष का यह समय एक तरह का व्यवधान काल था । यह एक ऐसा अन्तराल था जिसमे सुचिन्तित विदेश नीति के दर्शन नही होते[32] । अन्तर्राष्ट्रीय घटनाक्रम के प्रति अपनी इच्छानुसार व्यक्ति विशेष की प्रत्यावर्तित क्रियाए ही देखने को मिलती रही ।

श्रीमती इन्दिरा की वापसी और विदेश नीति १९८० के आम चुनाव मे श्रीमती इन्दिरा गाधी की अत्यन्त नाटकीय ढग से अभूतपूर्व विजय हुई । परन्तु जहा से व्यवधान पड़ा था, वही से छूटा काम आगे बढाने का प्रश्न नही उठता था । जनता सरकार के कार्यकाल मे श्रीमती इन्दिरा गाधी को अपने अनेक मित्रो को परखने का अवसर मिला[33] । इसके अतिरिक्त अपनी वापसी के बाद उनके मन मे निश्चय ही इस बात का अहसास गहरा हुआ कि नियति ने उन्हे कुछ ऐतिहासिक उपलब्धियो के लिये चुना है । इस दूसरे कार्यकाल

के विषय मे यह कहा जा सकता है कि एक साथ मोहभग के बाद श्रीमती इन्दिरा गाधी की विदेश नीति मे अति यथार्थवादी और आदर्शवादी महत्वाकाक्षाओ का सम्मिश्रण देखने को मिलता है। सयोगवश ही सही, मार्च १९८३ मे गुटनिरपेक्ष आन्दोलन का नेतृत्व ग्रहण करने के साथ श्रीमती इन्दिरा गाधी अर्न्तराष्ट्रीय नेताओ की पहली वरिष्ठ श्रेणी मे आ गयी। भारत की अर्न्तराष्ट्रीय प्रतिष्ठा और राजनयिक प्रभाव मे उनके जीवन पर्यन्त कोई क्षय नही हुआ [34]।

पाद टिप्पणिया

1 Tımes of Indıa 24 5 1991 (Edıtorıal)
2 Appadoraı, A Domestıc Roots of Indıa s Foreıgn Polıcv Page-76
3 Arnold Wolfer s Internatıonal Encyclopaedıa of the Socıal Scıences Page 124
4 Appadoraı A Domestıc Roots of Indıa's Foreıgn Polıcv Page 94
5 An artıcle by Kamalkant Panda, Motılal Nehru College
6 Jemes N Rosenau(ed) Internatıonal Polıtıcs and Foreıgn Polıcy A Reader ın Research and Theory (New York, 1969)p 17
7 Hans J Morgenthau Dılemmas of Polıtıcs (Chıcago 1958)
8 Gopal Krıshna (One perty tomınance) Development and trends Page 127
9 Quoted ın Servepallı Gopal J L Nehru A Bıographv ' Page 69
10 Braıne B Wıll Indıa Stay ın the Common Wealth? Page 99
11 Chıpman W Indıa s Foreıgn Polıcv Page-54
12 Suffimal Dutt Wıth Nehru ın the Foreıgn Polıcy Page 116
13 Arnold Wolfer s Internatıonal Fncvclopedıa of the Socıal Scıences Page-201
14 Durgadas Indıa and the world Page -176
15 Durgadas Indıa and the world Page 104
16 Dutt, V P Indıa s Foreıgn Polıcy Page 97
17 सूचना एव प्रसारण मत्रालय भारत सरकार द्वारा प्रकाशितसदर्भ 'ग्रथ इण्डिया १९८७' से
18 Tımes of Indıa 24 8 1991 (Edıtorıal)
19 Arnold Wolfer s Internatıonal Encyclopedıa of the Socıal Scıences Page-236
20 Appadoraı, A Domestıc Roots of Indıa s Foreıgn Polıcy Page-197
21 Burke S M Maınsprıngs of Indıan and Pakıstan Foreıgn Polıcıes Page 198
22 Arnold Wolfer's Internatıonal Encyclopedıa of the Socıal Scıences Page 287
23 Appadoraı A Domestıc Roots of Indıa s Foreıgn Polıcv Page-207
24 Burke S M Maınsprıngs of Indıan and Pakıstan Foreıgn Polıcıes Page 234
25 Arora. S K Amerıcan Foreıgn Polıcv Towards Indıa Page-97
26 Berkes, R.N and Bedı, M S The Dıplomacy of Indıa Indıan Foreıgn Polıcy ın the Unıted Natıons Page 232

27 Braine B Will India Stay in the Common Wealth? Page-164

28 Burke S M Mainsprings of Indian and Pakistan Foreign Policies Page 94

29 Rajni Kothari 'The Congress System in India From Party System and Election Studies Page 77

30 Statesman 4 1 1978

31 Indian Express Editorial 7 July 1979

32 Chipman W India s Foreign Policy Page 116

33 Dainik Hindustan 13 12 1980

34 Dutt V P India s Foreign Policy Page 201

अध्याय - २

द्वितीय अध्याय मे हम राजीव गाधी के काल मे भारतीय राजनीतिज्ञो द्वारा समय-समय पर अन्तर्राष्ट्रीय मचो पर किये गये निर्णयो उनके क्रियान्वनो तथा अदा की गई भूमिका का विवेचन करेगे ।

इन्दिरा गाधी की दुखद हत्या के कारण विश्व शान्ति निरस्त्रीकरण और विकास का अग्रणी समर्थक हमारे बीच से चला गया परन्तु जितने आसान और सुव्यवस्थित ढग से राजीव गाधी को प्रधानमत्री नियुक्त किया गया और उसके बाद जिस तरीके से स्वतन्त्र निष्पक्ष और शातिपूर्ण ढग से चुनाव हुए तथा राजीव गाधी की अध्यक्षता मे नई सरकार ने पदभार सम्भाला उससे सम्पूर्ण विश्व को यह स्पष्ट प्रमाण प्राप्त हो गया कि भारतीय लोकतान्त्रिक प्रणाली कितनी परिपक्व तथा मजबूत हो चुकी है[1] ।

श्री गाधी ने एक शान्ति दूत की हैसियत से देश की सीमाओं से बाहर जाकर अपनी हर मजिल और हर पडाव पर जो कुछ किया अपने जो प्रभाव छोडे उनकी समीक्षा से पहले, आइये हम उनके उन सकल्पो और सदभावो की झाकी से परिचित हो ले जो उनकी विश्व यात्रा मे उनकी झोली के सबल रहे। यानी उनके विचार और इरादे ।

श्री गॉधी ने २० अप्रैल १९८८ को लोकसभा मे भारत की विदेश नीति के सन्दर्भ मे अपने विचार प्रकट करते हुए कहा था - “पिछले दो-तीन वर्षो से, विशेषकर अन्तर्राष्ट्रीय सम्बन्धो मे विश्व मे

बडी तेजी से बदलाव हो रहे है। नये दृष्टिकोण विकसित हो रहे है सोच के नये ढग निकल रहे है। इन सबसे सचार के सभी देशो के सामने नई चुनौतियॉ खडी हो जायेगी, खासतौर से भारत सरीखे देशो के सामने जो अन्तर्राष्ट्रीय मामलो मे महत्वपूर्ण भूमिका निभाते है। इस तरह के हालात मे कोई भी अपने अतीत मे ही डूबा नही रह सकता । हमे लचीला रूख अपनाना ही होगा साथ ही हमे अपने उन आधारभूत सिद्धान्तो और नैतिक अवधारणाओ पर भी अटल रहना होगा जिन पर हमारी विदेश नीति टिकी हुई है[2] ।"

श्री गॉधी ने भारत के शान्ति प्रयासो को विश्व के अन्य देशो द्वारा मिलने वाले समर्थन को रेखाकित करते हुए उन्होने कहा –
"जब हमने अपनी विदेश नीति को नैतिकता के साथ जोडा तो उस समय हमे अव्यावहारिक माना गया लेकिन आज ऐसा नही है, अब विश्व अहिसा आणविक हथियारो से मुक्ति और निरस्त्रीकरण के महत्व को समझने लगा है[3]।"

हमारे 'बसुधैव कुटुम्बकम्' के सनातन सिद्धान्त को विश्व मे प्राप्त हो रही आम सहमति पर हर्ष व्यक्त करते हुए श्री राजीव गाधी ने कहा था- "आज विश्व यह स्वीकार करने लगा है कि तब तक हमारा सही और पूर्ण विकास नही हो सकता, जब तक सच्चाई महाशक्तियो के हितो और प्रभावो के बोझ तले दबी रहेगी। मानव जाति एक है। 'बसुधैव कुटुम्बकम' के हमारे सिद्धान्त पर पूर्ण विश्व मे आम सहमति होती जा रही है। जो हमारे शान्तिपूर्ण सह-

अस्तित्व के सिद्धान्त के प्रति शकालु थे आज वही राष्ट्र भय दिखाने की नीति छोडकर शान्तिपूर्ण सह-अस्तित्व की बात कर रहे है। पण्डित जवाहर लाल नेहरू जी ने हमारी विदेश नीति को मजबूत आधारशिला पर खड़ा किया था। आज विश्व भी हमारी ही विचारधारा मे शामिल होता जा रहा है[4] ।"

परमाणु शस्त्र विहीन विश्व के लिए दिल्ली घोषणा श्री गॉधी ने विश्व को परमाणु शस्त्र विहीन करने की अपील करने वाली दिल्ली घोषणा की चर्चा करते हुए कहा था - "इसका एक सशक्त प्रमाण सामने ही है जब अभी हाल ही मे, नवम्बर १९८६ मे नई दिल्ली घोषण-पत्र मे अहिसा और आणविक निरस्त्रीकरण के सिद्धान्तो के प्रति निष्ठा दुहराई गई। आणविक शस्त्रो के विकास पर रोक लगाने की बात से ही हमारी नीतियो के प्रति उनका झुकाव साफ झलकता है [5]।"

इस सफलता के मूल मे उपस्थित पॉच महाद्वीप, छ राष्ट्र की पहल की याद दिलाते हुए श्री गॉधी ने कहा था -

मई १९८४ मे इन्दिरा जी की छत्रछाया मे छ राष्ट्रो द्वारा पहल की गयी। ऐसा उस समय किया गया, जब महाशक्तियो के बीच सम्बन्ध नाममात्र के थे तब किसी ने भी नही सोचा था कि तनाव इस प्रकार दूर हो जायेगे। लेकिन उन्होने जो प्रयास किये विश्व मे उचित वातावरण बनाने और निरस्त्रीकरण की दिशा मे रत, उन सभी देशो की अनवरत कोशिशो के फलस्वरूप आई एन एफ सन्धि पर

हस्ताक्षर हुए। उन्ही के शब्दो मे पहली बार आणविक हथियारो का विघटन हुआ। हम देख रहे है कि पहली बार एक सही अन्तर्राष्ट्रीय लोकतान्त्रिक व्यवस्था विकसित हो रही है और दो महाशक्तियो की विभाजन रेखा अब लुप्त होती जा रही है[6]।

श्री गॉधी ने आशाजनक वातावरण की चर्चा के बावजूद कुछ नये सभावित खतरो के प्रति चेतावनी भी दी -

"यही समय है जब हमे एक ऐसे विश्व के निर्माण की दिशा मे मुडना होगा जहा आणविक हथियार न हो, निरस्त्रीकरण हो चुका हो और हमे ऐसे सभी नये खतरो से अपना बचाव करना होगा जो हमे दुबारा हथियारो की होड़ मे घसीट ले सकते है। आणविक हथियारो से भी परे, हमे यह भी देखना होगा कि कही कोई ऐसा साधन तो नही पनप रहा जिससे सम्पूर्ण मानव जाति का विनाश हो सकता है। हम इस बात के प्रति भी सचेत रहे कि हथियारो की होड के साथ कही कोई और नई दिशाये तो नही जुड रही है [7]।"

श्री गॉधी ने एक भयकरतम आसन्न खतरे के प्रति आगाह करते हुए कहा था- "हमे यह भी देखना होगा कि कही उच्च्व स्तर के वे पारम्परिक हथियार तो विकसित नही हो रहे, जिन्हे अपने पाच महाद्वीपीय प्रयास मे सर्जिकल हथियारो की सज्ञा दी है। इस विधा का प्रयोग बडे प्रभावशाली ढग से, देशो के नेतृत्व को बिना कोई बडा नुकसान किये, समाप्त करने के लिए किया जाता है, ताकि घोर अव्यवस्था फैल जाय[8]।"

श्री गॉधी ने अतर्राष्ट्रीय सहयोग की दिशा मे नही व्यवस्था के महत्व की आवश्यकता पर जोर देते हुए कहा - "अब समय आ गया है कि हमे सोचना पडेगा कि हम किस तरह इन बातो पर नियत्रण पाकर सही रास्ता अपना सके। अन्तर्राष्ट्रीय सहयोग के एक नये ढाचे की आवश्यकता है। एक ऐसी वास्तविक प्रभावशाली एव पुर्नगठित सयुक्त राष्ट्र सघ व्यवस्था की आवश्यकता है जिसमे अन्तर्राष्ट्रीय लोकतत्र और सार्वभौमिक समानता को मान्यता प्राप्त हो। एक ऐसे अन्तर्राष्ट्रीय सहयोग की आवश्यकता है जो यह मानकर चले कि सम्पूर्ण मानव जाति एक परिवार के समान है, जहॉ सबके हित आपस मे इतने जुडे हुए हो कि एक हिस्से मे हो रही वृद्धि एव विकास दूसरे हिस्से मे स्थिरता लाये। एक ऐसी विश्व व्यवस्था की जरूरत है, जो गॉधी जी और नेहरू जी की अन्तदृष्टि एव मूल्यो पर आधारित हो[9] ।"

जवाहर लाल नेहरू और इन्दिरा गाधी द्वारा अपनायी गयी विदेश नीति के सिद्धान्तो और मूल दृष्टिकोणो के प्रति अपनी वचनबद्धता को दोहराते हुए राजीव गॉधी ने कहा था - "शान्ति के लिए कार्य करने मे हमारा सदैव विश्वास रहा है। हमारी नीति आपसी आदान- प्रदान तथा परस्पर लाभ के आधार पर सभी देशो के साथ मित्रता बनाये रखने की है। न्याय समानता तथा आपसी सहयोग पर आधारित नई आर्थिक व्यवस्था और गुटनिरपेक्षता के प्रति हमारी बचनबद्धता अडिग है। इसका तात्पर्य है कि- शान्ति तथा विकास के

दो देशो के प्रति घोर निष्ठा। हम राष्ट्रो की स्वतत्रता की रक्षा करने और एक दूसरे के मामलो मे दखलन्दाजी न करने और अहस्तक्षेप के सिद्धान्तो मे विश्वास करते है[10] । "

श्री राजीव गाधी की विदेश नीति विषयक विचारो का और खुलासा ससद मे उनके द्वारा दिये गये वक्तव्य से हो जाता है -

"भारत की विदेश नीति पिछले ३७ वर्षो से कसौटी पर कसी और जाची जा चुकी है। इन ३७ वर्षो के दौरान न केवल भारत अपितु समूचे विश्व भर मे यह माना गया है कि हमारी विदेश नीति अत्यन्त सशक्त और सार्थक है। भारत मे जब सत्ता परिवर्तन हुआ था उस समय भी उन लोगो के लिए हमारी विदेश नीति मे परिवर्तन कर पाना सभव नही हो पाया था। इसका कारण यह था कि हमारी विदेश नीति देश की जरूरतो के अनुरूप तैयार की गई थी । "

किसी देश की विदेश नीति की सफलता या विफलता इस बात पर निर्भर करती है कि उस देश का विश्व स्तर के सगठनो मे कितना सम्मान है और ससार के अन्य देशो मे उसका कितना मान है। आज किसी देश को इसमे सन्देह नही हो सकता कि भारत विदेश नीति मे न केवल भारत को नेतृत्व प्रदान किया है अपितु १०० से अधिक गुटनिरपेक्ष राष्ट्रो का पथप्रदर्शन भी किया है।

हमारी विदेश नीति का एक महत्वपूर्ण आधार स्तम्भ विश्व शान्ति है। शान्ति का मार्ग गाधी जी के अहिसा से प्रशस्त होता है जो कि एक व्यापक अर्थात विश्व स्तरीय अवधारणा है। काग्रेस

गाधीवादी नीति का अनुगमन करती रही है और आज का भारत भी इसी का अनुपालन कर रहा है। इस प्रकिया मे सहायता पहुचाने के लिए हमने जो कदम उठाये है दिल्ली मे होने वाला छ राष्ट्रो का सम्मेलन उनमे से एक कदम था। दिल्ली घोषणा इसी सम्मेलन की देन थी। जिसको ससार भर मे व्यापक रूप से स्वीकार किया गया था। परमाणु हथियारो वाले देशो के लोग भी इस घोषणा पत्र से प्रभावित हुए। इसने बडे बड़े शक्तिशाली जनमत को बदला है और उसे प्रभावित किया है ।

गत दो या तीन वर्षो के दौरान विश्व मे विशेषकर अन्तर्राष्ट्रीय सम्बन्धो मे बडी तेजी से परिवर्तन हुआ है। नये दृष्टिकोणो का विकास हो रहा है और नये-नये विचार उभरकर सामने आ रहे है तथा इसके परिणामस्वरूप विश्व के सभी देशो के लिए चुनौतिया पैदा होना स्वाभाविक है । विशेषकर भारत जैसे देश के लिए, जो अन्तर्राष्ट्रीय मामलो मे एक महत्वपूर्ण भूमिका निभाता है। ऐसी स्थिति मे, किसी को भी अतीत के दलदल मे नही फसा रहना चाहिए अपितु लचीला मार्ग अपनाना चाहिए। किन्तु इसके साथ-साथ हमे अपने उन मूल सिद्धान्तो को नही छोडना चाहिए, जिनपर हमारी विदेश नीति आधारित है[11]।

राजीव गाधी की विदेश नीति के बारे मे श्री के आर नारायण के विचार महत्वपूर्ण है । राजीव गाधी के ३ जनवरी १९८५ को, भारत के प्रधानमन्त्री के रूप मे कार्यभार ग्रहण करने के तुरत

पश्चात उन्होने कहा था- "देश की बागडोर नई पीढी के हाथ मे आ गई है । साठ प्रतिशत मतदाता चालीस वर्ष से कम आयु के है । उन्हे इस बात की भी जानकारी थी कि विश्व मे नयापन आ गया है यह भी कि इसमे बुनियादी परिवर्तन आ गया है और यह तेजी से बदलता जा रहा है । किन्तु शीघ्र ही उन्हे इस बात का पता चल गया कि इन महत्वपूर्ण परिवर्तन मे से अधिकाश अनिवार्यत भारत की विदेश नीति के नियामक पडित जवाहर लाल नेहरू के दृष्टिकोण के अनुरूप थे जिन्होने इसकी कल्पना की थी तथा इसे मूर्तरूप देने को प्रयास किया था । " इसलिये उन्होने आगे कहा था- "उन्ही सिद्धान्तो को पुन उपयोग मे लाना आवश्यक है । इसलिये नये सिरे से विचार करने की आवश्यक्ता है । इस प्रकार राजीव गाधी की विदेश नीति परिवर्तन के साथ निरतरता का अथवा निरतरता मे मौलिकता का अक अच्छा उदाहरण प्रस्तुत करता है । उन्होने नये दृष्टिकोण से भाषा मे नवीनता के साथ तथा गतिशीलता की भावना के साथ जवाहर लाल नेहरू के मूल दृष्टिकोण तथा नीतियो का अनुसरण किया तथा विश्व मे उभर रहे शीत युद्ध रहित एक नये विश्व का निर्माण करने के लिये जागरूक रहकर प्रयास किया, एक नये विश्व का सपना देखा और उसके लिये कार्य किया, किन्तु इसे वे प्राप्त नही कर सके या वास्तिवक रूप मे परिणित नही कर सके[12] । "

राजीव गाधी को अपने पूर्ववर्ती प्रधान मत्रियो की तरह पता था कि भारत का आर्थिक दृष्टि से निर्माण तथा इसकी रक्षा वैज्ञानिक और प्रौद्योगिकीय क्षमताओ का इस विशाल और जटिल देश की राजनीतिक और मनोवैज्ञानिक एकता के आधार पर विकास विश्व मच पर किसी सार्थक भूमिका को निभाने के लिये एक अपरिहार्य शर्त है। इसलिये वे देश को आर्थिक रूप से निर्भर बनाने तथा इसे २१वी सदी मे ले जाने के बारेमे निरन्तर बात करते थे। परन्तु उन्हे ज्ञात था जैसा कि उन्होने अपने प्रथम भाषण मे १२ नवम्बर १९८४ को कहा था- "राष्ट्र निर्माण की सबसे पहली पूर्वापेक्षा शाति है पडोसी देशो के साथ शाति तथा विश्व मे शाति। अपने सक्षिप्त परन्तु बेहतरीन राजनैतिक जीवन मे उनके लिए शाति एक मुख्य मुद्दा था जिसे उन्होने उत्साह और उद्देश्यपूर्ण कार्यवाही करके स्थापित करने की कोशिश की थी।"

प्रधान मत्री के तौर पर उनका पहला अर्न्तराष्ट्रीय सम्मेलन नई दिल्ली मे छ राष्ट्रो के पाच महाद्वीपो का शिखर सम्मेलन था जिसे उनकी माता इदिरा गाधी द्वारा शुरु किया गया था। राजीव ने कहा था कि यह सम्मेलन इतिहास के निराशपूर्ण मोड पर हो रहा है। इस दिल्ली शिखर सम्मेलन मे एक घोषणा जारी की गयी थी। इस घोषणा मे परमाणु शस्त्रो के उत्पादन और विकास पर रोक लगाने का अनुरोध किया गया था जो कि परमाणु शस्त्रो को पूर्णतया समाप्त करने के उद्देश्य को पूरा करने की तरफ पहला

एशिया महाद्वीप मे ब्रिटिश उपनिवेशवाद की समाप्ति के साथ एक नये सघर्ष की शुरूआत हुई जिसके परिणामस्वरूप इस क्षेत्र से शान्ति शब्द का लोप ही हो गया यह सघर्ष है दो पडोसी देशो का सघर्ष जिसे भारत पाक सघर्ष के नाम से जाना जाता है। भारत विभाजन के समय की घृणा और अविश्वास ने दोनो ही देशो को आज तक युद्ध की तैयारी मे लगाये रखा। प्रारम्भ से ही दोनो देशो की सेनाए एक दूसरे के आमने सामने न केवल तैनात रही अपितु तीन बडे युद्ध हुए और एक छोटी सी चिनगारी से किसी भी दिन चौथा युद्ध शुरू हो जाये तो आश्चर्य नही। पाकिस्तान की दुराग्रहपूर्ण विदेश नीति पर प्रकाश डालते हुए श्री राजीव गाधी मे कहा था- "पाकिस्तान के विदेश नीति का आधार भारत विरोध रहा है। पाकिस्तान का निर्माण मुस्लिम लीग की हिन्दुओ के प्रति घृणा की नीति का फल है इसलिए पाकिस्तान के शासको के लिए यह आवश्यक हो गया कि वे भारत विरोध की नीति अपनाए क्योकि यदि वे ऐसा नही करते रहे तो उसके जन्म का आधार नष्ट हो जाता है। कश्मीर का प्रश्न इस नीति की प्रमुख अभिव्यक्ति है कश्मीर को प्राप्त करने के लिए कभी अमेरिका और ब्रिटेन का पिछलग्गू बने रहने की नीति तो कभी चीन की चापलूसी यही सकेत देती है कि पाकिस्तान का भारत विरोध हमेशा बना रहेगा।"

जनवरी १९८८ मे स्टाकहोम मे जब छ राष्ट्रो की पुन वैठक हुई थी तो महाशक्तियो को सामरिक महत्व के अपने हथियारो मे १९८८ के पहले छ माह के दौरान ५० प्रतिशत की कटौती करने का सुझाव दिया गया था तथा सयुक्त राष्ट्र व्यवस्था के अर्न्तगत एक समेकित बहुउद्देशीय जाच व्यवस्था करने का भी सुझाव दिया गया था । शिखर सम्मेलन ने परम्परागत हथियारो मे भी भारी कटौती करने का सुझाव दिया था यह महत्वपूर्ण बात है कि बाद मे महाशक्तियो के बीच किये गये निरस्त्रीकरण समझौते राजीव गाधी तथा उनके अन्य पाच सहयोगी देशो द्वारा छ राष्ट्रो के शिखर सम्मेलन मे रखे गये प्रस्तावो के आधार पर ही किये गये। इस बारे मे नवम्बर १९८८ के शुरू मे राजीव गाधी और मिखाइल गोर्बाचोब द्वारा जारी की गयी 'दिल्ली घोषणा' याद करने योग्य है जिसके माध्यम से निरस्त्रीकरण प्रयासो को एक नये सैद्धान्तिक एव व्यावहारिक आयाम दिये गये। इसके माध्यम से राजीव के अनुसार भारतीय ससद परमाणु शस्त्र मुक्त और शातिप्रिय विश्व की स्थापना की दिशा मे आम कल्पना को साकार करने के कार्य मे सम्मिलित हो गयी । गाधी जी के शाति प्रिय विश्व सिद्धान्त को पहली बार एक महत्वपूर्ण अन्तर्राष्ट्रीय दस्तावेज मे स्थान मिला। राजीव ने दावा किया था कि गाधी जी और लेनिन के आदर्श दिल्ली घोषणा मे समाहित हुए है और विश्व समुदाय द्वारा इसकी आम स्वीकृति हेतु उन्होने इसकी सस्तुति की।

राजीव गाधी के निरस्त्रीकरण के प्रयास उस वक्त उच्चतम सीमा पर पहुच गए जब उन्होने सयुक्त राष्ट्र सघ के विशेष सत्र मे परमाणु शस्त्रो को २० वर्षो के अदर पूरी तरह से समाप्त करने सबधी निरस्त्रीकरण कार्यकारी योजना प्रस्तुत की थी। यह अभी भी शायद कुछ सशोधनो के साथ भारत की परमाणु शस्त्र निरस्त्रीकरण नीति का मुख्य अवलम्ब है और शायद इस विषय पर अब तक की प्रस्तुत सबसे अधिक विस्तृत और वास्तविक योजना है। उन्होने कहा कि हमारा प्रस्ताव है कि प्रथम चरण मे १९९५ मे समाप्त होने वाली परमाणु अस्त्र वाले राष्ट्रो को सन २०१० तक सभी परमाणु शस्त्रो को कम करने और सभी ऐसे राष्ट्रो जिनके पास परमाणु अस्त्र नही है परमाणु अस्त्रो की देहरी पार न करने देने हेतु किए गए वायदो को कानूनी स्वरूप देगा, इस सूत्र से विश्व परमाणु शस्त्र निरस्त्रीकरण की आवश्यकता तथा आज भारत द्वारा अनुभव की जा रही निरस्त्रीकरण की कुछ समस्याओ की कमी पूरी हो जाती है।

राजीव गाधी ने सयुक्त राष्ट्र सघ मे भारत की स्थिति स्पष्ट करते हुए कहा था कि, हम इस तर्क को स्वीकार नही कर सकते है कि कुछ राष्ट्रो को मानव जाति के अस्तित्व पर प्रश्न चिन्ह लगाते हुए अपने सुरक्षोपाय करने का अधिकार है न ही ये स्वीकार्य है कि जिनके पास परमाणु शस्त्र है वे सभी नियत्रणो से परे है जबकि वे राष्ट्र जिनके पास परमाणु शस्त्र नही है, उनकी इस बात के लिए जाच की जाती है कि वे इन शस्त्रो का उत्पादन न करे।

शाति और निरस्त्रीकरण भारत द्वारा स्वतत्रता के बाद से ही अपनाई गई गुट निरपेक्ष नीति के केन्द्रीय उदेदेश्यो मे से एक था। शस्त्र युद्ध के बाद विश्व मे नई नीति की प्रासगिकता को राजीव जी ने समझा था और नेहरू जी की गुटनिरपेक्षता और शातिपूर्ण सह-अस्तित्व के सन्दर्भ मे उन्होने उस नीति के पालन और उसमे नई वास्तविकताओ के आधार पर परिवर्तित और परिवर्तनशील विश्व के अनुरूप रचनात्मक सशोधन किए। हरारे मे और उसके बाद बेलग्रेड मे गुट निरपेक्ष आन्दोलन को इस बात की आवश्यकता महसूस हुई कि सुस्थापित नीति के मूल उददेश्यो का अनुसरण किया जाय और साथ ही नए विश्व की नई वास्तविकताओ का दृढतापूर्वक सामना किया जाए। हरारे और बैलग्रेड दोनो मे ही राजीव ने वहा हुई चर्चाओ मे प्रमुख रूप से अपना योगदान दिया। बेलग्रेड मे हुए सम्मेलन मे राजीव ने उसके परम्परागत उद्देश्यो को ऐसा नया रूप दिया कि सतत परिवर्तनशील मानवजाति के भविष्य की समस्याओ के अनुरूप हो जाये। विश्व स्तर पर हो रही गतिविधियो के सदर्भ मे एक नैतिक शक्ति के रूप मे उन्होने तटस्थता की भूमिका पर बल दिया जिसका सीधा प्रहार नामीबिया की आजादी पर पड़ने वाला था और जिससे उपनिवेशवाद एव नस्लवाद के रूप मे रगभेद के समाप्त होने की सभावना थी और साथ ही उन्होने गुट-निरपेक्षता को शासन करने और प्रभुत्व की खोज की । उस नीति की प्रतिशक्ति के रूप मे प्रस्तुत किया जो अभी तक अतर्राष्ट्रीय राजनीति मे व्याप्त थी। **'पृथ्वी**

सरक्षण कोष' का विशिष्ट प्रस्ताव देकर उन्होने पर्यावरणीय समस्याओ पर विशेष बल देने का प्रस्ताव दिया और इस प्रकार उन्होने तटस्थता के सन्दर्भ मे एक नई सकल्पना दी जिसका पृथ्वी और मानव जाति के भविष्य पर महत्वपूर्ण प्रभाव पडेगा ।

राजीव गाधी ने रगभेद की नीति के विरूद्ध जो सघर्ष किया उसका उल्लेख अवश्य किया जाना चाहिए। राष्ट्र मण्डल सम्मेलनो मे उन्होने दक्षिण अफ्रीका के विरूद्ध लगे प्रतिबधो को जारी रखने की वकालत की। मार्गरेट थैचर जैसे उग्र व्यक्तित्व के साथ बातचीत करते समय उन्होने जो वाक्चातुर्य और कूटनीतिक कौशल दिखाया उससे उनकी प्रतिष्ठा और अधिक बढ गयी। नसाऊ और लन्दन दोनो ही स्थानो पर हुए सम्मेलनो मे लौह महिला मार्गरेट थैचर अलग-थलग पड गई। किन्तु उन्होने अपने आकर्षण और राजनीतिक दक्षता के द्वारा श्रीमती थैचर का सम्मान और सदभाव अक्षुण्ण बनाए रखा। उन्होने रगभेद पर इस महत्वपूर्ण चरण मे निर्णयात्मक भूमिका निभाई। रगभेद, उपनिवेशवाद और जातिभेद के विरूद्ध सघर्ष मे जिस अफ्रीका कोष का प्रस्ताव राजीव गाधी ने किया वह दूसरा महत्वपूर्ण प्रस्ताव था । नामीबिया के सबध मे राजीव गाधी की भूमिका इतनी महत्वपूर्ण थी कि नामीबिया सरकार ने अपने स्वतत्रता समारोह मे उन्हे उस समय विशेष अतिथि के रूप मे आमन्त्रित किया जबकि वे विपक्ष के नेता मात्र थे ।

राजीव गाधी की विदेश नीति विश्व के व्यापक कार्यकलापो के

बारे मे पहले से ही नही बनायी गयी थी बल्कि पडोसी देशो की कठिन और दुरूह समस्याओ को लेकर भी बनायी गयी थी। दक्षिण एशिया मे मूल सिद्धान्तो और राष्ट्रीय हितो के साथ समझौता किये बिना ही उन्होने मेल-मिलाप मैत्री और सहयोग के लिए प्रयास किया। उन्होने दक्षेस सगठन को नयी प्रेरण दी। उन्होने जिया उल हक और बेनजीर भूटटो दोनो के साथ न केवल सरकारी किन्तु व्यक्तिगत सम्बन्ध भी स्थापित किये। एक दूसरे के परमाणु प्रतिष्ठानो पर आक्रमण न करने सबधी पाकिस्तान के साथ किया गया समझौता विश्वास पैदा करने वाला प्रमुख उपाय था और परमाणु प्रश्न के निपटारे की सभावनाये दोनो पडोसियो के बीच सबध बिगडने का कारण इसमे अन्तग्रस्त था। राजीव गाधी की चीन यात्रा कुल मिलाकर एक ऐतिहासिक कदम था जिससे एशिया के दो महान देशो के बीच लम्बे समय से बिगडे सबधो मे सुधार आया। उसी ऐतिहासिक यात्रा के आधार पर आज चीन के साथ भावी सबध बनाये जा रहे है। श्रीलका के सबध मे दुर्भाग्य पूर्ण कार्यो के होते हुए भी, श्रीलका मे तमिलो को कोई बडी स्वायत्ता मिल सकने मे शका है और श्री राजीव गाधी जयवर्धने समझौते मे उसकी एकता और अखण्डता मे अधिक विश्वसनीय गारन्टी है।

महाशक्तियो के साथ व्यवहार मे राजीव ने अन्तर्राष्ट्रीय सबधो के प्रति गहरी समझबूझ दिखायी। वह समझते थे कि शीत युद्ध के समाप्त होने से भारत को अमेरिका और पूर्व सोवियत सघ के साथ

निकट और सार्थक सम्बघ स्थापित करने के अवसर प्राप्त होगे। उन्होने भारत के साहस तथा विश्वास और इसके हितो को ध्यान मे रखकर मित्रता की पेशकश की। इस सदर्भ मे बात उल्लेखनीय है कि भारत के युवा प्रधानमत्री ने सहज रूप से और समानता के स्तर पर राष्ट्रपति श्री रोनाल्ड रीगन और महासचिव श्री मिखाइल गोर्बाचोव से वार्ता की। उन्होने इन दोनो महाशक्तियो के साथ गहरे और व्यापक सबध स्थापित करने के लिए अमेरिका और भूतपूर्व सोवियत सघ के साथ अनेक समझौतो पर हस्ताक्षर किए। साथ ही उन्होने जापान, एशियाई देशो तथा यूरोपीय आर्थिक समुदाय के साथ निकट सबधो के महत्व की अवहेलना नही की। उन्होने भारत की परम्पराये - जो उन्हे विरासत मे मिली थी, और अन्तर्राष्ट्रीय स्थिति की वास्तविकता - जैसा कि उन्होने समझी था के अनुसार विश्व के प्रति अपना दृष्टिकोण बनाया।

विश्व के प्रति अपने दृष्टिकोण मे उन्होने भारत पर मुख्य रूप से ध्यान दिया भारत की राजनैतिक एकता को तथा इसकी आर्थिक प्रौद्योगिकीय और सैन्य दृष्टि से मजबूत कराने की आवश्यकता महसूस की जैसे कि जवाहर लाल नेहरू और इदिरा गाधी की विज्ञान और प्रौद्योगिकी पर केवल भारत के विकास के साधन रूप मे ही प्रमुख रूप से बल नही दिया बल्कि अपनी विदेश नीति और राजनयिकता के एक महत्वपूर्ण पहलू के रूप मे इसका प्रचार भी किया।

उन्होने अपनी विदेश नीति और कूटनीति मे महाशक्तियो के साथ तथा दक्षिण के विकासशील देशो मे वैज्ञानिक और प्रौद्योगिकीय सहयोग के उद्दश्यो को प्राथमिकता के रूप मे अपनाया। इस प्रकार "भारत के प्रधान मत्री के सक्षिप्त और उज्ज्वल काल के दौरान राजीव गाधी द्वारा प्रतिपादित विदेश नीति मे आदर्श और आराध्य सिद्धान्तो तथा तीक्ष्ण व्यवहार्य विषयवस्तु और प्रौद्योगिकीय तर्को का सही पुट था [13]। "

अब हम लेते है गुटनिरपेक्ष आदोलन, निरस्त्रीकरण तथा आर्थिक मामलो मे राजीव गाधी की भूमिका को अनेक राष्ट्रो की उपनिवेशवाद से मुक्ति होने पर भारत की गुटनिरपेक्ष नीति को बडे पैमाने पर स्वीकृति मिली। पहला गुटनिरपेक्ष सम्मेलन १९६१ मे बेलग्राद मे हुआ जिसमे २५ देशो ने भाग लिया था। बेलग्राद शाति घोषणा की काफी अधिक प्रतिक्रिया हुई। इस सम्मेलन मे गुटनिरपेक्ष देशो के बीच समय समय पर होने वाले विचारो के आदान-प्रदान और विचार-विमर्श की उपादेयता को सिद्ध कर दिया । इसके बाद अन्य और देश भी गुटनिरपेक्ष आदोलन मे सम्मिलित हुए है, और इसकी वर्तमान सख्या १०० तक पहुच गयी है। इसके अतिरिक्त कुछ दर्जन देश पर्यवेक्षक और अतिथि के रूप मे भी सम्बद्ध है। सदस्य सख्या मे वृद्धि होने के बावजूद इस आदोलन ने शाति, निरस्त्रीकरण, विकास और स्वतत्रता के पक्ष मे अपना मूल स्वर बनाए रखा है। कुछ मामूली मतभेदो के बावजूद गुटनिरपेक्ष राष्ट्रो के बीच एकता और आदोलन

को व्यापक समर्थन और स्वीकृति प्राप्त हुई है। गुटनिरपेक्ष आदोलन मे भारत की भूमिका का अनुमान इसी बात से लगाया जा सकता है कि मार्च १९८३ मे गुटनिरपेक्ष शिखर सम्मेलन का आयोजन नई दिल्ली मे किया गया और भारत को इसका अध्यक्ष चुना गया । सितम्बर १९८६ मे जिम्बाब्वे को गुटनिरपेक्ष आदोलन की अध्यक्षता सौप दिए जाने के बाद भी आदोलन मे भारत की भूमिका और गतिविधियो ने अपने लिए ऊचा स्थान रखा है। भारत ने गुटनिरपेक्ष आदोलन के भीतर के प्रमुख अतर्राष्ट्रीय मुद्दो पर जनमत बनाए रखने के अपने प्रयास जारी रखे और इसने अन्य गुट निरपेक्ष देशो के निकट सहयोग से कार्य किया। इसने कोनट्राडोरा प्रक्रिया के लिए आदोलन और ग्वाटेमाला सधि मे उल्लिखित क्षेत्रीय शाति की पहल के प्रति अपनी एकजुटता और समर्थन व्यक्त किया[14] । भारत ने आदोलन द्वारा विश्व के आर्थिक मुददो, विशेषकर गुटनिरपेक्ष और अन्य विकासशील देशो से सबधित मुददो के सबध मे सक्रिय भूमिका निभाने पर जोर दिया है ताकि बहुआयामी आर्थिक सहयोग के सबध मे उनकी स्थिति सुदृढ हो सके।

जहा तक निरस्त्रीकरण का सबध है भारत ने समय-समय पर परमाणु हथियारो का कडा विरोध किया और पूर्ण निरस्त्रीकरण का समर्थन किया है। भारत परमाणु ऊर्जा के शाति पूर्ण उपयोग के लिए भी पूरी तरह प्रतिबद्ध है लेकिन वह उन प्रयासो या उपायो का विरोध करता है जो परमाणु ऊर्जा के शातिपूर्ण उपयोग के बारे मे

भारत के कार्यक्रम के आडे आते है। भारत ने विशेष रूप से अमरीका और सोवियत सघ के बीच परमाणु हथियारो मे कमी करने के लिए जेनेवा वार्ता शुरू करने का स्वागत किया क्योकि निरस्त्रीकरण के लिए कारगर कदम उठाने की प्रमुख जिम्मेदारी परमाणु शक्तिओ की है । प्रधानमत्री राजीव गाधी ने न्यूयार्क मे सयुक्त राष्ट्र की स्थापना की ४०वी वर्षगॉठ के अवसर पर अधिवेशन को सम्बोधित करते हुए कहा था कि परमाणु सैनिकवाद के पागलपन से दुनिया को मुक्त करने की आवश्यकता है । मनुष्य को अपनी सृजन क्षमता का प्रयोग विनाश के लिए नही बल्कि सबर्धन के लिए करना चाहिए। उन्होने जनवरी १९८५ मे छह राष्ट्रो के शिखर सम्मेलन मे जारी दिल्ली घोषणा के उद्देश्यो को फिर दोहराया। इस शिखर सम्मेलन मे अर्जेन्टीना ग्रीस भारत मैक्सिको, स्वीडन और तजानिया के नेताओ ने सभी तरह के परमाणु परीक्षणो पर १२ महीने की रोक लगाने का अनुरोध किया था तथा इस बारे मे जॉच प्रक्रिया के लिए सुविधाओ का प्रस्ताव किया था। छह राष्ट्रो के इन नेताओं की बैठक मैक्सिको मे छह अगस्त १९८६ को फिर हुई । सभी तरह के परमाणु परीक्षणो पर रोक लगाने की आवश्यकता पर जोर देते हुए इन नेताओ ने परमाणु हथियार सम्पन्न महाशक्तियो से अनुरोध किया कि वे परमाणु परीक्षणो पर रोक लगाने और इसके लिए समुचित परमाणु प्रबध के लिए ठोस प्रस्ताव रखे[15] ।

सितम्बर १९८६ मे हरारे मे गुटनिरपेक्ष देशो के राष्ट्राध्यक्षो का

आठवॉ शिखर सम्मेलन हुआ जिसमे निरस्त्रीकरण के लिए गुटनिरपेक्ष आदोलन की वचनबद्धता को पुन दुहराया गया और दोनो महाशक्तियो से अनुरोध किया गया कि वे परमाणु युद्ध को छिडने से रोकने के लिए तुरन्त कारगर कदम उठाए । भारत ने तीन मुख्य बहुपक्षीय निरस्त्रीकरण मचो अर्थात- निरस्त्रीकरण सम्मेलन सयुक्त राष्ट्र निरस्त्रीकरण आयोग और सयुक्त राष्ट्र जनरल असेम्बली की पहली समिति मे प्रमुख भूमिका निभाई । ऐसा भारत की इस अडिग आस्था के अनुरूप किया गया कि इस आणविक युग मे निरस्त्रीकरण केवल शाति के लिए ही नही बल्कि मानव जाति के अस्तित्व के लिए भी आवश्यक है[16] । भारत ने बहुपक्षीय दबाव की वैधता पर यह दोहराते हुए जोर दिया कि परमाणविक निवारण के माध्यम एकपक्षीय सुरक्षा की खोज के स्थान पर परमाणु निरस्त्रीकरण के जरिए विश्व सुरक्षा की खोज की जाए।

परमाणविक और सामान्य निरस्त्रीकरण के जेहाद मे भारत ने छह-राष्ट्रीय पहल के पाच अन्य देशो के साथ २२ जनवरी १९८८ को सोवियत सघ और अमरीका के बीच आई एन एफ सधि का स्वागत किया और इसे ऐतिहासिक कदम बताया[17]। उनकी स्टाकहोम घोषणा मे वार्ता पुन आरम्भ होने का स्वागत किया गया और इनकी जाच तथा इस क्षेत्र मे समझौतो की माग की गई।

नौ जून १९८८ को निरस्त्रीकरण पर सयुक्त राष्ट्र महासभा के तीसरे विशेष सत्र को सम्बोधित करते हुए तत्कालीन प्रधानमन्त्री

राजीव गाधी ने सयुक्त राष्ट्र को एक कार्य योजना आरम्भ करने के लिए कहा था जिससे सभी मौजूदा परमाणु शक्तियो वाले देशो द्वारा २०१० ई तक विश्व के सभी परमाणविक हथियार समाप्त कर दिए जाए[18]। उन्होने प्रस्ताव किया कि यह कार्य योजना तीन चरणो मे परिचालित की जाए जिसके परिणामस्वरूप न केवल परमाणविक खतरे समाप्त हो सकेगे बल्कि एक नई सयुक्त राष्ट्र गहन विश्व सुरक्षा प्रणाली स्थापित होगी जिससे एक नया न्यायपूर्ण समाज और समरूपी विश्व नियम सुनिश्चित किया जा सकेगा[19]। प्रधानमन्त्री के विस्तृत प्रस्ताव मे शताब्दी के अत तक एक एकल बहुपक्षी सत्यापन प्रणाली की स्थापना की माग की गई ताकि यह सुनिश्चत किया जा सके कि विश्व मे कही भी नए परमाणविक हथियार नही बनाए जा रहे है। उन्होने राष्ट्रपति रीगन के प्रस्तावित विशेष प्रतिरक्षा पहल का उल्लेख करते हुए यह घोषणा की- परमाणविक दौड को ऐसी कार्रवाई के सबध मे विलम्बन सधि के बिना समाप्त नही किया जा सकता अथवा रोका नही जा सकता।

अब हम लेते है आर्थिक मामले और राजीव गाधी द्वारा उनको निबटाने के प्रयासो को हाल के वर्षो मे मामूली से विस्तार के साथ विश्व-अर्थव्यवस्था सकट के कगार पर है। उत्पादकता मे कमी इसी से स्पष्ट है कि उत्पादन की दर १९८५ मे ३ प्रतिशत से घटकर २ ८ प्रतिशत रह गई। व्यापार १९८६ मे चार प्रतिशत उत्पादकता पर ही चलता रहा, वस्तुओ के मूल्यो मे और कमी आई,

विकासशील देशो के नए ऋण घट गए और ऋण अदायगी और भी कठिन हो गई। हाल के आकडो से पता चलता है कि विकासशील देशो का कुल ऋण १९८६ के अत तक १ १ ट्रिलीयन अमरीकी डालर हो गया है।

विकासशील देशो को पूजी उपलब्धता मे जारी रूकावट के फलस्वरूप वित्तीय वर्ष १९८६ मे लगभग कुल ३००० करोड अमरीकी डालर मूल्य के ससाधनो का दक्षिण से उत्तर को शुद्ध अतरण हुआ। सरकारी विकास सहायता अतर्राष्ट्रीय रूप से सहमत स्तर ० ७ प्रतिशत के आधे से भी कम रही। कई विकासशील देशो की प्रति व्यक्ति आय मे कमी हुई और सामूहिक रूप से विकासशील देशो की सकल स्थानीय उत्पादन १९८५ मे ४ २ प्रतिशत से घटकर १९८६ मे ३ ६ प्रतिशत हो गई। सरक्षणवाद निरन्तर बढता ही रहा है। हालाकि सरकारो ने बार-बार घोषणाए और बहुपक्षीय व्यापार वार्ताए के नए दौर शुरू करने की सधिया की है। अमीर और गरीब देशो के बीच परस्पर निर्भरता को अब अधिक मान्यता मिल रही है और इसके बढने के प्रमाण भी है। तथापि , विकासित देशो के बीच परस्पर विकास धीमा हुआ है।

नई दिल्ली और हरारे मे हुए सातवे और आठवे गुटनिरपेक्ष शिखर सम्मेलनो मे बहुपक्षीय सहयोग के माध्यम से उत्पादकता और विकास के प्रति एक ठोस और व्यावहारिक दृष्टिकोण और विकास के प्रति बहुपेक्षावाद से खिचाव रोकने का प्रस्ताव किया गया था।

साथ ही इनमे नए अतर्राष्ट्रीय आर्थिक सहयोग की प्राप्ति के लिए दीर्घकालीन सरचनात्मक सुधारो का भी प्रस्ताव किया गया। मुद्रा, वित्त ऋण व्यापार प्रौद्योगिकी तथा विकास की अतर्राष्ट्रीय और अतर्सम्बधी प्रणालियो मे सुधार आवश्यक है। प्रमुख औद्योगिक देशो की मैक्रो-एकानामिक नीतियो के विश्व अर्थव्यवस्था मे माग मे वृद्धि करने तथा उत्पादकता को बढाने के उदेश्य से सामजस्य स्थापित करने और सहयोग करने की आवश्यकता है। अक्टूबर १९८७ के राष्ट्रमडल शिखर सम्मेलन मे विश्व व्यापार पर की गई घोषणा को अपनाया गया जिसमे यह उल्लेख किया गया कि नई बहुपक्षीय व्यापार वार्ताओ मे विकासशील देशो पर विशेष रूप से विचार किया जाए।

भारत ने विज्ञान एव प्रौद्योगिकी की नई खोजो को अनुकूल बनाने और विकसित करने की दक्षिण की क्षमताए बढाने मे सुविधा प्रदान करने के उदेश्य से नई दिल्ली मे हुए गुटनिरपेक्ष एव आगे होने वाले ग्रुप-७७ सम्मेलनो के माध्यम से पहल की है। भारत ने शाति को बढावा देने एव जीवन-स्तर बेहतर बनाने के लिए, विशेषकर विकासशील देशो के लिए इन वैज्ञानिक और प्रौद्योगिकीय विकास कार्यो के परिणामो का लाभ उठाने हेतु अतर्राष्ट्रीय स्तर पर बटवारो की नई प्रक्रिया आरम्भ करने के लिए सयुक्त राष्ट्र मे पहल की। विज्ञान और प्रौद्योगिकी के लिए सयुक्त राष्ट्र अतर्राष्ट्रीय समिति के अगस्त १९८७ मे हुए नार्वे सत्र मे भारतीय पहल पर आम सहमति

द्वारा एक प्रस्ताव पारित किया गया जिसमे अनुसधान, सूचना एव प्रशिक्षण प्रौद्यौगिकी, पूर्व सूचना और नए तथा अविषयगत विज्ञान एव प्रौद्योगिकी नेस्ट के आकलन के आपसी विकास और सहयोग के लिए कार्यकमो परियोजनाओ की माग की गई थी [20]।

सामूहिक आत्म निर्भरता और आर्थिक स्वतत्रता की प्राप्ति और विश्व अर्थव्यवस्था तथा एक नए अतर्राष्ट्रीय आर्थक सहयोग की स्थापना के प्रयासो के एक महत्वपूर्ण भाग के रूप मे अतर्राष्ट्रीय आर्थिक सबधो मे विकासशील देशो की भूमिका बढाने के लिए उनमे आपसी सहयोग गुटनिरपेक्ष आदोलन एव ग्रुप-७७ का एक प्रमुख उदेश्य बन गया है। विकास कार्यो के लिए दक्षिण के एक स्वतत्र आयोग की स्थापना से महत्वपूर्ण आर्थिक विषयो पर लाभदायी निवेश प्राप्त हो सकता है। इस आयोग ने दो से पाच अक्टूबर १९८७ तक अपनी पहली बैठक मे औपचारिक रूप से अपना कार्यारम्भ कर दिया है[21]।

विकासशील देशो के आपसी सहयोग से सबधित सभी मुददो और प्रतिविधियो की समीक्षा करने के लिए जून १९८७ मे गुटनिरपेक्ष मत्रियो की बैठक प्यागयोग मे हुई। बैठक के परिणामो के महत्वपूर्ण पहलुओ मे प्रमुख नई दिल्ली मे गुटनिरपेक्ष विज्ञान और प्रौद्योगिकी केन्द्र आरम्भ किए जाने का निर्णय और भारत द्वारा नई एव उच्च वैज्ञानिक तथा प्रौद्योगिकी के लिए की गई पहल का सत्यापन और उसका स्वागत।

४ प्रत्येक राज्य एक दूसरे के साथ समानता का व्यवहार करे तथा पारस्परिक हित मे सहयोग प्रदान करे अर्थात न कोई देश बडा है और न ही छोटा ।

५ सभी राष्ट्र शान्तिपूर्ण सह-अस्तित्व के सिद्धान्त मे विश्वास करें तथा इसी सिद्धान्त के आधार पर एक-दूसरे के साथ शान्तिपूर्वक रहे और अपनी पृथक सत्ता एव स्वतन्त्रता बनाये रखे ।

कुछ विद्वानो का मानना है कि पचशील योजना नेहरू जी की आदर्शवादी रूमानियत का उदाहरण भर थी और कुछ नही । परन्तु वास्तविकता की अनदेखी नही की जानी चाहिए कि पचशील की राजनयिक रणनीति भारतीय राष्ट्रीय हितो की यथार्थवादी कसौटी पर खरी उतरती है। भारत का विभाजन आजादी के साथ हो गया और पाकिस्तानी रजाकारो ने कश्मीर को हथियाने के लालच मे भारतीय सीमा का अतिक्रमण किया । यह अघोषित युद्ध लगभग दो वर्ष तक चलता रहा । १९४७ मे सारा भारतीय भू-भाग एक साथ स्वतत्र नही हुआ । रजवाडो की स्थिति सदिग्ध थी और गोवा, दमन दीव चन्द्रनगर व पाण्डिचेरी जैसे इलाके अग्रजो से इतर दूसरी औपनिवेशिक शक्तियो के आधिपत्य मे थे।

इसके शीघ्र बाद एक और महत्वपूर्ण परिवर्तन हुआ । १९४९ मे चीन मे साम्यवादियो ने सरकार का गठन किया और १९५० मे तिब्बत को मुक्त कराने का प्रयास शुरू किया । इसके साथ ही ब्रिटिश साम्राज्यवादी शासन काल मे सीमाकित किया गया सारा

हिमालयी भू-भाग सीमान्त विवादास्पद बन गया[19] । ऐसी परिस्थित मे यदि नेहरू जी ने नवोदित राष्ट्रों की सम्प्रभुता की रक्षा भौगोलिक सीमाओ के सम्मान और आन्तरिक मामलो मे हस्तक्षेप से बचने के पक्ष मे अन्तर्राष्ट्रीय जनमत तैयार करने की चेष्टा की तो इसे आदर्शवादी कतई नही समझा जा सकता । समस्याओ के शान्तिपूर्ण समाधान की प्रस्तावना के बिना सह-अस्तित्व की बात सोची भी नही जा सकती थी । पचशील योजना मे यह बात अन्तर्निहित थी की इसका अभिगम सिर्फ प्रतिरक्षात्मक नही बल्कि रचनात्मक भी है । पचशील समझौते मे साझीदार पक्षो के लिए लाभप्रद उभयपक्षीय सहकार के लक्ष्य तय करना नेहरू जी की दूरदर्शिता थी ।

पचशील के बारे मे विदेशी और भारतीय विद्वानो के मत स्पष्टत दो ध्रुवो के बीच झूलते है । कुछ विद्वानो का मानना है कि पचशील की बात उठाना नेहरू जी की दुर्बलताजनित विवशता थी । सैनिक शक्ति और आर्थिक ससाधनो के अभाव मे वह और कुछ कर भी नही सकते थे। जयन्तनुज वन्द्योपाध्याय जैसे कुछेक विद्वान अपवाद है, जो मानते है कि नेहरू जी ने जान बूझकर यह जोखिमभरा कदम उठाया, ताकि अन्तर्राष्ट्रीय राजनीति को नई दिशा दी जा सके [20]। दूसरी ओर लोर्न काविक और नेविल मैक्सवेल सरीखे लेखक है जिनकी समझ मे पचशील एक धूर्ततापूर्ण पाखण्ड था, जिसका एकमात्र उद्देश्य भारत को सैनिक दृष्टि से शक्तिशाली बनाने के जिए कुछ मोहलत जुटाना था । वैसे इन दोनो बातो मे

कोई बुनियादी अन्तरविरोध नही है । आर्थिक और सैनिक उपकरणो के अभाव मे यदि बाडुग सम्मेलन १९५५ के अवसर पर नेहरू जी ने भारत को अदभूत प्रतिष्ठा दिला दी थी तो उसके आधार मे पचशील की सफलता ही थी ।

बाडुग सम्मेलन के बारे मे मजेदार बात यह है कि अफ्रो-एशियाई देशो के इस जमघट का आयोजन भारत के सुझाव पर नही किया गया था । कोलम्बो परियोजना मे शामिल पश्चिमी खेमे के पक्षधर राष्ट्रो ने इसकी पहल की परन्तु नेहरू जी और कृष्णा मेनन ने समझदारी दिखाते हुए इसे नवोदित राष्ट्रो की स्वाधीनता और गुट-निरपेक्षता का प्रतीक बना दिया[21] । आज कई दशक बाद बाडुग सम्मेलन की सीमाओ और असफलताओ का छिद्रान्वेषण सहज है । परन्तु नेहरू जी ने शीत युद्ध के सकटो से जूझते हुए जिस तरह सैनिक गठबन्धनो को निरस्त करने का प्रयास किया वह प्रशसनीय था । ऐसा सोचना ठीक नही कि नेहरू जी ने सिर्फ शब्दाडम्बर या वक्तृता से तीसरी दुनिया का नेतृत्व हथियाने के लिए किया । बाडुग सम्मेलन के आयोजन के पहले कोरिया मे अपनी निष्पक्ष मध्यस्थता और हिन्द - चीन मे युद्ध विराम के लिए सक्रियता से भारत ने अपनी पात्रता प्रमाणित कर दी थी । नासिर सुकार्णो आदि के साथ व्यक्तिगत स्तर पर सार्थक सवाद का सूत्रपात भी बाडुग सम्मेलन से ही सम्भव हुआ [22]।

बाङुग सम्मेलन का एक और दृष्टि से अन्तर्राष्ट्रीय महत्व है। इस सम्मेलन मे हिस्सेदारी के बाद ही चीन की साम्यवादी सरकार का मानवीय पक्ष अन्य देशो के सामने आया और उसको वाछित स्वीकृति मिल सकी। इस सम्मेलन मे अपनाये गये प्रस्तावो का अध्ययन करने पर यह बात स्पष्ट होती है कि पचशील समझौते की ही तरह इस बार भी नेहरू जी ने आदर्श ओर यथार्थ का सन्तुलन बैठाने की कोशिश्र की थी[23]। उनका प्रमुख प्रयत्न यही कि अधिकाधिक अफ्रो-एशियाई देशो को ब्रिटिश ससदीय प्रणाली से प्रेरित सभा-सम्मेलनीय राजनय मे शामिल किया जा सके ताकि भविष्य मे उठने वाले विवादो के शान्तिपूर्ण समाधान की सम्भावना बची रहे। बाङुग सम्मेलन की उपलब्धि सही थी कि दोनो महाशक्तियो को यह बात स्पष्टत समझायी जा सकी कि अफ्रो-एशियाई देशो का उनसे कोई जन्मजात बैर सैद्धान्तिक विचारधारा या नस्ल के आधार पर नही है। पाकिस्तान और सीलोन (अब श्रीलका) के साथ भारतीय प्रतिनिधियो की नोक-झोक भले ही होती रही, परन्तु बाङुग मे ही उस अफ्रो-एशियाई गुट का गठन हुआ जिसने सयुक्त राष्ट्र सघ मे इनकी हस्ती को महत्वपूर्ण बनाया। बाङुग भावना के बिना गुट-निरपेक्ष आन्दोलन का बेगवान बनना कठिन होता[24]।

परन्तु इससे यह समझना उचित नही कि नेहरू जी की विदेश-नीति तर्क सगत और दूरदर्शी होने के कारण सभी प्रकार

की दुर्बलताओ से मुक्त थी । नेहरू जी सदैव इस बात को अनदेखा करते रहे कि अधिकतर अफ्रो-एशियाई नेताओ का स्वभाव और सस्कार उससे भिन्न है और यह जरूरी नही कि वे हमेशा बदली परिस्थिति मे अन्तर्राष्ट्रीय राज्य विषयक उनकी सभी स्थापनाओ को लाभप्रद उपयोगी उपदेश के रूप मे ग्रहण करते रहे । बाडुग सम्मेलन के सस्मरण लिखते वक्त नासिर और चाऊ एन लाई दोनो ने यह स्वीकार किया है कि नेहरू जी हमेशा इस तरह आचरण करते थे जैसे वह उनके भाई या पथ प्रदर्शक हो । दोनो नेताओ को यह बात अपमानजनक लगती रही थी [25] । इस बात से इनकार नही किया जा सकता कि नेहरू जी की विदेश नीति और राजनय व्यक्ति-केन्द्रित थे और व्यक्तिगत समीकरण बदलने पर विदेश नीति और राजनय बहुत सीमित प्रभाव वाले रह जाते थे । बेलग्रेड्ड सम्मेलन मे सुकार्णो और नेहरू जी के बीच टकराव के बाद पुरानी स्थिति कभी लौटाई नही जा सकी ।

नेहरू जी की एक और कमजोरी थी। वह अपनी पसन्द-नापसन्द को छिपा कर नही रख सकते थे ।उनकी आस्था समाजवादी जनतत्र मे थी । वह राजशाही सामन्त वाद तथा सैनिक शासन को प्रति क्रिया वादी समझते थे । नेपाल तथा पाकिस्तान के साथ उनका व्यवहार इसी कारण कभी सहज नही हो सका । श्रीलका के प्रधानमत्री जोन कोटनेवाला ने यह एक बार सटीक टिप्पणी की थी कि भारत जैसा बडा राष्ट्र गुट-निरपेक्षता की

विलासिता भोग सकता है परन्तु छोटे राष्ट्रो के सामने यह सुविधापूर्ण मार्ग उपलब्ध नही । आचारण मे व्यावहारिक होने के बावजूद घोषणाओ के स्तर पर सैद्धान्तिक शुद्धि का दुराग्रह नेहरू जी की विश्वसनीयता और भारतीय विदेश नीति का प्रभाव कम करता रहा[5] । समस्याओ के शान्तिपूर्ण निपटारे की बात करते वक्त नेहरू जी कश्मीर मे जनमत सग्रह के अपने आश्वासन के निरन्तर टालते रहने के लिये बाध्य हुये ।वह गोवा की मुक्ति के लिये बल-प्रयोग के बाद कथनी और करनी मे दोहरे मानदण्डो के लिये भी बाध्य हुये । इसी तरह भारत चीन सम्बधो की गलतफहमी एक बडी सीमा तक इस बात से पैदा हुई कि जहॉ नेहरू जी एक ओर स्वय को स्वतत्र भारत के प्रगतिशील प्रधानमत्री के रूप मे पेश करते थे,वही देश की भौगोलिक सीमा के बारे मे औपनिवेशिक उत्तराधिकार को अक्षत रखने के लिये वह बचनबद्ध थे । नेहरूकालीन भारतीय विदेश-नीति की सबसे बडी विशेषता यही पुरानी और नयी परम्परा तथा अन्तर्द्वन्द्व थी । महाशक्तियो और पडोसियो के साथ १९४७ से १९६४ तक भारत के राजनयिक सबधो के उतार चढाव मे इसका तनाव स्पष्ट प्रतिबिम्बित होता है ।

अब हम आते है शास्त्रीकालीन विदेश नीति पर । १९६४ मे नेहरू जी की मृत्यु के बाद लाल बहादुर शास्त्री ने देश की बागडोर सॅभाली । शास्त्री जी का व्यक्तित्व अपने पूर्ववर्ती प्रधानमत्री नेहरू जी से इतना भिन्न था कि कई लोगो के मन मे यह शक पैदा होना

स्वाभाविक था कि विदेश-नीति नियोजन और निर्धारण के मामले मे शास्त्री जी असमर्थ रहेगे। न तो उनकी शिक्षा-दीक्षा विदेश मे हुई थी और न ही प्रधानमत्री बनने के पहले उन्होने अन्तर्राष्ट्रीय मामलो मे कोई विशेष रूचि दर्शायी थी। इसी कारण जब शास्त्रीकालीन भारतीय विदेश नीति का विश्लेषण किया जाता है तो नेहरू युगीन विदेश नीति के साथ उसका फर्क दर्शाने का लोभ सवरण् कम ही लोग कर पाते है[26] । शास्त्रीकालीन विदेश नीति के सदर्भ मे अक्सर यह कहा जाता है कि उन्होने निरर्थक आदर्शवाद को सार्थक यथार्थवाद से विस्थापित किया और शान्ति प्रेमी होने के वावजूद राष्ट्र-हित के सरक्षण-सवर्धन के लिए सैनिक उपकरणो की उपयोगिता को स्वीकार किया । उनके कार्य काल का विशेष अध्ययन करने वाले प्रोफेसर एल०पी० सिह का मानना है कि भले ही उन्होने भारतीय विदेश नीति के क्षितिज सकुचित किये किन्तु उन्हे कुल मिलाकर भौतिक सूझ से वचित नही समझा जा सकता और न ही उनके योगदान को नगण्य माना जा सकता ।

शास्त्रीय युग की भारतीय विदेश नीति मे दो प्रमुख स्मारक बिन्दु है -

१ पाकिस्तान के साथ सैनिक मुठभेड के बाद ताशकन्द समझौता, और

२ श्रीलका की प्रधानमत्री श्रीमती सिरीमाओ भण्डारनायके के साथ परामर्श के बाद नागरिकता-विहीन प्रवासी तमिलो के बारे मे शान्तिपूर्ण समाधान । जहाँ एक ओर कच्छ के रण मे और उसके बाद पाकिस्तान के साथ युद्ध मे शास्त्री जी ने यह स्पष्ट किया कि वह

शान्ति प्रिय ओर शान्तिपूर्ण सह-अस्तित्व के नाम पर भारतीय राष्ट्रीय हित की बलि देने को तैयार नही है वही श्रीलका के साथ समझौते से उन्होने अन्य छोटे पडोसी देशो को इस बारे मे आश्वस्त भी किया कि भारत का कोई इरादा बल प्रयोग द्वारा उन पर हावी होने का नही था । मैत्रीपूर्ण सम्बन्धो की स्थापना के लिए वह रियायते देने को प्रस्तुत थे । नेहरू जी की तरह अपनी अन्तर्राष्ट्रीय छवि या अह को बरकरार रखने की कोई समस्या शास्त्री जी के सामने नही थी ।

शास्त्री जी की विदेश नीति के बारे मे दो-तीन विन्दु उल्लेखनीय है । एक तो उन्होने प्रधानमत्री सचिवालय का गठन कर अपने सलाहकारो की एक नई टोली जुटायी। इससे विदेश मत्रालय के अवमूल्यन की प्रक्रिया चाहे-अनचाहे शुरू हुई। इसके अतिरिक्त परमाणु नीति के मामले मे शास्त्री जी ने ऐसा निर्णय लिया कि सामरिक विकल्प को त्यागा न जा सके[27] । ताशकन्द सम्मेलन मे दौरा पडने से शास्त्री जी की मृत्यु हो गयी ।गुट-निरपेक्ष आन्दोलन राष्ट्रमण्डलीय राजनय अफ्रो-एशियाई भाईचारे आदि के क्षेत्र मे निजी छाप छोडने का कोई अवसर उसे नही मिला। यह भी स्मरणीय है कि १९६४-६६ मे भारत भयकर दुर्भिक्ष से ग्रस्त था और अपमानजनक ढग से विदेशो से खाद्यान्नके आयात पर निर्भर था। ऐसी परिस्थिति मे अर्न्तराष्ट्रीय रगमच पर भारत की भूमिका कतई प्रमुख नही हो सकती थी । इसे शास्त्रीजी की एक बडी उपलब्धि समझा जाना चाहिए कि १९६२ के घाव को भरने का काम उन्होने

अपने छोटे से कार्यकाल मे बखूबी किया।

जहा तक इन्दिरागाधी कालीन विदेश नीति का सम्बन्ध है जनवरी १९६६ मे शास्त्रीजी के निधन के बाद इन्दिरा गाधी प्रधानमत्री बनी। जिस तरह की भ्रान्तिया शास्त्रीजी के बारे मे फैली है उसी तरह तर्कहीन अतिसरलीकरण इन्दिरा गाधी की विदेश नीति और राजनय के बारे मे भी प्रचलित है। पत्रकारो और जीवनीकारो की कृपा से श्रीमती गाधी की छवि लौह महिला और रणचण्डी वाली प्रसिद्ध हुई है। लोगो के मन मे आज भी या तो १९७१ के बगला देश मुक्ति अभियान की याद ताजा है या मई १९७४ मे पोखरन मे परमाणु विष्फोट और जून १९७५ मे आपातकाल की घोषणा की। यदि चुन-चुनकर ऐसे उदाहरण पेश किये जाय तो श्रीमती गाधी को अति यर्थाथवादी प्रमाणित करना कठिन नही होगा। इसी तरह के प्रयत्न श्रीमती गाधी के अन्तर्मुखी स्वभाव ,उनके पारिवारिक एकाकीपन एव मानसिक असुरक्षा के भाव को उनके अर्न्तराष्ट्रीय आचरण के साथ जोड़ने के लिए किये जाते है[28]। ऐसा नही कि यह विश्लेषण श्रीमती गाधी के आलोचक विरोधी ही करते रहे है, बल्कि श्रीमती गाधी के साथ सहानुभूति रखने वाले विद्वान भी इस भ्रान्ति के शिकार हुए है। उदाहरणार्थ इन्दिरा गॉधी की विदेश नीति का विस्तार से विश्लेषण प्रस्तुत करने वाली लेखिका सुरजीत मानसिह की पुस्तक का शीर्षक ही 'India's Search for Power' अर्थात 'भारत शक्ति के तलाश मे' है। यदि अध्येता

सतर्कता न बरते तो इस निष्कर्ष तक अनायास पहुचा जा सकता है कि श्रीमती गाधी ने ही सर्वप्रथम पारम्परिक शक्ति सतुलन के आधार पर राष्ट्र हित सपादन का कार्य किया । जैसा कि ऊपर कहा जा चुका है कि काश्मीर पाकिस्तान गोवा आदि के सन्दर्भ मे नेहरू और शास्त्रीजी का आचरण भी आर्दशवादी नही समझा जा सकता है [29] ।

श्रीमती गाधी के सन्दर्भ मे यह टिप्पणी अधिक सार्थक लगती है कि उनकी विदेश नीति का अमूर्त वैचारिक पक्ष कही अधिक मुखर था । तीसरी दुनिया का खाद्यान्न सकट हो या पर्यावरण के सरक्षण का प्रश्न श्रीमती गाधी का उदबोधन-आह्वान सिर्फ भारतीय जनता के लिये ही नही बल्कि समग्र विश्व के लिए होता था । इसी तरह यह भी कहा जा सकता है कि पडोसी देशो और परमाणु नीति के सन्दर्भ मे वह उसी दिशा मे आगे बढी, जिस तरफ कदम पहले ही उठाये चुके थे । श्रीमती गाधी को अपनी घोषणाओ-वक्तव्यो मे क्रान्तिकारी, प्रगतिशील मुद्रा ग्रहण करना अच्छा लगता था, परन्तु व्यवहार मे नेहरू जी की सुझायी गुट-निरपेक्ष नीति मे किचित मात्र परिवर्तन या सशोधन की जरूरत नही समझी ।

श्रीमती गाधी की विदेश नीति का अध्ययन करते समय इस तथ्य की अनदेखी नही की जानी चाहिये कि उन्होने कठिनतम चुनौतियो से जूझते हुए भारत को अर्न्तराष्ट्रीय राजनय का केन्द्र बिन्दु बनाये रखने मे सफलता प्राप्त की। १९६६ से १९६९-७० तक काग्रेस पार्टी मे उनकी अपनी स्थिति निरापद नही थी और भारत

विकट आर्थिक समस्याओ से जूझ रहा था । रुपये का अवमूल्यन प्रिवीपर्स की समाप्ति बैको का राष्ट्रीयकरण, काग्रेस का विभाजन बिहार मे अकाल का सामना आदि चुनौतिया उन्हे अपने कार्यकाल के पहले चरण मे पूरी तरह व्यस्त रखे रही। बगला देश प्रकरण मे पराक्रमी प्रदर्शन और १९७१ के चुनाव मे अभूतपूर्व सफलता के बाद थोडे ही समय के लिये वैदेशिक मामलो मे एकाग्रचित होने का अवसर मिला । १९७२ मे शिमला समझौता सम्पन्न हुआ तो १९७३-७५ मे जयप्रकाश नारायण के नेतृत्व मे उनके राजनैतिक अस्तित्व की चुनौती देने वाला व्यापक जन-आन्दोलन शुरू हुआ । इसकी परिणति जून १९७५ मे आपातकाल की घोषणा और अन्तत मार्च १९७७ के ससदीय आम चुनाव मे श्रीमती गाधी की हार मे हुई ।

जहा तक जनता सरकार की विदेश नीति का सम्बन्ध है इसकी रूपरेखा मार्च १९७७ मे मोरारजी देसाई के नेतृत्व मे जनता पार्टी के शासन की बागडोर सम्भालने से बनी । जिन परिस्थितियो मे जनता सरकार का गठन हुआ, उसमे गाधी ही नही, बल्कि नेहरू वश के प्रति रोष-आक्रोश का स्वर तेज था । आपात काल की तानाशाही की दु स्वपन जैसी स्मृति जनता के मन मे थी । जनता सरकार के नेता श्रीमती इन्दिरा गाधी की सभी नीतियो को बदलने के लिये व्यग्र थे । फिर भी नए विदेश मन्त्री अटल बिहारी बाजपेयी ने कार्यभार सम्भालने के बाद यह घोषणा की कि वह नेहरू की

विदेश नीति के अनुसार ही आचरण करेगे । कहने को भले ही उन्होने खालिस गुट निरपेक्षता की बात की परन्तु इसका प्रमुख अभिप्राय यह दर्शाना था कि इन्दिरा गाधी ही अपने पिता के मार्ग से विचलित हुई थी । पड़ोसी देशो के साथ सम्बन्धो के क्षेत्र मे जरूरत से ज्यादा रियायती व नरम रुख अपनाना जनता सरकार के लिये शायद इसलिये जरूरी हुआ कि उसके विदेश मन्त्री बाजपेयी की अब तक छवि आक्रामक हिन्दु राष्ट्रवादी वाली थी [30] । जनता सरकार का गठन विभिन्न वैचारिक रुझानो वाले राजनीतिक दलो को मिलाकर हुआ था । इसी कारण किसी स्पष्ट अर्न्तराष्ट्रीय परिपेक्ष्य या सैद्धान्तिक सरोकार की अपेक्षा उनसे नही की जा सकती थी । यह स्वभाविक था कि नौकरशाही का महत्व विदेश नीति नियोजन के क्षेत्र मे बढा ।

अर्न्तराष्ट्रीय मामलो मे जनता सरकार के वरिष्ठ सदस्यो की अनुभवहीनता भी भारत के लिये हानिप्रद सिद्ध हुई । तत्कालीन अमरीकी राष्ट्रपति कार्टर की भारत यात्रा १९७८ के दौरान मोरारजी देसाई के साथ उपजी गलतफहमी और जनता सरकार (चरण सिह के नेतृत्व मे) के दूसरे विदेश मन्त्री श्याम नन्दन मिश्र की विदेश यात्राएँ इसका उदाहरण है । जहा एक ओर गृहमन्त्री चरण सिह इसे गौरव का विषय समझते थे कि उन्हे दीन दुनिया की कोई खबर नही रहती वही उन्हे बिना किसी प्रमाण के अपने मन्त्रिमण्डल के एक सहयोगी को विदेशी गुप्तचर बताने मे कोई सकोच नही हुआ । इसी

तरह प्रधानमन्त्री मोरारजी देसाई शान्ति प्रेमी थे परन्तु इतने नही कि सिद्धान्तो के लिये वह राष्ट्र के सामरिक हित बलि कर देते। परमाणु नीति के मामले मे एकपक्षीय घोषणाए या पाकिस्तान मे भुटटो की कानूनी हत्या की भर्त्सना न करना उनकी निरपेक्षता ही प्रकट करते है[31]।

अनेक बार जनता सरकार की विदेश नीति का अध्ययन - विश्लेषण करते वक्त परिवर्तन एव निरन्तरता की बात कही जाती है। यह कहना अधिक सटीक होगा कि ढाई वर्ष का यह समय एक तरह का व्यवधान काल था। यह एक ऐसा अन्तराल था जिसमे सुचिन्तित विदेश नीति के दर्शन नही होते[32]। अर्न्तराष्ट्रीय घटनाक्रम के प्रति अपनी इच्छानुसार व्यक्ति विशेष की प्रत्यावर्तित क्रियाए ही देखने को मिलती रही।

श्रीमती इन्दिरा की वापसी और विदेश नीति १९८० के आम चुनाव मे श्रीमती इन्दिरा गाधी की अत्यन्त नाटकीय ढग से अभूतपूर्व विजय हुई। परन्तु जहा से व्यवधान पडा था वही से छूटा काम आगे बढाने का प्रश्न नही उठता था। जनता सरकार के कार्यकाल मे श्रीमती इन्दिरा गाधी को अपने अनेक मित्रो को परखने का अवसर मिला[33]। इसके अतिरिक्त अपनी वापसी के बाद उनके मन मे निश्चय ही इस बात का अहसास गहरा हुआ कि नियति ने उन्हे कुछ ऐतिहासिक उपलब्धियो के लिये चुना है। इस दूसरे कार्यकाल

के विषय मे यह कहा जा सकता है कि एक साथ मोहभग के बाद श्रीमती इन्दिरा गाधी की विदेश नीति मे अति यथार्थवादी और आदर्शवादी महत्वाकाक्षाओ का सम्मिश्रण देखने को मिलता है । सयोगवश ही सही मार्च १९८३ मे गुटनिरपेक्ष आन्दोलन का नेतृत्व ग्रहण करने के साथ श्रीमती इन्दिरा गाधी अन्तर्राष्ट्रीय नेताओ की पहली वरिष्ठ श्रेणी मे आ गयी । भारत की अन्तर्राष्ट्रीय प्रतिष्ठा और राजनयिक प्रभाव मे उनके जीवन पर्यन्त कोई क्षय नही हुआ [34]।

पाद टिप्पणिया

1. Tımes of Indıa 24 5 1991 (Edıtorıal)
2. Appadoraı A Domestıc Roots of Indıa s Foreıgn Polıcv Page 76
3. Arnold Wolfer s Internatıonal Encyclopaedıa of the Socıal Scıences Page 124
4. Appadoraı A Domestıc Roots of Indıa s Foreıgn Polıcv Page 94
5. An artıcle by Kamalkant Panda Motılal Nehru College
6. Jemes N Rosenau(ed) Internatıonal Polıtıcs and Foreıgn Polıcv A Reader ın Research and Theory (New York, 1969)p 17
7. Hans I Morgenthau Dılemmas of Polıtıcs (Chıcago 1958)
8. Gopal Krıshna (One perty tomınance) Development and trends Page 127
9. Quoted ın Servepallı Gopal J L Nehru A Bıography Page 69
10. Braıne B Wıll Indıa Stay ın the Common Wealth? Page-99
11. Chıpman W Indıa s Foreıgn Polıcv Page 54
12. Suffimal Dutt Wıth Nehru ın the Foreıgn Polıcy Page 116
13. Arnold Wolfer s Internatıonal Encyclopedıa of the Socıal Scıences Page 201
14. Durgadas Indıa and the world Page 176
15. Durgadas Indıa and the world Page 104
16. Dutt V P Indıa s Foreıgn Polıcy Page 97
17. सूचना एव प्रसारण मत्रालय भारत सरकार द्वारा प्रकाशितसदर्भ 'ग्रथ इण्डिया १९८७ से
18. Tımes of Indıa 24 8 1991 (Edıtorıal)
19. Arnold Wolfer s Internatıonal Encyclopedıa of the Socıal Scıences Page 236
20. Appadoraı, A Domestıc Roots of Indıa's Foreıgn Polıcy Page-197
21. Burke S M Maınsprıngs of Indıan and Pakıstan Foreıgn Polıcıes Page 198
22. Arnold Wolfer's Internatıonal Encyclopedıa of the Socıal Scıences Page 287
23. Appadoraı A Domestıc Roots of Indıa's Foreıgn Polıcv Page 207
24. Burke S M Maınsprıngs of Indıan and Pakıstan Foreıgn Polıcıes Page 234
25. Arora, S K Amerıcan Foreıgn Polıcy Towards Indıa Page-97
26. Berkes, R N and Bedı, M S The Dıplomacy of Indıa Indıan Foreıgn Polıcy ın the Unıted Natıons Page 232

27 Braine B Will India Stay in the Common Wealth? Page 164

28 Burke S M Mainsprings of Indian and Pakistan Foreign Policies Page-94

29 Rajni Kothari 'The Congress System in India From Party System and Election Studies Page-77

30 Statesman 4 1 1978

31 Indian Express Editorial 7 July 1979

32 Chipman W India s Foreign Policy Page 116

33 Dainik Hindustan 13 12 1980

34 Dutt V P India s Foreign Policy Page 201

अध्याय - २

द्वितीय अध्याय मे हम राजीव गाधी के काल मे भारतीय राजनीतिज्ञो द्वारा समय-समय पर अन्तर्राष्ट्रीय मचो पर किये गये निर्णयो उनके क्रियान्वनो तथा अदा की गई भूमिका का विवेचन करेगे ।

इन्दिरा गाधी की दुखद हत्या के कारण विश्व शान्ति निरस्त्रीकरण और विकास का अग्रणी समर्थक हमारे बीच से चला गया परन्तु जितने आसान और सुव्यवस्थित ढग से राजीव गाधी को प्रधानमत्री नियुक्त किया गया और उसके बाद जिस तरीके से स्वतन्त्र निष्पक्ष और शातिपूर्ण ढग से चुनाव हुए तथा राजीव गाधी की अध्यक्षता मे नई सरकार ने पदभार सम्भाला उससे सम्पूर्ण विश्व को यह स्पष्ट प्रमाण प्राप्त हो गया कि भारतीय लोकतान्त्रिक प्रणाली कितनी परिपक्व तथा मजबूत हो चुकी है[1] ।

श्री गाधी ने एक शान्ति दूत की हैसियत से देश की सीमाओ से बाहर जाकर अपनी हर मजिल और हर पडाव पर जो कुछ किया अपने जो प्रभाव छोडे उनकी समीक्षा से पहले, आइये हम उनके उन सकल्पो और सदभावो की झाकी से परिचित हो ले जो उनकी विश्व यात्रा मे उनकी झोली के सबल रहे। यानी उनके विचार और इरादे ।

श्री गॉधी ने २० अप्रैल १९८८ को लोकसभा मे भारत की विदेश नीति के सन्दर्भ मे अपने विचार प्रकट करते हुए कहा था - "पिछले दो-तीन वर्षो से, विशेषकर अन्तर्राष्ट्रीय सम्बन्धो मे, विश्व मे

बडी तेजी से बदलाव हो रहे है। नये दृष्टिकोण विकसित हो रहे है, सोच के नये ढग निकल रहे है। इन सबसे सचार के सभी देशो के सामने नई चुनौतियॉ खडी हो जायेगी खासतौर से भारत सरीखे देशो के सामने जो अन्तर्राष्ट्रीय मामलो मे महत्वपूर्ण भूमिका निभाते है। इस तरह के हालात मे कोई भी अपने अतीत मे ही डूबा नही रह सकता। हमे लचीला रूख अपनाना ही होगा साथ ही हमे अपने उन आधारभूत सिद्धान्तो और नैतिक अवधारणाओ पर भी अटल रहना होगा जिन पर हमारी विदेश नीति टिकी हुई है[2]।"

श्री गॉधी ने भारत के शान्ति प्रयासो को विश्व के अन्य देशो द्वारा मिलने वाले समर्थन को रेखाकित करते हुए उन्होने कहा -
"जब हमने अपनी विदेश नीति को नैतिकता के साथ जोडा तो उस समय हमे अव्यावहारिक माना गया, लेकिन आज ऐसा नही है अब विश्व अहिसा आणविक हथियारो से मुक्ति और निरस्त्रीकरण के महत्व को समझने लगा है[3]।"

हमारे 'बसुधैव कुटुम्बकम्' के सनातन सिद्धान्त को विश्व मे प्राप्त हो रही आम सहमति पर हर्ष व्यक्त करते हुए श्री राजीव गाधी ने कहा था- "आज विश्व यह स्वीकार करने लगा है कि तब तक हमारा सही और पूर्ण विकास नही हो सकता, जब तक सच्चाई महाशक्तियो के हितो और प्रभावो के बोझ तले दबी रहेगी। मानव जाति एक है। 'बसुधैव कुटुम्बकम्' के हमारे सिद्धान्त पर पूर्ण विश्व मे आम सहमति होती जा रही है। जो हमारे शान्तिपूर्ण सह-

अस्तित्व के सिद्धान्त के प्रति शकालु थे आज वही राष्ट्र भय दिखाने की नीति छोडकर शान्तिपूर्ण सह-अस्तित्व की बात कर रहे है। पण्डित जवाहर लाल नेहरू जी ने हमारी विदेश नीति को मजबूत आधारशिला पर खडा किया था। आज विश्व भी हमारी ही विचारधारा मे शामिल होता जा रहा है[4] ।"

परमाणु शस्त्र विहीन विश्व के लिए दिल्ली घोषणा श्री गॉधी ने विश्व को परमाणु शस्त्र विहीन करने की अपील करने वाली दिल्ली घोषणा की चर्चा करते हुए कहा था - "इसका एक सशक्त प्रमाण सामने ही है जब अभी हाल ही मे, नवम्बर १९८६ मे, नई दिल्ली घोषण-पत्र मे अहिसा और आणविक निरस्त्रीकरण के सिद्धान्तो के प्रति निष्ठा दुहराई गई। आणविक शस्त्रो के विकास पर रोक लगाने की बात से ही हमारी नीतियो के प्रति उनका झुकाव साफ झलकता है [5]।"

इस सफलता के मूल मे उपस्थित पॉच महाद्वीप, छ राष्ट्र की पहल की याद दिलाते हुए श्री गॉधी ने कहा था -

मई १९८४ मे इन्दिरा जी की छत्रछाया मे छ राष्ट्रो द्वारा पहल की गयी। ऐसा उस समय किया गया, जब महाशक्तियो के बीच सम्बन्ध नाममात्र के थे तब किसी ने भी नही सोचा था कि तनाव इस प्रकार दूर हो जायेगे। लेकिन उन्होने जो प्रयास किये विश्व मे उचित वातावरण बनाने और निरस्त्रीकरण की दिशा मे रत उन सभी देशो की अनवरत कोशिशो के फलस्वरूप आई एन एफ सन्धि पर

हस्ताक्षर हुए। उन्ही के शब्दो मे पहली बार आणविक हथियारो का विघटन हुआ। हम देख रहे है कि पहली बार एक सही अन्तर्राष्ट्रीय लोकतात्रिक व्यवस्था विकसित हो रही है और दो महाशक्तियो की विभाजन रेखा अब लुप्त होती जा रही है[6]।

श्री गॉधी ने आशाजनक वातावरण की चर्चा के बावजूद कुछ नये सभावित खतरो के प्रति चेतावनी भी दी -

"यही समय है जब हमे एक ऐसे विश्व के निर्माण की दिशा मे मुडना होगा, जहा आणविक हथियार न हो, निरस्त्रीकरण हो चुका हो और हमे ऐसे सभी नये खतरो से अपना बचाव करना होगा जो हमे दुबारा हथियारो की होड मे घसीट ले सकते है। आणविक हथियारो से भी परे हमे यह भी देखना होगा कि कही कोई ऐसा साधन तो नही पनप रहा, जिससे सम्पूर्ण मानव जाति का विनाश हो सकता है। हम इस बात के प्रति भी सचेत रहे कि हथियारो की होड के साथ कही कोई और नई दिशाये तो नही जुड रही है [7]।"

श्री गॉधी ने एक भयकरतम आसन्न खतरे के प्रति आगाह करते हुए कहा था- "हमे यह भी देखना होगा कि कही उच्च स्तर के वे पारम्परिक हथियार तो विकसित नही हो रहे जिन्हे अपने पाच महाद्वीपीय प्रयास मे सर्जिकल हथियारो की सज्ञा दी है। इस विधा का प्रयोग बडे प्रभावशाली ढग से देशो के नेतृत्व को बिना कोई बडा नुकसान किये, समाप्त करने के लिए किया जाता है, ताकि घोर अव्यवस्था फैल जाय[8]। "

श्री गॉधी ने अतर्राष्ट्रीय सहयोग की दिशा मे नही व्यवस्था के महत्व की आवश्यकता पर जोर देते हुए कहा - "अब समय आ गया है कि हमे सोचना पडेगा कि हम किस तरह इन बातो पर नियत्रण पाकर सही रास्ता अपना सके। अन्तर्राष्ट्रीय सहयोग के एक नये ढाचे की आवश्यकता है। एक ऐसी वास्तविक प्रभावशाली एव पुर्नगठित सयुक्त राष्ट्र सघ व्यवस्था की आवश्यकता है जिसमे अन्तर्राष्ट्रीय लोकतत्र और सार्वभौमिक समानता को मान्यता प्राप्त हो। एक ऐसे अन्तर्राष्ट्रीय सहयोग की आवश्यकता है, जो यह मानकर चले कि सम्पूर्ण मानव जाति एक परिवार के समान है जहॉ सबके हित आपस मे इतने जुडे हुए हो कि एक हिस्से मे हो रही वृद्धि एव विकास दूसरे हिस्से मे स्थिरता लाये। एक ऐसी विश्व व्यवस्था की जरूरत है, जो गॉधी जी और नेहरू जी की अन्तदृष्टि एव मूल्यो पर आधारित हो[9] । "

जवाहर लाल नेहरू और इन्दिरा गाधी द्वारा अपनायी गयी विदेश नीति के सिद्धान्तो और मूल दृष्टिकोणो के प्रति अपनी वचनबद्धता को दोहराते हुए राजीव गॉधी ने कहा था - "शान्ति के लिए कार्य करने मे हमारा सदैव विश्वास रहा है। हमारी नीति आपसी आदान- प्रदान तथा परस्पर लाभ के आधार पर सभी देशो के साथ मित्रता बनाये रखने की है। न्याय, समानता तथा आपसी सहयोग पर आधारित नई आर्थिक व्यवस्था और गुटनिरपेक्षता के प्रति हमारी बचनबद्धता अडिग है। इसका तात्पर्य है कि- शान्ति तथा विकास के

दो देशो के प्रति घोर निष्ठा। हम राष्ट्रो की स्वतन्त्रता की रक्षा करने और एक दूसरे के मामलो मे दखलन्दाजी न करने और अहस्तक्षेप के सिद्धान्तो मे विश्वास करते है[10] ।"

श्री राजीव गाधी की विदेश नीति विषयक विचारो का और खुलासा ससद मे उनके द्वारा दिये गये वक्तव्य से हो जाता है -

"भारत की विदेश नीति पिछले ३७ वर्षो से कसौटी पर कसी और जाची जा चुकी है। इन ३७ वर्षो के दौरान न केवल भारत अपितु समूचे विश्व भर मे यह माना गया है कि हमारी विदेश नीति अत्यन्त सशक्त और सार्थक है। भारत मे जब सत्ता परिवर्तन हुआ था उस समय भी उन लोगो के लिए हमारी विदेश नीति मे परिवर्तन कर पाना सभव नही हो पाया था। इसका कारण यह था कि हमारी विदेश नीति देश की जरूरतो के अनुरूप तैयार की गई थी ।"

किसी देश की विदेश नीति की सफलता या विफलता इस बात पर निर्भर करती है कि उस देश का विश्व स्तर के सगठनो मे कितना सम्मान है और ससार के अन्य देशो मे उसका कितना मान है। आज किसी देश को इसमे सन्देह नही हो सकता कि भारत विदेश नीति मे न केवल भारत को नेतृत्व प्रदान किया है अपितु १०० से अधिक गुटनिरपेक्ष राष्ट्रो का पथप्रदर्शन भी किया है।

हमारी विदेश नीति का एक महत्वपूर्ण आधार स्तम्भ विश्व शान्ति है। शान्ति का मार्ग गाधी जी के अहिसा से प्रशस्त होता है जो कि एक व्यापक अर्थात विश्व स्तरीय अवधारणा है। काग्रेस

गाधीवादी नीति का अनुगमन करती रही है और आज का भारत भी इसी का अनुपालन कर रहा है। इस प्रकिया मे सहायता पहुचाने के लिए हमने जो कदम उठाये है दिल्ली मे होने वाला छ राष्ट्रो का सम्मेलन उनमे से एक कदम था। दिल्ली घोषणा इसी सम्मेलन की देन थी। जिसको ससार भर मे व्यापक रूप से स्वीकार किया गया था। परमाणु हथियारो वाले देशो के लोग भी इस घोषणा पत्र से प्रभावित हुए। इसने बडे बडे शक्तिशाली जनमत को बदला है और उसे प्रभावित किया है ।

गत दो या तीन वर्षो के दौरान विश्व मे विशेषकर अन्तर्राष्ट्रीय सम्बन्धो मे बडी तेजी से परिवर्तन हुआ है। नये दृष्टिकोणो का विकास हो रहा है और नये-नये विचार उभरकर सामने आ रहे है तथा इसके परिणामस्वरूप विश्व के सभी देशो के लिए चुनौतिया पैदा होना स्वाभाविक है । विशेषकर भारत जैसे देश के लिए, जो अन्तर्राष्ट्रीय मामलो मे एक महत्वपूर्ण भूमिका निभाता है। ऐसी स्थिति मे किसी को भी अतीत के दलदल मे नही फसा रहना चाहिए अपितु लचीला मार्ग अपनाना चाहिए। किन्तु इसके साथ-साथ हमे अपने उन मूल सिद्धान्तो को नही छोडना चाहिए, जिनपर हमारी विदेश नीति आधारित है[11]।

राजीव गाधी की विदेश नीति के बारे मे श्री के आर नारायण के विचार महत्वपूर्ण है । राजीव गाधी के ३ जनवरी १९८५ को, भारत के प्रधानमन्त्री के रूप मे कार्यभार ग्रहण करने के तुरत

पश्चात उन्होने कहा था- "देश की बागडोर नई पीढी के हाथ मे आ गई है। साठ प्रतिशत मतदाता चालीस वर्ष से कम आयु के है। उन्हे इस बात की भी जानकारी थी कि विश्व मे नयापन आ गया है, यह भी कि इसमे बुनियादी परिवर्तन आ गया है और यह तेजी से बदलता जा रहा है। किन्तु शीघ्र ही उन्हे इस बात का पता चल गया कि इन महत्वपूर्ण परिवर्तन मे से अधिकाश अनिवार्यत भारत की विदेश नीति के नियामक पडित जवाहर लाल नेहरू के दृष्टिकोण के अनुरूप थे जिन्होने इसकी कल्पना की थी तथा इसे मूर्तरूप देने को प्रयास किया था।" इसलिये उन्होने आगे कहा था- "उन्ही सिद्धान्तो को पुन उपयोग मे लाना आवश्यक है। इसलिये नये सिरे से विचार करने की आवश्यक्ता है। इस प्रकार राजीव गाधी की विदेश नीति परिवर्तन के साथ निरतरता का अथवा निरतरता मे मौलिकता का अक अच्छा उदाहरण प्रस्तुत करता है। उन्होने नये दृष्टिकोण से भाषा मे नवीनता के साथ तथा गतिशीलता की भावना के साथ जवाहर लाल नेहरू के मूल दृष्टिकोण तथा नीतियो का अनुसरण किया तथा विश्व मे उभर रहे शीत युद्ध रहित एक नये विश्व का निर्माण करने के लिये जागरूक रहकर प्रयास किया, एक नये विश्व का सपना देखा और उसके लिये कार्य किया किन्तु इसे वे प्राप्त नही कर सके या वास्तिवक रूप मे परिणित नही कर सके[12]।"

राजीव गाधी को अपने पूर्ववर्ती प्रधान मत्रियो की तरह पता था कि भारत का आर्थिक दृष्टि से निर्माण तथा इसकी रक्षा वैज्ञानिक और प्रौद्योगिकीय क्षमताओ का इस विशाल और जटिल देश की राजनीतिक और मनोवैज्ञानिक एकता के आधार पर विकास विश्व मच पर किसी सार्थक भूमिका को निभाने के लिये एक अपरिहार्य शर्त है। इसलिये वे देश को आर्थिक रूप से निर्भर बनाने तथा इसे २१वी सदी मे ले जाने के बारेमे निरन्तर बात करते थे। परन्तु उन्हे ज्ञात था जैसा कि उन्होने अपने प्रथम भाषण मे १२ नवम्बर, १९८४ को कहा था- "राष्ट्र निर्माण की सबसे पहली पूर्वापेक्षा शाति है, पडोसी देशो के साथ शाति तथा विश्व मे शाति। अपने सक्षिप्त परन्तु बेहतरीन राजनैतिक जीवन मे उनके लिए शाति एक मुख्य मुद्दा था जिसे उन्होने उत्साह और उद्देश्यपूर्ण कार्यवाही करके स्थापित करने की कोशिश की थी।"

प्रधान मत्री के तौर पर उनका पहला अन्तर्राष्ट्रीय सम्मेलन नई दिल्ली मे छ राष्ट्रो के पाच महाद्वीपो का शिखर सम्मेलन था जिसे उनकी माता इदिरा गाधी द्वारा शुरु किया गया था। राजीव ने कहा था कि यह सम्मेलन इतिहास के निराशपूर्ण मोड़ पर हो रहा है। इस दिल्ली शिखर सम्मेलन मे एक घोषणा जारी की गयी थी। इस घोषणा मे परमाणु शस्त्रो के उत्पादन और विकास पर रोक लगाने का अनुरोध किया गया था जो कि परमाणु शस्त्रो को पूर्णतया समाप्त करने के उद्देश्य को पूरा करने की तरफ पहला

एशिया महाद्वीप मे ब्रिटिश उपनिवेशवाद की समाप्ति के साथ एक नये सघर्ष की शुरूआत हुई जिसके परिणामस्वरूप इस क्षेत्र से शान्ति शब्द का लोप ही हो गया यह सघर्ष है दो पडोसी देशो का सघर्ष जिसे भारत पाक सघर्ष के नाम से जाना जाता है। भारत विभाजन के समय की घृणा और अविश्वास ने दोनो ही देशो को आज तक युद्ध की तैयारी मे लगाये रखा। प्रारम्भ से ही दोनो देशो की सेनाए एक दूसरे के आमने सामने न केवल तैनात रही अपितु तीन बडे युद्ध हुए और एक छोटी सी चिनगारी से किसी भी दिन चौथा युद्ध शुरू हो जाये तो आश्चर्य नही। पाकिस्तान की दुराग्रहपूर्ण विदेश नीति पर प्रकाश डालते हुए श्री राजीव गाधी मे कहा था- "पाकिस्तान के विदेश नीति का आधार भारत विरोध रहा है। पाकिस्तान का निर्माण मुस्लिम लीग की हिन्दुओ के प्रति घृणा की नीति का फल है इसलिए पाकिस्तान के शासको के लिए यह आवश्यक हो गया कि वे भारत विरोध की नीति अपनाए क्योकि यदि वे ऐसा नही करते रहे तो उसके जन्म का आधार नष्ट हो जाता है। कश्मीर का प्रश्न इस नीति की प्रमुख अभिव्यक्ति है कश्मीर को प्राप्त करने के लिए कभी अमेरिका और ब्रिटेन का पिछलग्गू बने रहने की नीति तो कभी चीन की चापलूसी यही सकेत देती है कि पाकिस्तान का भारत विरोध हमेशा बना रहेगा।"

जनवरी १९८८ मे स्टाकहोम मे जब छ राष्ट्रो की पुन वैठक हुई थी तो महाशक्तियो को सामरिक महत्व के अपने हथियारो मे १९८८ के पहले छ माह के दौरान ५० प्रतिशत की कटौती करने का सुझाव दिया गया था तथा सयुक्त राष्ट्र व्यवस्था के अर्न्तगत एक समेकित बहुउद्देशीय जाच व्यवस्था करने का भी सुझाव दिया गया था । शिखर सम्मेलन ने परम्परागत हथियारो मे भी भारी कटौती करने का सुझाव दिया था यह महत्वपूर्ण बात है कि बाद मे महाशक्तियो के बीच किये गये निरस्त्रीकरण समझौते राजीव गाधी तथा उनके अन्य पाच सहयोगी देशो द्वारा छ राष्ट्रो के शिखर सम्मेलन मे रखे गये प्रस्तावो के आधार पर ही किये गये। इस बारे मे नवम्बर १९८८ के शुरू मे राजीव गाधी और मिखाइल गोर्बाचोब द्वारा जारी की गयी 'दिल्ली घोषणा' याद करने योग्य है, जिसके माध्यम से निरस्त्रीकरण प्रयासो को एक नये सैद्धान्तिक एव व्यावहारिक आयाम दिये गये। इसके माध्यम से राजीव के अनुसार भारतीय ससद परमाणु शस्त्र मुक्त और शातिप्रिय विश्व की स्थापना की दिशा मे आम कल्पना को साकार करने के कार्य मे सम्मिलित हो गयी । गाधी जी के शाति प्रिय विश्व सिद्धान्त को पहली बार एक महत्वपूर्ण अन्तर्राष्ट्रीय दस्तावेज मे स्थान मिला। राजीव ने दावा किया था कि गाधी जी और लेनिन के आदर्श दिल्ली घोषणा मे समाहित हुए है और विश्व समुदाय द्वारा इसकी आम स्वीकृति हेतु उन्होने इसकी सस्तुति की।

राजीव गाधी के निरस्त्रीकरण के प्रयास उस वक्त उच्चतम सीमा पर पहुच गए जब उन्होने सयुक्त राष्ट्र सघ के विशेष सत्र मे परमाणु शस्त्रो को २० वर्षो के अदर पूरी तरह से समाप्त करने सबधी निरस्त्रीकरण कार्यकारी योजना प्रस्तुत की थी। यह अभी भी शायद कुछ सशोधनो के साथ भारत की परमाणु शस्त्र निरस्त्रीकरण नीति का मुख्य अवलम्ब है और शायद इस विषय पर अब तक की प्रस्तुत सबसे अधिक विस्तृत और वास्तविक योजना है। उन्होने कहा कि हमारा प्रस्ताव है कि प्रथम चरण मे १९९५ मे समाप्त होने वाली परमाणु अस्त्र वाले राष्ट्रो को सन २०१० तक सभी परमाणु शस्त्रो को कम करने और सभी ऐसे राष्ट्रो जिनके पास परमाणु अस्त्र नही है परमाणु अस्त्रो की देहरी पार न करने देने हेतु किए गए वायदो को कानूनी स्वरूप देगा इस सूत्र से विश्व परमाणु शस्त्र निरस्त्रीकरण की आवश्यकता तथा आज भारत द्वारा अनुभव की जा रही निरस्त्रीकरण की कुछ समस्याओ की कमी पूरी हो जाती है।

राजीव गाधी ने सयुक्त राष्ट्र सघ मे भारत की स्थिति स्पष्ट करते हुए कहा था कि हम इस तर्क को स्वीकार नही कर सकते है कि कुछ राष्ट्रो को मानव जाति के अस्तित्व पर प्रश्न चिन्ह लगाते हुए अपने सुरक्षोपाय करने का अधिकार है न ही ये स्वीकार्य है कि जिनके पास परमाणु शस्त्र है वे सभी नियत्रणो से परे है जबकि वे राष्ट्र जिनके पास परमाणु शस्त्र नही है उनकी इस बात के लिए जाच की जाती है कि वे इन शस्त्रो का उत्पादन न करे।

शाति और निरस्त्रीकरण भारत द्वारा स्वतत्रता के बाद से ही अपनाई गई गुट निरपेक्ष नीति के केन्द्रीय उदेदेश्यो मे से एक था। शस्त्र युद्ध के बाद विश्व मे नई नीति की प्रासगिकता को राजीव जी ने समझा था और नेहरू जी की गुटनिरपेक्षता और शातिपूर्ण सह-अस्तित्व के सन्दर्भ मे उन्होने उस नीति के पालन और उसमे नई वास्तविकताओ के आधार पर परिवर्तित और परिवर्तनशील विश्व के अनुरूप रचनात्मक सशोधन किए। हरारे मे और उसके बाद बेलग्रेड मे गुट निरपेक्ष आन्दोलन को इस बात की आवश्यकता महसूस हुई कि सुस्थापित नीति के मूल उददेश्यो का अनुसरण किया जाय और साथ ही नए विश्व की नई वास्तविकताओ का दृढतापूर्वक सामना किया जाए। हरारे और बैलग्रेड दोनो मे ही राजीव ने वहा हुई चर्चाओ मे प्रमुख रूप से अपना योगदान दिया। बेलग्रेड मे हुए सम्मेलन मे राजीव ने उसके परम्परागत उद्देश्यो को ऐसा नया रूप दिया कि सतत परिवर्तनशील मानवजाति के भविष्य की समस्याओ के अनुरूप हो जाये। विश्व स्तर पर हो रही गतिविधियो के सदर्भ मे एक नैतिक शक्ति के रूप मे उन्होने तटस्थता की भूमिका पर बल दिया, जिसका सीधा प्रहार नामीबिया की आजादी पर पड़ने वाला था और जिससे उपनिवेशवाद एव नस्लवाद के रूप मे रगभेद के समाप्त होने की सभावना थी और साथ ही उन्होने गुट-निरपेक्षता को शासन करने और प्रभुत्व की खोज की । उस नीति की प्रतिशक्ति के रूप मे प्रस्तुत किया जो अभी तक अतर्राष्ट्रीय राजनीति मे व्याप्त थी। **'पृथ्वी**

सरक्षण कोष' का विशिष्ट प्रस्ताव देकर उन्होने पर्यावरणीय समस्याओ पर विशेष बल देने का प्रस्ताव दिया और इस प्रकार उन्होने तटस्थता के सन्दर्भ मे एक नई सकल्पना दी जिसका पृथ्वी और मानव जाति के भविष्य पर महत्वपूर्ण प्रभाव पडेगा।

राजीव गाधी ने रगभेद की नीति के विरूद्ध जो सघर्ष किया उसका उल्लेख अवश्य किया जाना चाहिए। राष्ट्र मण्डल सम्मेलनो मे उन्होने दक्षिण अफ्रीका के विरूद्ध लगे प्रतिबधो को जारी रखने की वकालत की। मार्गरेट थैचर जैसे उग्र व्यक्तित्व के साथ बातचीत करते समय उन्होने जो वाक्चातुर्य और कूटनीतिक कौशल दिखाया उससे उनकी प्रतिष्ठा और अधिक बढ गयी। नसाऊ और लन्दन दोनो ही स्थानो पर हुए सम्मेलनो मे लौह महिला मार्गरेट थैचर अलग-थलग पड गई। किन्तु उन्होने अपने आकर्षण और राजनीतिक दक्षता के द्वारा श्रीमती थैचर का सम्मान और सदभाव अक्षुण्ण बनाए रखा। उन्होने रगभेद पर इस महत्वपूर्ण चरण मे निर्णयात्मक भूमिका निभाई। रगभेद उपनिवेशवाद और जातिभेद के विरूद्ध सघर्ष मे जिस अफ्रीका कोष का प्रस्ताव राजीव गाधी ने किया वह दूसरा महत्वपूर्ण प्रस्ताव था। नामीबिया के सबध मे राजीव गाधी की भूमिका इतनी महत्वपूर्ण थी कि नामीबिया सरकार ने अपने स्वतत्रता समारोह मे उन्हे उस समय विशेष अतिथि के रूप मे आमत्रित किया, जबकि वे विपक्ष के नेता मात्र थे।

राजीव गाधी की विदेश नीति विश्व के व्यापक कार्यकलापो के

बारे मे पहले से ही नही बनायी गयी थी, बल्कि पडोसी देशो की कठिन और दुरूह समस्याओ को लेकर भी बनायी गयी थी। दक्षिण एशिया मे मूल सिद्धान्तो और राष्ट्रीय हितो के साथ समझौता किये बिना ही उन्होने मेल-मिलाप, मैत्री और सहयोग के लिए प्रयास किया। उन्होने दक्षेस सगठन को नयी प्रेरण दी। उन्होने जिया उल हक और बेनजीर भूटटो दोनो के साथ न केवल सरकारी किन्तु व्यक्तिगत सम्बन्ध भी स्थापित किये। एक दूसरे के परमाणु प्रतिष्ठानो पर आक्रमण न करने सबधी पाकिस्तान के साथ किया गया समझौता विश्वास पैदा करने वाला प्रमुख उपाय था और परमाणु प्रश्न के निपटारे की सभावनाये दोनो पडोसियो के बीच सबध बिगडने का कारण इसमे अन्तग्रस्त था । राजीव गाधी की चीन यात्रा कुल मिलाकर एक ऐतिहासिक कदम था जिससे एशिया के दो महान देशो के बीच लम्बे समय से बिगड़े सबधो मे सुधार आया। उसी ऐतिहासिक यात्रा के आधार पर आज चीन के साथ भावी सबध बनाये जा रहे है। श्रीलका के सबध मे दुर्भाग्य पूर्ण कार्यो के होते हुए भी, श्रीलका मे तमिलो को कोई बड़ी स्वायत्ता मिल सकने मे शका है और श्री राजीव गाधी जयवर्धने समझौते मे उसकी एकता और अखण्डता मे अधिक विश्वसनीय गारन्टी है।

महाशक्तियो के साथ व्यवहार मे राजीव ने अन्तर्राष्ट्रीय सबधो के प्रति गहरी समझबूझ दिखायी। वह समझते थे कि शीत युद्ध के समाप्त होने से भारत को अमेरिका और पूर्व सोवियत सघ के साथ

निकट और सार्थक सम्बघ स्थापित करने के अवसर प्राप्त होगे। उन्होने भारत के साहस तथा विश्वास और इसके हितो को ध्यान मे रखकर मित्रता की पेशकश की । इस सदर्भ मे बात उल्लेखनीय है कि भारत के युवा प्रधानमत्री ने सहज रूप से और समानता के स्तर पर राष्ट्रपति श्री रोनाल्ड रीगन और महासचिव श्री मिखाइल गोर्बाचोव से वार्ता की। उन्होने इन दोनो महाशक्तियो के साथ गहरे और व्यापक सबध स्थापित करने के लिए अमेरिका और भूतपूर्व सोवियत सघ के साथ अनेक समझौतो पर हस्ताक्षर किए। साथ ही उन्होने जापान एशियाई देशो तथा यूरो पीय आर्थिक समुदाय के साथ निकट सबधो के महत्व की अवहेलना नही की। उन्होने भारत की परम्पराये - जो उन्हे विरासत मे मिली थी और अन्तर्राष्ट्रीय स्थिति की वास्तविकता - जैसा कि उन्होने समझी था के अनुसार विश्व के प्रति अपना दृष्टिकोण बनाया।

विश्व के प्रति अपने दृष्टिकोण मे उन्होने भारत पर मुख्य रूप से ध्यान दिया, भारत की राजनैतिक एकता को तथा इसकी आर्थिक प्रौद्योगिकीय और सैन्य दृष्टि से मजबूत कराने की आवश्यकता महसूस की जैसे कि जवाहर लाल नेहरू और इदिरा गाधी की विज्ञान और प्रौद्योगिकी पर केवल भारत के विकास के साधन रूप मे ही प्रमुख रूप से बल नही दिया बल्कि अपनी विदेश नीति और राजनयिकता के एक महत्वपूर्ण पहलू के रूप मे इसका प्रचार भी किया।

उन्होने अपनी विदेश नीति और कूटनीति मे महाशक्तियों के साथ तथा दक्षिण के विकासशील देशो मे वैज्ञानिक और प्रौद्योगिकीय सहयोग के उद्दश्यो को प्राथमिकता के रूप मे अपनाया। इस प्रकार "भारत के प्रधान मत्री के सक्षिप्त और उज्ज्वल काल के दौरान राजीव गाधी द्वारा प्रतिपादित विदेश नीति मे आदर्श और आराध्य सिद्धान्तो तथा तीक्ष्ण व्यवहार्य विषयवस्तु और प्रौद्योगिकीय तर्को का सही पुट था [13]। "

अब हम लेते है गुटनिरपेक्ष आदोलन निरस्त्रीकरण तथा आर्थिक मामलो मे राजीव गाधी की भूमिका को अनेक राष्ट्रो की उपनिवेशवाद से मुक्ति होने पर भारत की गुटनिरपेक्ष नीति को बडे पैमाने पर स्वीकृति मिली। पहला गुटनिरपेक्ष सम्मेलन १९६१ मे बेलग्राद मे हुआ, जिसमे २५ देशो ने भाग लिया था। बेलग्राद शाति घोषणा की काफी अधिक प्रतिक्रिया हुई। इस सम्मेलन मे गुटनिरपेक्ष देशो के बीच समय समय पर होने वाले विचारो के आदान-प्रदान और विचार-विमर्श की उपादेयता को सिद्ध कर दिया । इसके बाद अन्य और देश भी गुटनिरपेक्ष आदोलन मे सम्मिलित हुए है और इसकी वर्तमान सख्या १०० तक पहुच गयी है। इसके अतिरिक्त कुछ दर्जन देश पर्यवेक्षक और अतिथि के रूप मे भी सम्बद्ध है। सदस्य सख्या मे वृद्धि होने के बावजूद इस आदोलन ने शाति, निरस्त्रीकरण, विकास और स्वतत्रता के पक्ष मे अपना मूल स्वर बनाए रखा है। कुछ मामूली मतभेदो के बावजूद गुटनिरपेक्ष राष्ट्रो के बीच एकता और आदोलन

को व्यापक समर्थन और स्वीकृति प्राप्त हुई है। गुटनिरपेक्ष आदोलन मे भारत की भूमिका का अनुमान इसी बात से लगाया जा सकता है कि मार्च १९८३ मे गुटनिरपेक्ष शिखर सम्मेलन का आयोजन नई दिल्ली मे किया गया और भारत को इसका अध्यक्ष चुना गया । सितम्बर, १९८६ मे जिम्बाब्वे को गुटनिरपेक्ष आदोलन की अध्यक्षता सौप दिए जाने के बाद भी आदोलन मे भारत की भूमिका और गतिविधियो ने अपने लिए ऊचा स्थान रखा है। भारत ने गुटनिरपेक्ष आदोलन के भीतर के प्रमुख अतर्राष्ट्रीय मुद्दो पर जनमत बनाए रखने के अपने प्रयास जारी रखे और इसने अन्य गुट निरपेक्ष देशो के निकट सहयोग से कार्य किया। इसने कोनट्राडोरा प्रक्रिया के लिए आदोलन और ग्वाटेमाला सधि मे उल्लिखित क्षेत्रीय शाति की पहल के प्रति अपनी एकजुटता और समर्थन व्यक्त किया[14] । भारत ने आदोलन द्वारा विश्व के आर्थिक मुददो विशेषकर गुटनिरपेक्ष और अन्य विकासशील देशो से सबधित मुददो के सबध मे सक्रिय भूमिका निभाने पर जोर दिया है ताकि बहुआयामी आर्थिक सहयोग के सबध मे उनकी स्थिति सुदृढ हो सके।

जहा तक निरस्त्रीकरण का सबध है भारत ने समय-समय पर परमाणु हथियारो का कडा विरोध किया और पूर्ण निरस्त्रीकरण का समर्थन किया है। भारत परमाणु ऊर्जा के शाति पूर्ण उपयोग के लिए भी पूरी तरह प्रतिबद्ध है, लेकिन वह उन प्रयासो या उपायो का विरोध करता है जो परमाणु ऊर्जा के शातिपूर्ण उपयोग के बारे मे

भारत के कार्यक्रम के आडे आते है। भारत ने विशेष रूप से अमरीका और सोवियत सघ के बीच परमाणु हथियारो मे कमी करने के लिए जेनेवा वार्ता शुरू करने का स्वागत किया क्योकि निरस्त्रीकरण के लिए कारगर कदम उठाने की प्रमुख जिम्मेदारी परमाणु शक्तिओ की है। प्रधानमत्री राजीव गाधी ने न्यूयार्क मे सयुक्त राष्ट्र की स्थापना की ४०वी वर्षगॉठ के अवसर पर अधिवेशन को सम्बोधित करते हुए कहा था कि परमाणु सैनिकवाद के पागलपन से दुनिया को मुक्त करने की आवश्यकता है। मनुष्य को अपनी सृजन क्षमता का प्रयोग विनाश के लिए नही बल्कि सबर्धन के लिए करना चाहिए। उन्होने जनवरी १९८५ मे छह राष्ट्रो के शिखर सम्मेलन मे जारी दिल्ली घोषणा के उद्देश्यो को फिर दोहराया। इस शिखर सम्मेलन मे अर्जेन्टीना, ग्रीस भारत मैक्सिको स्वीडन और तजानिया के नेताओ ने सभी तरह के परमाणु परीक्षणो पर १२ महीने की रोक लगाने का अनुरोध किया था तथा इस बारे मे जॉच प्रक्रिया के लिए सुविधाओ का प्रस्ताव किया था। छह राष्ट्रो के इन नेताओ की बैठक मैक्सिको मे छह अगस्त १९८६ को फिर हुई। सभी तरह के परमाणु परीक्षणो पर रोक लगाने की आवश्यकता पर जोर देते हुए इन नेताओ ने परमाणु हथियार सम्पन्न महाशक्तियो से अनुरोध किया कि वे परमाणु परीक्षणो पर रोक लगाने और इसके लिए समुचित परमाणु प्रबध के लिए ठोस प्रस्ताव रखे[15]।

सितम्बर १९८६ मे हरारे मे गुटनिरपेक्ष देशो के राष्ट्राध्यक्षो का

आठवॉ शिखर सम्मेलन हुआ जिसमे निरस्त्रीकरण के लिए गुटनिरपेक्ष आदोलन की वचनबद्धता को पुन दुहराया गया और दोनो महाशक्तियो से अनुरोध किया गया कि वे परमाणु युद्ध को छिडने से रोकने के लिए तुरन्त कारगर कदम उठाए । भारत ने तीन मुख्य बहुपक्षीय निरस्त्रीकरण मचो अर्थात- निरस्त्रीकरण सम्मेलन, सयुक्त राष्ट्र निरस्त्रीकरण आयोग और सयुक्त राष्ट्र जनरल असेम्बली की पहली समिति मे प्रमुख भूमिका निभाई । ऐसा भारत की इस अडिग आस्था के अनुरूप किया गया कि इस आणविक युग मे निरस्त्रीकरण केवल शाति के लिए ही नही बल्कि मानव जाति के अस्तित्व के लिए भी आवश्यक है[16] । भारत ने बहुपक्षीय दबाव की वैधता पर यह दोहराते हुए जोर दिया कि परमाणविक निवारण के माध्यम एकपक्षीय सुरक्षा की खोज के स्थान पर परमाणु निरस्त्रीकरण के जरिए विश्व सुरक्षा की खोज की जाए।

परमाणविक और सामान्य निरस्त्रीकरण के जेहाद मे भारत ने छह-राष्ट्रीय पहल के पाच अन्य देशो के साथ २२ जनवरी १९८८ को सोवियत सघ और अमरीका के बीच आई एन एफ सधि का स्वागत किया और इसे ऐतिहासिक कदम बताया[17]। उनकी स्टाकहोम घोषणा मे वार्ता पुन आरम्भ होने का स्वागत किया गया और इनकी जाच तथा इस क्षेत्र मे समझौतो की माग की गई।

नौ जून १९८८ को निरस्त्रीकरण पर सयुक्त राष्ट्र महासभा के तीसरे विशेष सत्र को सम्बोधित करते हुए तत्कालीन प्रधानमन्त्री

राजीव गाधी ने सयुक्त राष्ट्र को एक कार्य योजना आरम्भ करने के लिए कहा था जिससे सभी मौजूदा परमाणु शक्तियो वाले देशो द्वारा २०१० ई तक विश्व के सभी परमाणविक हथियार समाप्त कर दिए जाए[18]। उन्होने प्रस्ताव किया कि यह कार्य योजना तीन चरणो मे परिचालित की जाए जिसके परिणामस्वरूप न केवल परमाणविक खतरे समाप्त हो सकेगे बल्कि एक नई सयुक्त राष्ट्र गहन विश्व सुरक्षा प्रणाली स्थापित होगी, जिससे एक नया न्यायपूर्ण समाज और समरूपी विश्व नियम सुनिश्चित किया जा सकेगा[19]। प्रधानमन्त्री के विस्तृत प्रस्ताव मे शताब्दी के अत तक एक एकल बहुपक्षी सत्यापन प्रणाली की स्थापना की माग की गई ताकि यह सुनिश्चत किया जा सके कि विश्व मे कही भी नए परमाणविक हथियार नही बनाए जा रहे है। उन्होने राष्ट्रपति रीगन के प्रस्तावित विशेष प्रतिरक्षा पहल का उल्लेख करते हुए यह घोषणा की- परमाणविक दौड को ऐसी कार्रवाई के सबध मे विलम्बन सधि के बिना समाप्त नही किया जा सकता अथवा रोका नही जा सकता।

अब हम लेते है आर्थिक मामले और राजीव गाधी द्वारा उनको निबटाने के प्रयासो को हाल के वर्षो मे मामूली से विस्तार के साथ विश्व-अर्थव्यवस्था सकट के कगार पर है। उत्पादकता मे कमी इसी से स्पष्ट है कि उत्पादन की दर १९८५ मे ३ प्रतिशत से घटकर २ ८ प्रतिशत रह गई। व्यापार १९८६ मे चार प्रतिशत उत्पादकता पर ही चलता रहा, वस्तुओ के मूल्यो मे और कमी आई

विकासशील देशो के नए ऋण घट गए और ऋण अदायगी और भी कठिन हो गई। हाल के आकडो से पता चलता है कि विकासशील देशो का कुल ऋण १९८६ के अत तक १ १ ट्रिलीयन अमरीकी डालर हो गया है।

विकासशील देशो को पूजी उपलब्धता मे जारी रूकावट के फलस्वरूप वित्तीय वर्ष १९८६ मे लगभग कुल ३००० करोड अमरीकी डालर मूल्य के ससाधनो का दक्षिण से उत्तर को शुद्ध अतरण हुआ। सरकारी विकास सहायता अतर्राष्ट्रीय रूप से सहमत स्तर ० ७ प्रतिशत के आधे से भी कम रही। कई विकासशील देशो की प्रति व्यक्ति आय मे कमी हुई और सामूहिक रूप से विकासशील देशो की सकल स्थानीय उत्पादन १९८५ मे ४ २ प्रतिशत से घटकर १९८६ मे ३ ६ प्रतिशत हो गई। सरक्षणवाद निरन्तर बढता ही रहा है। हालाकि सरकारो ने बार-बार घोषणाए और बहुपक्षीय व्यापार वार्ताए के नए दौर शुरू करने की सधिया की है। अमीर और गरीब देशो के बीच परस्पर निर्भरता को अब अधिक मान्यता मिल रही है और इसके बढने के प्रमाण भी है। तथापि विकासित देशो के बीच परस्पर विकास धीमा हुआ है।

नई दिल्ली और हरारे मे हुए सातवे और आठवे गुटनिरपेक्ष शिखर सम्मेलनो मे बहुपक्षीय सहयोग के माध्यम से उत्पादकता और विकास के प्रति एक ठोस और व्यावहारिक दृष्टिकोण और विकास के प्रति बहपेक्षावाद से खिचाव रोकने का प्रस्ताव किया गया था।

साथ ही इनमे नए अतर्राष्ट्रीय आर्थिक सहयोग की प्राप्ति के लिए दीर्घकालीन सरचनात्मक सुधारो का भी प्रस्ताव किया गया। मुद्रा वित्त ऋण, व्यापार प्रौद्योगिकी तथा विकास की अतर्राष्ट्रीय और अतर्सम्बधी प्रणालियो मे सुधार आवश्यक है। प्रमुख औद्योगिक देशो की मैक्रो-एकानामिक नीतियो के विश्व अर्थव्यवस्था मे माग मे वृद्धि करने तथा उत्पादकता को बढाने के उदेश्य से सामजस्य स्थापित करने और सहयोग करने की आवश्यकता है। अक्टूबर १९८७ के राष्ट्रमडल शिखर सम्मेलन मे विश्व व्यापार पर की गई घोषणा को अपनाया गया जिसमे यह उल्लेख किया गया कि नई बहुपक्षीय व्यापार वार्ताओ मे विकासशील देशो पर विशेष रूप से विचार किया जाए।

भारत ने विज्ञान एव प्रौद्योगिकी की नई खोजो को अनुकूल बनाने और विकसित करने की दक्षिण की क्षमताए बढाने मे सुविधा प्रदान करने के उदेश्य से नई दिल्ली मे हुए गुटनिरपेक्ष एव आगे होने वाले ग्रुप-७७ सम्मेलनो के माध्यम से पहल की है। भारत ने शाति को बढावा देने एव जीवन-स्तर बेहतर बनाने के लिए, विशेषकर विकासशील देशो के लिए, इन वैज्ञानिक और प्रौद्योगिकीय विकास कार्यो के परिणामो का लाभ उठाने हेतु अतर्राष्ट्रीय स्तर पर बटवारो की नई प्रक्रिया आरम्भ करने के लिए सयुक्त राष्ट्र मे पहल की। विज्ञान और प्रौद्योगिकी के लिए सयुक्त राष्ट्र अतर्राष्ट्रीय समिति के अगस्त, १९८७ मे हुए नार्वे सत्र मे भारतीय पहल पर आम सहमति

द्वारा एक प्रस्ताव पारित किया गया जिसमे अनुसधान सूचना एव प्रशिक्षण प्रौद्यौगिकी पूर्व सूचना और नए तथा अविषयगत विज्ञान एव प्रौद्योगिकी नेस्ट के आकलन के आपसी विकास और सहयोग के लिए कार्यकमो परियोजनाओ की माग की गई थी [20]।

सामूहिक आत्म निर्भरता और आर्थिक स्वतत्रता की प्राप्ति और विश्व अर्थव्यवस्था तथा एक नए अतर्राष्ट्रीय आर्थक सहयोग की स्थापना के प्रयासो के एक महत्वपूर्ण भाग के रूप मे अतर्राष्ट्रीय आर्थिक सबधो मे विकासशील देशो की भूमिका बढाने के लिए उनमे आपसी सहयोग, गुटनिरपेक्ष आदोलन एव ग्रुप-७७ का एक प्रमुख उदेश्य बन गया है। विकास कार्यो के लिए दक्षिण के एक स्वतत्र आयोग की स्थापना से महत्वपूर्ण आर्थिक विषयो पर लाभदायी निवेश प्राप्त हो सकता है। इस आयोग ने दो से पाच अक्टूबर १९८७ तक अपनी पहली बैठक मे औपचारिक रूप से अपना कार्यारम्भ कर दिया है[21] ।

विकासशील देशो के आपसी सहयोग से सबधित सभी मुददो और प्रतिविधियो की समीक्षा करने के लिए जून १९८७ मे गुटनिरपेक्ष मत्रियो की बैठक प्यागयोग मे हुई। बैठक के परिणामो के महत्वपूर्ण पहलुओ मे प्रमुख नई दिल्ली मे गुटनिरपेक्ष विज्ञान और प्रौद्योगिकी केन्द्र आरम्भ किए जाने का निर्णय और भारत द्वारा नई एव उच्च वैज्ञानिक तथा प्रौद्योगिकी के लिए की गई पहल का सत्यापन और उसका स्वागत।

विकासशील देशो मे आपसी सहयोग की भावना मे अफ्रीका एशिया और लैटिन अमेरिकी देशो मे विश्व के अन्य विकासशील देशो के साथ सहयोग बढाने के प्रति भारत की कटिबद्धता को विदेश मन्त्रालय द्वारा चलाई जा रही भारतीय तकनीकी एव आर्थक सहयोग के अतर्गत सहायता की द्विपक्षीय योजना मे अभिव्यक्ति मिली। सहायता के इस द्विपक्षीय कार्यक्रम से अन्य बहुपक्षीय योजनाओ जैसे किक कोलम्बो योजना और विशेष राष्ट्रमडल अफ्रीकी सहायता कार्यक्रमो की अनुपूर्ति हुई है। सन १९६४ मे आरम्भ किए गये आइटेक कार्यक्रम मे जो कि निरन्तर वर्षानुकुल फैला है अब अफ्रीका एशिया और लैटिन अमरीका के ७० से अधिक देश शामिल है और इसका बजट परिव्यय २० करोड रूपये से अधिक हो गया है।

भारत की महत्वपूर्ण भूमिका के परिणामस्वरूप ही, सयुक्त राष्ट्र महासभा के ४३वे अधिवेशन से पूर्व हुई ७७ के समूह और गुटनिरपेक्ष देशो की मत्री स्तरीय बैठको मे घोषणाए पारित की जा सकी। दूसरी समिति मे मुख्यत बाहरी ऋण सकट एव सम्बद्ध मसलो पर्यावरण सबधी मामलो और ७७ के समूह के इस प्रस्ताव पर चर्चा हुई कि विकासशील देशो मे उत्पादन और विकास को पुन सक्रिय किए जाने के लिए महासभा का एक विशेष अधिवेशन बुलाया जाए। खेद की बात है कि ऋण सबधी सकल्प पर लगातार दूसरे वर्ष, सयुक्त राज्य अमेरिका ने विरोधी वोट डाला, जबकि जापान ने इसमे भाग नही लिया। भारत ने पर्यावरण सबधी सकल्प

पर जनमत तैयार करने मे एक सक्रिय भूमिका निभाई। इस वर्ष की एक प्रमुख उपलब्धि प्रदूषण रोकने के लिए विकसित देशो की मुख्य जिम्मेदारी पर समझौता करा लेना था[22]।

भारत १९८८ के दौरान एकासोक सगठन का सदस्य था और उसने दूसरे नियमित सत्र मे सक्रिय भूमिका निभाई। पर्यावरण के क्षेत्र मे दूसरे नियमित सत्र मे ७७ के समूह द्वारा महत्वपूर्ण पहल की गई। इनमे ससाधनो की अतिरिक्तता और तकनीकी सहयोग मे वृद्धि पर्यावरण निधि को सुदृढ करने, जहरीले उत्पादो और कचरे के लेन-देन तथा परमाणविक कचरे को एकत्रित कर समाप्त करने से सबधित सकल्प शामिल थे। ७७ के समूह ने स्वय परिषद को पुनर्जीर्वित करने के सकल्प के सबध मे बातचीत की पहल की। सयुक्त राज्य अमेरिका द्वारा प्रस्तुत उद्यम सबधी सकल्प मे सावर्जनिक क्षेत्र सहित राष्ट्रीय उद्यमियो को प्रतिबिम्बित करने और रोजगार के अवसर पैदा करने तथा प्रौद्योगिकी प्राप्त करने मे उद्यमियो की भूमिका जैसे सशोधन लाने के लिए भारत की भूमिका की सभी प्रतिनिधियो द्वारा प्रशसा की गई।

अक्टूबर १९८८ मे भारत ने नई दिल्ली मे नवीन और उच्च प्रौद्योगिकी पर गुटनिरपेक्ष एव विकासशील देशो के विशेषज्ञो के पहले अर्तशासकीय सलाहकार सम्मेलन की मेजबानी की। यह सहयोग का एक और नया उभरता हुआ क्षेत्र है।इस बैठक मे २० विकासशील देशो के विशेषज्ञो ने भाग लिया। सम्मेलन के पाच मुख्य

क्षेत्रो मे से प्रत्येक के लिए सहयोग के कार्यक्रम निर्धारित किए गए[23]।

जहा तक आठवे गुट निरपेक्ष शिखर सम्मेलन का प्रश्न है पूर्व प्रधानमत्रियो द्वारा गुट निरपेक्षता की दिशा मे किये गये प्रयासो को गति प्रदान करने के लिए श्री राजीव गाधी ने आठवे गुट निरपेक्ष शिखर सम्मेलन मे बलपूर्वक इसकी वकालत की । इस बावत उन्होने लिखा-“मै १-७ सितम्बर तक हरारे मे आयोजित गुट-निरपेक्ष देशो के आठवे शिखर सम्मेलन मे शामिल हुआ। यह एक अविस्मरणीय और ऐतिहासिक अवसर था। आन्दोलन की इस २५ वी वर्षगाठ के अवसर पर एक विशेष स्मारक अधिवेशन का आयोजन किया गया था जिसमे विश्व शान्ति मे गुट-निरपेक्ष आन्दोलन के महत्वपूर्ण योगदान का स्मरण किया गया तथा इसके पितामह नेहरू टीटो सुकर्ण एनक्रुमा तथा नासिर द्वारा प्रतिपादित सिद्धान्तो और लक्ष्यो की सतत वैधता की पुन पुष्टि की गई[24]।”

इस शिखर सम्मेलन मे आन्दोलन की भूतपूर्व अध्यक्षा श्रीमती इन्दिरा गाधी के प्रति भाव-भीनी श्रद्धाजलि अर्पित की गई। इस आन्दोलन की एकता, दृढता और एकजुटता को और अधिक मजबूत करने की दिशा मे आदोलन के अध्यक्ष की हैसियत से भारत की भूमिका की भूरि-भूरि प्रशसा की गई। हमारे नेतृत्व मे इस आन्दोलन को आन्तरिक तौर पर समरसता और स्थायित्व प्राप्त हुआ है और बाहरी तौर पर दृढता एव सक्रियता। अपने स्वरूप मे अनेकता

और विविधिता किन्तु स्वतन्त्रता शान्ति एव न्याय के प्रति समान प्रतिबद्धता लिए हुए यह आन्दोलन अपने सिद्धान्तो पर सदैव अडिग रहा है।

विश्व पटल पर विभिन्न समस्याओ पर चर्चा करने और समाधान हेतु आयोजित इस शिखर सम्मेलन मे श्री राजीव गाधी ने कहा- "हरारे मे इस आन्दोलन की अध्यक्षता का दायित्व हमने जिम्बाबे के हाथो सौप दिया। इस शिखर सम्मेलन मे आज के युग के तीन सर्वाधिक महत्वपूर्ण और आधारभूत प्रश्नो पर विचार-विमर्श केन्द्रित रहा। ये प्रश्न थे दक्षिण अफ्रीका मे मानवाधिकार नामीबिया की स्वतन्त्रता तथा नाभिकीय विनाश के निरन्तर खतरे से मुक्त होकर एक स्वतन्त्र ससार मे सास लेने का समूची मानवता का अधिकार [25]।"

इस सम्मेलन मे दक्षिण अफ्रीका पर एक विशेष घोषणा स्वीकार की गई तथा आक्रमण उपनिवेशवाद तथा जातीयता रगभेद को रोकने की कार्यवाही के निमित्त एक निधि की स्थापना की गई जिसे अफ्रीका कोष की सज्ञा दी गई है। इस अफ्रीका कोष समिति का अध्यक्ष भारत है और उपाध्यक्ष जाम्बिया। इस कोष की स्थापना हमारे आन्दोलन के इस सकल्प को परिलक्षित करती है कि हम फ्रटलाइन देशो के अपने भाईयो के साथ तथा दक्षिणी अफ्रीका के मुक्ति आन्दोलनो के साथ अपनी एकजुटता को ठोस रूप देना चाहते है। जातीय रगभेद से जूझने, जातिवादी प्रीटोरिया सरकार के विरूद्ध

प्रतिबन्ध लगाने और सरकार की ओर प्रतिक्रिया स्वरूप की गई कार्रवाइयो से निपटने मे उनकी सामर्थ्य को सुदृढ करने के इरादे से हमने फ्रटलाइन देशो के साथ गहन विचार-विमर्श किया।

श्री राजीव गाधी ने आशा व्यक्त की इस महीने के आखिर मे लुसाका मे इस कोष समिति के वरिष्ठ अधिकारियो की एक बैठक होगी। कोष समिति के सदस्य देशो के राज्याध्यक्षो के शिखर सम्मेलन से पूर्व एक मन्त्री स्तरीय बैठक होगी जिसका आयोजन सम्भवत दिल्ली मे किया जाएगा। मुझे पूरी उम्मीद है कि इस कोष को न सिर्फ गुट निरपेक्ष आन्दोलन के सदस्य तथा गैर सदस्य सरकारो से पूर्ण समर्थन प्राप्त होगा बल्कि उन सभी सासदो स्वैच्छिक सगठनो और व्यक्तियो से भी पूर्ण समर्थन प्राप्त होगा जो दक्षिण अफ्रीका मे सभ्यता के बुनियादी मानदण्डो के उल्लघन से तथा प्रीटीरिया की ओर से आने वाले शान्ति के प्रति खतरे से गम्भीर रूप से चितित है[26] ।

इस आन्दोलन ने फिलिस्तीनियो के हित साधन के प्रति अपना दृढ समर्थन दोहराया तथा गुट-निरपेक्ष देशो की आजादी उनकी स्वाधीनता और प्रभुसत्ता की रक्षा के प्रति अपना सकल्प व्यक्त किया जिन्हे विदेशी दखलन्दाजी की ओर से खतरा है।

हरारे मे निरस्त्रीकरण के सबध मे जो अपील सहर्ष स्वीकार की गई वह शान्ति तथा निरत्रीकरण के प्रति इस आन्दोलन की प्रतिबद्धता को तथा मानवीय अस्तित्व को बढते हुए खतरे के प्रति

हमारी चिन्ता को परिलक्षित करती है। इस अपील मे अमरीका और सोवियत सघ से यह अनुरोध किया गया है कि नाभिकीय युद्ध को भडकने से रोकने के लिए वे तत्काल कदम उठाए तथा एक व्यापक परीक्षण प्रतिबन्ध सन्धि की दिशा मे प्रथम चरण के रूप मे नाभिकीय परीक्षणो पर एक निश्चित अवधि तक प्रतिबन्ध लगा दे। शिखर सम्मेलन मे शान्ति एव निरस्त्रीकरण की दिशा मे छह राष्ट्र पाच महाद्वीपो की पहलकदमी का समर्थन किया गया जिसकी शुरूआत दिल्ली मे की गई थी।

आर्थिक स्थिति के बारे मे राजीव गाधी ने कहा- "विगत कुछ वर्षो मे विश्व की आर्थक स्थिति कुछ और अधिक बिगडी है। हमारे देश मे आर्थिक सहयोग के लिए एक सक्रिय कार्यक्रम भी स्वीकार किया गया तथा सार्वभौम तथा आर्थिक मसलो पर की जाने वाली कार्यवाही मे एकरूपता तथा तालमेल स्थापित करने के लिए एक समिति भी गठित की गई। एक राजनैतिक घोषणा मे आज की दुनिया के सामने पेश अधिकाश कठिन मुददो पर आन्दोलन की एक राय लक्षित है।"

उनका दृढ मत था कि इस शिखर सम्मेलन ने एक नई दिशा प्रदान की थी। इस आन्दोलन की स्थापना की २५वी वर्षगाठ के अवसर पर इस शिखर सम्मेलन का आयोजन किया गया था। इस अवसर पर हमने आन्दोलन मे अपनी आस्था की पुन पुष्टि की तथा शाति, निरस्त्रीकरण और विकास के लिए एकजुट हुए विश्व समुदाय

की अपनी परिकल्पना मे अपनी आस्था की भी पुन पुष्टि की। हम प्रधानमन्त्री मुगाबे की सफलता की कामना करते है कि वह अपने समक्ष आने वाली चुनौतियो का सामना कर सके तथा उन्हे अपना पूर्ण समर्थन और सहयोग देने का वचन देते है।

उन्होने खुशी जाहिर की कि हरारे शिखर सम्मेलन के दौरान मुझे अनेक नेताओ के साथ मिलने का सुअवसर मिला तथा उनसे अपनी मित्रता ताजा करने का भी जिनसे पहले मिलने का सौभाग्य प्राप्त हो चुका था। हमे विभिन्न अन्तर्राष्ट्रीय मसलो पर तथा बहुत से देशो के साथ अपने द्विपक्षीय सम्बन्ध सुदृढ करने के सबध मे अत्यन्त लाभप्रद विचार-विमर्श करने का मौका मिला।

अब हम आते है राजीव गाधी और राष्ट्रमडल पर । ब्रिटिश राष्ट्रमडल को वर्तमान रूप देने मे भारत ने महत्वपूर्ण भूमिका निभाई है । भारत ने हाल मे स्वाधीनता प्राप्त देशो को सीधे और राष्ट्रमडल जैसे सगठनो के माध्यम से सहायता देकर वहॉ स्थिरता और प्रगति को बढावा देने मे रूचि दिखाई । राष्ट्रमडल से बर्मा के अलग हो जाने के बाद, उसे राष्ट्रमडल कार्यक्रम के महत ६०,००,००० पौड की सहायता देने का एक अभूतपूर्व मामला विचाराधीन था । फिर भी भारत ने बर्मा की स्वतत्रता के लिए उसे ऐसी सहायता देने के वास्ते अन्य सदस्य देशो से अनुरोध किया । इस पहल से बाद मे कोलम्बो योजना बनाने मे मदद मिली। इस योजना ने इस क्षेत्र के आर्थिक विकास मे महत्वपूर्ण भूमिका निभाई है।

राष्ट्रमडल और इसके साथ-साथ विश्व मे भारत की भूमिका के फलस्वरूप नई दिल्ली मे २३ नवम्बर से २९ नवम्बर १९८३ तक राष्ट्रमडल के सदस्य देशो के शासनाध्यक्षो की अब तक की सबसे बडी बैठक भी हुई। इस शिखर सम्मेलन मे जारी अतिम दस्तावेजो मे शाति और विकास से सबन्धित मामलो के बारे मे दृष्टिकोण की एकता प्रकट हुई । बाद मे नासो (NASO) मे १६ नवम्बर से २२ नवम्बर १९८५ तक राष्ट्रमडल सदस्य देशो के शासनाध्यक्षो के सम्मेलन मे प्रधानमत्री राजीव गाधी ने प्रमुख भाषण दिया उन्ही के सुझाव पर विश्व व्यस्वथा पर घोषणा का प्रस्ताव स्वीकार किया गया[27]।

भारत ने १९८६ मे ३ से ५ अगस्त तक लदन मे राष्ट्रमडल नेताओ की समीक्षा बैठक दक्षिणी अफ्रीका के बारे मे नासो समझौते के अनुसार की गयी थी। इस बैठक मे आस्ट्रेलिया बहामास, कनाडा भारत जिम्बाबे और जाम्बिया के नेता इस बात पर सहमत हुए कि दक्षिण अफ्रीकी सरकार पर दबाव डालने के लिए जो उपाय सुझाए गए है उनके अतिरिक्त कुछ चुने हुए क्षेत्रो मे प्रतिबध तुरत लगाए जाए जिससे कि उस पर दबाव और बढाया जा सके।

२ विश्व की गतिविधियो मे राष्ट्रमडल की भूमिका पर राजीव गाधी के विचार निम्न थे-

बैकूवर मे राष्ट्रमण्डल शिखर सम्मेलन के लिए जाते समय प्रधानमत्री नाकासोनी के साथ विचार विमर्श करने के लिए मै १२

अक्तूबर को थोडी देर के लिए टोकियो मे रूका था। हमने आपसी हित के मामलो पर चर्चा की। उन्होने २० करोड डालर के बराबर राशि का एक आसान और बिना शर्त जापानी ऋण देने की घोषणा की। प्रधानमन्त्री ने कहा कि जापान भारत-श्रीलका समझौते का समर्थन करता है [28] ।

राष्ट्रमण्डल शिखर सम्मेलन १३-१७ अक्तूबर को वेकूवर मे सम्पन्न हुआ। वेकूवर शिखर सम्मेलन बढते हुए इस तरह के अनुमानो के बीच आरम्भ हुआ कि राष्ट्रमण्डल दक्षिणी अफ्रीका मे जातीय रगभेद के विरूद्ध अपने अभियान मे पीछे रह गया है। यह बात गलत साबित हुई। ब्रिटेन को छोडकर राष्ट्रमण्डल के सभी देश इस बात के प्रति सहमत थे कि प्रतिबन्धो का इच्छित प्रभाव पडना शुरू हो गया है। अत हमने दबाव को और तेज करने और प्रतिबधो के क्षेत्र के विस्तार करने का फैसला किया। हमने राष्ट्रमण्डल के प्रतिबन्धो से सबधित कार्यक्रम को व्यापक रूप से अन्तर्राष्ट्रीय स्वीकृति दिलाने और बेहतर ढग से क्रियान्वित करने के लिए काम करने की प्रतिज्ञा ली[29]।

श्री गाधी का विचार था- "अनेक नये सुझाव, जिनमे हमारे सुझाव भी शामिल थे, स्वीकार किये गये। हम निरन्तरता के आधार पर प्रतिबधो के प्रभाव का मूल्याकन करने पर सहमत हुए। हम इस बात पर भी सहमत हुए कि इन प्रतिबधो को निष्क्रिय करने के किसी प्रयास का पता लगाया जाए और इसे प्रकाश मे लाया जाए। इस

बात पर सहमत हुए कि प्रीटोरिया जातीय रगभेदवादी शासन के लिए अन्तर्राष्ट्रीय वित्त प्रणाली के साथ प्रीटोरिया के सबधो के निहितार्थो का अध्ययन करने के लिए विशेषज्ञ अध्ययन दल की आवश्यकता पर विचार किया जाना चाहिए। भावी स्थिति के अनुसार हम आगे कार्रवाई करेगे जिसमे और अधिक प्रतिबन्ध लगाए जाने भी शामिल है। दक्षिण अफ्रीका पर प्रतिबन्धो से सबधित कार्रवाई कार्यक्रम को केवल ब्रिटेन को छोड़कर राष्ट्रमण्डल के अन्य सभी देशो ने स्वीकार किया है[30]।"

हम सबने फ्रटलाइन देशो को राष्ट्रमण्डल की समन्वित सहायता के लिए कार्यक्रम प्रस्तुत किए। मोजाम्बिक को तकनीकी सहायता प्रदान करने के लिए एक विशेष कोष की स्थापना की गई। रगभेद के शिकार और उसके विरोधियो को दी जाने वाली राष्ट्रमण्डल की सहायता मे वृद्धि की जाएगी। हम इस बात के लिए सहमत हुए कि दक्षिण अफ्रीका मे सेन्सरशिप हटाने के लिए किए जा रहे प्रयासो को उच्च प्राथमिकता दी जाए क्योकि यह ऐसी सेन्सरशिप है जो दुनिया के लोगो से दक्षिणी अफ्रीका के बारे मे सच्चाई को छुपाती है। इन उद्देश्यो की उपलब्धि के लिए तेज गति और मार्ग-निर्देश देने के लिए शिखर सम्मेलन ने विदेश मत्रियो की एक आठ सदस्यीय समिति का गठन किया समिति की अध्यक्षता कनाडा द्वारा की जाएगी और इसमे भारत को शामिल किया गया है। वेकूवर मे फिजी की घटनाओं की प्रमुख रूप से चर्चा हुई। अधिवेशन

के उदघाटन वक्तव्य मे मैने उस देश मे हाल मे घटी घटनाओ के कारणो मे निहित जातीय स्वरूप और लोकतत्र को कम महत्व दिए जाने के बारे मे अपनी गहरी चिन्ता व्यक्त की। फिजी राष्ट्रमण्डल का सदस्य नही रहा। शिखर सम्मेलन मे यह निर्णय लिया गया कि राष्ट्रमण्डल मे फिजी के पुन प्रवेश पर तभी विचार किया जाएगा जबकि परिस्थितियो को देखते हुए इसकी आवश्यकता समझी जाए। साथ ही इस सन्दर्भ मे इस बात को भी ध्यान मे रखा जाएगा कि इस पुन प्रवेश का आधार उन बुनियादी सिद्धान्तो के अनुरूप हो जो इस सगठन के दिशा निर्देश रहे है। हम इस बात पर भी सहमत हुए कि राष्ट्रमण्डल फिजी की समस्याओ के निराकरण मे सहयोग करने के लिए सदा तत्पर रहेगा।

वेकूवर मे जारी की गई राष्ट्रमण्डल विज्ञप्ति मे भारत-श्रीलका समझौते का जोरदार समर्थन किया गया है। इस समझौते को सर्वोच्च राजनेतृत्व की कार्रवाई कहा गया है। शिखर-सम्मेलन की एक महत्वपूर्ण उपलब्धि थी विश्व व्यापार पर वेकूवर घोषणा जिसके अन्तर्गत सभी महाद्वीपो के विकसित और विकासशील देशो के प्रतिनिधियो को एक मच पर इकटठा करने की व्यवस्था है। इस घोषणा मे विश्व मे बढते हुए सरक्षणवाद की प्रथा के प्रति अपनी चिन्ता व्यक्त की गई है और सरक्षणवादी उपायो के स्टेण्ड स्टिल और रोल बैक पर पुण्टा-डेल-एस्टेट वचनबद्धताओ को पूरा सम्मान दिए जाने की माग की गई है। इस घोषणा मे यह स्वीकार किया

गया है कि अन्तर्राष्ट्रीय व्यापार के क्षेत्र मे विकासशील देशो की स्थिति अलाभकारी है और इस असमानता को देखते हुए उरूग्वे व्यापार वार्ता मे इनके हितो पर विशेष ध्यान दिया जाना चाहिए।

हमने सुदूर शिक्षा अर्थात ज्ञान को अनौपचारिक शिक्षा प्रणाली के माध्यम से अधिकाश लोगो तक पहुचाने के लिए नई सचार प्रौद्योगिकियो के प्रयोग को प्रोत्साहित करने के लिए राष्ट्रमण्डल कार्यक्रम शुरू किया। भारत इस पहल मे और इससे लाभ उठाने मे भी पर्याप्त रूप से सक्षम है।

उनका स्पष्ट मत था कि राष्ट्रमण्डल मे प्रतिनिधित्व प्राप्त प्रभुसत्ता सम्पन्न सरकारो के भिन्न-भिन्न दृष्टिकोणो की परिधि मे बैकूवर शिखर सम्मेलन मे हुई सहमतियो मे अन्तर्राष्ट्रीय मामलो मे इस सगठन की सक्रियता और उपयोगिता की पुष्टि की गई। प्रतिबधो के सवाल पर एक विपरीत मत की चिन्ता न करते हुए इस शिखर सम्मेलन ने विश्व मे शाति और स्थिरता के मुख्य मसलो के बारे मे विश्व मत के अधिकाश भाग को एक साथ मिला दिया। कनाडा की सरकार ने इस सम्मेलन के लिए जिस उल्लेखनीय सावधानी के साथ प्रबध किए उनकी मै सराहना करना चाहूँगा। इस सम्मेलन को सफल बनाने मे प्रधानमत्री ब्रियान मुलोनी ने जो महत्वपूर्ण और कल्याणपूर्ण भूमिका निभाई है उसकी भी मै सराहना करना चाहूँगा[31]।

जहॉ तक दक्षिण एशियाई क्षेत्रीय सहयोग सगठन (सार्क)

का सबध है भारत ने दक्षिण एशियाई क्षेत्रीय सहयोग सगठन की स्थापना के समय मे ही इसको बढाने मे सक्रिय भूमिका निभाई है। पहली दक्षिण एशियाई शिखर बैठक दिसम्बर १९८५ मे ढाका मे हुई थी जिसमे दक्षिण एशियाई क्षेत्रीय सहयोग सगठन की स्थापना की गई। सार्क का दूसरा शिखर सम्मेलन १५-१७ नवम्बर, १९८६ को बगलूर मे आयोजित किया गया। इस शिखर सम्मेलन मे बगलूर घोषणा सयुक्त प्रेस विज्ञप्ति तथा मत्रिपरिषद के दूसरे अधिवेशन की रिपोर्ट को स्वीकार किया गया। विदेश मत्रियो ने राष्ट्राध्यक्षो अथवा शासनाध्यक्षो की उपस्थिति मे सार्क सचिवालय की स्थापना करने सबधी एक समझौता-ज्ञापन पर हस्ताक्षर किए। सार्क सचिवालय को १६ जनवरी १९८७ को काठमाडू नेपाल मे शुरू किया गया[32]।

भारत ने नवम्बर मे काठमाडू मे आयोजित तीसरे सार्क शिखर सम्मेलन मे सार्क की अध्यक्षता नेपाल को सौप दी। सार्क द्वारा आयोजित लगभग १०० गतिविधियो मे से ४५ की मेजबानी भारत ने की। तीसरी शिखर बैठक मे महत्वपूर्ण निर्णय लिए गए जिनका भविष्य मे सार्क के कार्यो पर प्रभाव पड़ेगा। आतकवाद समाप्त करने के लिए एक क्षेत्रीय समझौते पर हस्ताक्षर किए गए। छह अगस्त १९८८ को भारत ने आतकवाद समाप्ति पर हुए सार्क समझौते की पुष्टि की। एक खाद्य सुरक्षा भण्डार की स्थापना का समझौता हुआ, जिसके अतर्गत आपातकाल मे सदस्य देश खाद्य पदार्थ ले सकेगे। अन्य महत्वपूर्ण निर्णय थे- "पर्यावरण पर एक अध्ययन आरभ

करना सार्क देशो मे व्यक्ति से व्यक्ति के बीच सम्पर्क बढाने के साधनो का विकास करना और योजना के विभन्न पहलुओ का अध्ययन करना। भारत और बगला देश मे क्रमश एक मौसम विज्ञान केन्द्र और एक कृषि सूचना केन्द्र स्थापित करने पर समझौता हुआ।" भारत ने १९८८-८९ मे सार्क कार्यो के लिए १७५ लाख रूपये के अशदान की घोषणा की।

प्रधानमन्त्री राजीव गाधी ने चौथे सार्क शिखर सम्मेलन के सबध मे २९ से ३१ दिसम्बर १९८८ तक इस्लामाबाद की यात्रा की। शिखर सम्मेलन मे १९८८ के दौरान सगठन के कार्यो की पूर्ण समीक्षा की गई। शिखर सम्मेलन मे निम्नलिखित प्रमुख निर्णय लिए गए -

- शिक्षा को सहयोग क्षेत्र मे शामिल किया जाना।
- प्रत्येक सदस्य देश द्वारा शताब्दी के अत तक के लिए प्रमुख हित क्षेत्रो जैसे कि खाद्य, कपडा मकान शिक्षा प्राथमिक चिकित्सा देखभाल जनसख्या नियोजन और पर्यावरण की सुरक्षा के लिए निर्धारित विकास लक्ष्यो की सफलता के आधार पर सार्क २००० आधारभूत आवश्यकता सदर्श नाम की एक क्षेत्रीय सदर्भ योजना तैयार करना।
- मानव ससाधन विकास हेतु एक केन्द्र की स्थापना के एक प्रस्ताव की जाच ।
- समय समय पर दक्षिण एशियाई उत्सव आयोजित किए जाएगे [33]।

श्री राजीव गाधी ने सार्क को मजबूती प्रदान करने की आवश्यकता पर जोर देते हुए कहा- "दक्षिण एशियाई क्षेत्रीय सहयोग एसोशिएशन का दूसरा शिखर सम्मेलन बगलौर मे १६ और १७ नवम्बर को आयोजित हुआ। यह सम्मेलन विश्व के सबसे बडे और अद्यतन क्षेत्रीय एसोसियेशन के विकास का एक स्पष्ट और महत्वपूर्ण पडाव कहा जा सकता है।" कार्तिक-पूणिर्मा और पैगम्बर मोहम्मद और गुरू नानक जयन्ती के पवित्र अवसर पर इसका उद्घाटन हुआ और इसमे ऐसी समस्याओ को जो हम सबकी समस्याए है मिलजुलकर दूर करके मानवमात्र की भलाई करने मे हमारे विश्वास की पुन पुष्टि हुई । बगलादेश के नेतृत्व मे दक्षिण सहयोग सगठन ने अपने अस्तित्व के पहले वर्ष मे विचार के स्तर से आगे बढकर एक मूर्त रूप ग्रहण किया है। अपने नेतृत्व काल मे एक ओर जहा हम पारस्परिक क्रियाकलापो को नई-नई दिशाए देने की और अपने सहयोग को नए आयाम प्रदान करने की कोशिश करेगे वही हमारी यह भी कोशिश होगी कि अब तक हमने जो कुछ प्राप्त किया है, उसकी स्थिति मजबूत करे।

हमने सहयोग के जो क्षेत्र तय किए है उनका हमारे ज्यादातर लोगो के जीवन और उनके कल्याण पर सीधा असर पडता है। इसमे कृषि वन विकास मौसम विज्ञान, प्राकृतिक विपदाओ से बचने का प्रयास, समूचे नारी समाज की उन्नति और बाल जीवन की रक्षा तथा विकास शामिल है। हमने औषधि द्रव्यो का अवैध व्यापार तथा

आतकवाद की दोहरी और अक्सर एक दूसरे से जुडी हुई समस्या का मिलकर मुकाबला करने का भी सकल्प किया है। हमने अपने इस सहयोग को एक सस्थागत रूप देने के उदेश्य से काठमाडू मे एक स्थाई सचिवालय स्थापित करने का भी फैसला किया है, जो हमारे कार्यक्रमो पर निगाह रखेगा और उनके कार्यान्वयन मे तालमेल स्थापित करेगा। हम अपने प्रयासो मे मुख्य जोर इस बात पर दे रहे है कि सभी बाधाओ को पार करके हर स्तर पर जन-जन के बीच सम्पर्को मे वृद्धि की जाये तथा एक दूसरे के प्रति हमारे ज्ञान मे जो अन्तर हो उसे समाप्त किया जाये।

नन्दी हिल्स के नेहरू निलयम मे अपने अवकाश के क्षणो मे मैने अपने साथियो के साथ मिलकर उन अन्य क्षेत्रो को भी तय करने के लितए बातचीत की जिससे जनता की भागीदारी और पारस्परिक कार्यकलाप को और अधिक मजबूत करने के लिए सहयोग करना सम्भव हो सकता हो। इनमे रेडियो और टेलीविजन कार्यक्रम पर्यटन का आदान-प्रदान तथा विद्वानो की आवा-जाही क्षेत्रीय प्रलेखन केन्द्र की स्थापना तथा पडोसी देशो मे कृषि और वन विकास के विस्तार के कार्यक्रमो द्वारा एक सगठित स्वयसेवको का आदान-प्रदान कार्यक्रम भी शामिल है।

उन्होने दृढता पूर्वक कहा मेरा यह विश्वास है कि इस प्रकार के जन-जन के सम्पर्क से न सिर्फ सरकारो के पारस्परिक प्रयासो को बल मिलेगा, बल्कि सहयोग की क्षमताओ के अनछुए दोनो क्षेत्रो

का भी पता लगेगा। इससे भी महत्वपूर्ण बात यह है कि इस प्रकार के सम्पर्को से हम एक दूसरे की महत्वाकाक्षाओ को, एक दूसरे की जरूरतो को अच्छी तरह समझ सकेगे और इस बात को भी अच्छी तरह समझ सकेगे कि हमारी अर्थव्यवस्था मे कौन किसका पूरक हो सकता है। इससे हमारी मित्रता और हमारा पारस्परिक विश्वास मजबूत होगा जिससे सामूहिक आत्मनिर्भरता और पारस्परिक निर्भरता बढाने के लिए वातावरण बनेगा और जब ऐसा होगा तो क्षेत्रीय शाति और स्थायित्व मे हमारी सामूहिक जिम्मेदारी अनिवार्यत बढेगी। शायद यही हमारे लिए औपनिवेशिक विरासत मे प्राप्त पुराने ढर्रे को तोडने का सबसे निश्चित तरीका है और पारस्परिक सन्देह और विद्वेष निरकुशता को दूर करके क्षेत्रीय सहयोग का एक स्थाई ढाचा तैयार करने का भी तरीका है।

दक्षिण एशियाई क्षेत्रीय सहयोग सगठन के दूसरे शिखर सम्मेलन मे स्वीकृत बगलौर घोषणा और अन्य दस्तावेजो ने इन समान लक्ष्यो को प्राप्त करने की दिशा मे महत्वपूर्ण योगदान दिया। दक्षिण एशियाई क्षेत्रीय सहयोग सगठन एक राजनैतिक सगठन नही है। द्विपक्षीय विषय इसकी परिधि से बाहर है।

बगलौर शिखर सम्मेलन मे अन्य नेताओ के साथ द्विपक्षीय, क्षेत्रीय तथा अन्तर्राष्ट्रीय मुददो पर विचारो के आदान-प्रदान के लिए महत्वपूर्ण अवसर प्राप्त हुआ। मेरी बगलादेश के राष्ट्रपति, भूटान नरेश मालद्वीप के राष्ट्रपति, नेपाल नरेश, पाकिस्तान के प्रधानमन्त्री

तथा श्रीलका के राष्ट्रपति के साथ बैठके हुई। सरकार इस सप्ताह के बाद मे इन द्विपक्षीय बैठको के सबध मे एक अलग वक्तव्य देगी। उन्होने उदघाटित किया।

हम उससे भी आगे गए यह सोचकर कि कुछ अन्य विषय भी हो सकते है जिनकी ओर हम देख सकते है, और यदि बगलौर शिखर सम्मेलन तक वे तैयार हो गये तो हम उन्हे स्वीकार करेगे। इस तरह के दो विषय तैयार थे और हमने उन्हे स्वीकार कर लिया। ये दो क्षेत्र उन दो सस्थाओ के बारे मे थे जिनकी स्थापना की जानी है। एक सस्थान भारत मे स्थापित किया जाएगा यह मौसम विज्ञान के सबध मे है, और दूसरा सस्थान जो कृषि सबधी जानकारी के बारे मे है बगला देश मे स्थापित किया जाएगा। इसी तरह इन क्षेत्रो पर हम इस वर्ष के दौरान नजर रखेगे। वे विशेषज्ञो के स्तर पर आरम्भ होगे और मन्त्रियो के स्तर तक जायेगे। और काठमाण्डू शिखर सम्मेलन के समय तक यदि उनमे से कोई तैयार हो जाता है तो उन्हे उस शिखर सम्मेलन मे अपनाया जा सकेगा और यदि हम महसूस करते है कि हमे उन क्षेत्रो को अपनाना चाहिए तो हम उन्हे अपना लेगे। इस समय व्यापार का प्रश्न सार्क की परिधि के अन्तर्गत नही आता है। सचिवालय के लिए वित्त व्यवस्था करने के लिए एक सूत्र तैयार कर लिया गया है। यह एक जटिल और विस्तृत सूत्र है। हमने इन सूत्रो के आधार पर यह निश्चय भी किया है कि हम अन्य वित्तीय सस्थाओ की, जो भी सामने आयेगी वित्त व्यवस्था करेगे और

जैसे ही अन्य सस्थानो या कार्यो के बारे मे निर्णय किया जाता है प्रत्येक क्षेत्र के लिए एक विशेष सूत्र एक विशेष देश की एक विशेष विषय पर दिलचस्पी के आधार पर तैयार किया जाएगा। क्योकि एक विषय हमारे लिए महत्वपूर्ण हो सकता है लेकिन वह विषय मालदीव या श्रीलका जैसे देशो के लिए महत्वपूर्ण नही हो सकता। अत इस बात को ध्यान मे रखते हुए हम उसी के अनुसार वित्त व्यवस्था का सतुलन करेगे। आतकवाद की समस्या से निपटने मे एक मुख्य अड्चन यह थी कि इसकी परिभाषा किस तरह की जाए। और इसी कारण जिस समय हमने नशीले द्रव्यो तथा आतकवाद को एक साथ उठाया तो हमने नशीले द्रव्यो के विषय पर काफी प्रगति की, लेकिन आतकवाद के विषय पर कम प्रगति हो पाई, क्योकि इसकी परिभाषा की समस्या एक बाधा थी। लेकिन इस विषय पर अभी भी विचार किया जा रहा है और हम इस पर कार्य कर रहे है। मुझे आशा है कि कुछ न कुछ परिणाम अवश्य निकलेगा। मेरा विचार है इसमे वे सभी बहुपक्षीय मामले शामिल है, जिन्हे वहा उठाया गया था[34] ।

राजीव गाधी का स्पष्ट मत था कि कोई भी हिसा जो घृणा को बढावा देती है बुद्ध और महात्मा के विचारो के अनुरूप नही हो सकती ।इसी का पिष्टपेषण करने के लिए उन्होने विभिन्न अतर्राष्ट्रीय रगमचो पर भारतीय विदेश नीति की मूल भावना का दिग्दर्शन विश्व के देशो को कराया था।

पाद टिप्पणिया

1 Manı Shankar Ayayer Rajıv s Footprınts one year ın Parlıament Page 86
2 २०-४-१९८८ की लोकसभा की कार्यवाही से उद्वत
3 २०-४-१९८८ की लोकसभा की कार्यवाही से उद्वत
4 २०-४ १९८८ की लोकसभा की कार्यवाही
5 २० ४-१९८८ की लोकसभा की कार्यवाही
6 २०-४ १९८८ की लोकसभा की कार्यवाही
7 २०-४ १९८८ की लोकसभा की कार्यवाही
8 २० ४ १९८८ की लोकसभा की कार्यवाही
9 २० ४ १९८८ की लोकसभा की कार्यवाही
10 २० ४ १९८८ की लोकसभा की कार्यवाही
11 २० ४ १९८८ की लोकसभा की कार्यवाही
12 राजीव गॉधी की विदेश निति पर श्री के०आर० नारायणन द्वारा लिखा गया लेख - राजीव गाधी एव ससद सम्पादक सी०के०जैन महासचिव लोकसभा पृष्ठ-२७
13 राजीव गॉधी की विदेश निति पर श्री के०आर० नारायणन द्वारा लिखा गया लेख - राजीव गाधी एव ससद सम्पादक सी०के०जैन महासचिव लोकसभा पृष्ठ-२७
14 Bhawanı Sen Gupta Rajıv Gandhı ın polıtıcal study Page 112
15 Tımes of Indıa 7 8 1986
16 Harısh Chandra Rajıv Gandhı Many Facts Page 136
17 Indıan Express 23 1 1988
18 Hındustan Tımes 10 6 1988
19 Prasad Bımal Indıa s Foreıgn Polıcy Studıes ın Contınuıty and Change Page 229
20 Patel S R Foreıgn Polıcy of Indıa Page 112
21 The States man 6th October 1987
22 Jaın B M South Asıan Indıa and Unıted States (Jaıpur RBSA 1987) Page 119
23 Manı Shankar Ayayer Rajıv s Footprınts one year ın Parlıament Page 99
24 भारत-१९८८ - सूचना एव प्रकाशन विभाग नई दिल्ली भारत सरकार ।

25 Harısh Chandra Rajıv Gandhı Many Facts Page 116

26 Somrajan C N ed Formulatıon and practıce of Indıa s Foreıgn Polıcy Page 232

27 Indıan Express – 23 1 1985

28 Kacharoo J L India and the Commonwealth Page 136

29 The Statesman 18 10 1986

30 M C Shah Rajıv Gandhı ın Parlıament Page 236

31 M C Shah Rajıv Gandhı ın Parlıament Page 236

32 भारत १९८८ सूचना एव प्रकाशन विभाग नई दिल्ली भारत सरकार ।

33 Tımes of Indıa – 1 1 1989

34 भारतीय विदेश निति पर लोकसभा मे २० ४ १९८८ को दिया गया वक्तव्य लोकसभा कार्यवाही से ।

अध्याय - ३

श्री राजीव गाधी के प्रधानमत्रित्व काल मे भारत के पडोसी देशो से सम्बध के सदर्भ मे भारतीय विदेश नीति की पृष्ठभूमि तथा राजीव गाधी के विचारो का विशद विवेचन करने के पश्चात भारत - चीन सम्बन्धो की दशा एव दिशा पर इस अध्याय मे प्रकाश डालने का प्रयास किया जायेगा । स्वतन्त्रता के बाद भारत और चीन के सम्बन्धो की कहानी भारतीय नेताओ की आदर्शवादिता, स्वप्नदर्शिता और अदूरदर्शिता तथा चीनी विश्वासघात की कहानी है।[1] भारत की चीन सम्बन्धी नीति निम्नलिखित तत्वो पर आधारित रही है - **प्रथम** यह विश्वास था कि प्राचीन काल से ही भारत और चीन के मध्य घनिष्ठ सास्कृतिक और व्यापारिक सम्बन्ध विद्यमान थे । बौद्ध धर्म की जन्मभूमि भारत होने के कारण भारत चीन का एक प्रकार से धर्मगुरु है यह धारणा थी कि और चीन उसका सम्मान करेगा । **दूसरे** चीन को अपनी स्वतत्रता और अखण्डता की रक्षा के लिये पाश्चात्य और जापानी साम्राज्यवाद के विरुद्ध एक भीषण और दीर्घ सघर्ष करना पडा था । इससे भारत मे उसके प्रति गहरी सहानभूति उत्पन्न हो गयी थी । **तीसरे,** यह माना जाता था कि चीन ने भारत पर कभी आक्रमण नही किया है और न कभी करेगा और वह कभी आक्रमण करना चाहेगा तो उत्तर की दुर्गम हिमालय पर्वतमाला उसे कभी ऐसा नही करने देगी । **चौथे** भारतीय विदेश नीति के प्रमुख शिल्पी पण्डित नेहरू और उनके विश्वस्त परामर्शदाता रक्षामन्त्री कृष्ण मेनन चीन विशेषत साम्यवादी चीन के प्रति गहरी सहानभूति

रखते थे और चीन के साथ मैत्री को असलग्ता की नीति की आधारशिला मानते थे ।

भारत और चीन न केवल पडोसी राष्ट्र है। और इतिहास साक्षी है उनमे प्राचीन काल से ही सास्कृतिक सम्बन्ध चले आ रहे थे । जब दोनो विदेशी आधिपत्य मे चले गये तो इनके सम्बन्ध टूट गये । १९४७ मे भारत स्वतन्त्र हुआ और उधर १९४९ मे कोमिन्ताग सरकार के पतन के बाद चीन साम्यवादी सरकार की स्थापना हुई । साम्यवादी शासन की स्थापना के बाद ही यह महसूस किया गया कि चीन के साथ भारत के मैत्रीपूर्ण सम्बन्धो की स्थापना का मार्ग अनेक कठिनाइयो से भरा हुआ है [2]।

जहाँ तक भारत चीन मैत्री के मार्ग मे कठिनाइयॉ का प्रश्न है इसमे निम्नलिखित कठिनाइया महसूस की गई - **प्रथम**, भारत की राजनीतिक आर्थिक एव सामाजिक व्यवस्थाएँ तथा सस्थाएँ चीनी साम्यवादी प्रणाली और उसकी सस्थाओ से भिन्न है। **द्वितीय**, भारत की विदेश नीति शान्तिपूर्ण सह-अस्तित्व एव पचशील के सिद्धान्तो पर आधारित है। भारत की नीति साम्राज्यवादी या विस्तारवादी नही है। भारत अपनी शक्ति से किसी को आतकित नही करना चाहता । दूसरी ओर साम्यवादी चीन के इरादे आक्रामक साम्राज्यवादी, और विस्तारवादी है। इसकी इच्छाए एशिया मे एकाधिकार की है। और उसके साधन तोड-फोड आतक क्रान्ति कपट और हिसा है। माओ नीति शक्ति को बन्दूक की नली से प्राप्त

करती है। **तृतीय** एशिया मे भारत जनसख्या शक्ति और प्राकृतिक साधनो मे चीन का प्रतिद्वन्दी बनने की क्षमता रखता है। चीन को यह पसन्द नही है कि भारत उसका प्रतिद्वन्दी बने। यह दुनिया को यह बताना चाहता है क भारत एशिया का एक कमजोर देश है। और उसकी स्थित एक दूसरे दर्जे की है। भारत का शक्ति के रूप मे उभरना उसका आर्थिक दृष्टि से सम्पन्न होना और राजनीतिक सुदृढता प्राप्त करना चीन के लिए ईर्ष्या, द्वेष और वैमनस्य का कारण है[3]।

जहॉ तक भारत चीन सम्बन्धो के इतिहास का प्रश्न है इसे सुविधा की दृष्टि से तीन भागो मे बाटा जा सकता है-

१ प्रमोद काल

२ टकराव और तनाव काल

३ सवाद काल

सर्वप्रथम हमप्रमोद काल (१९४९ ५७)को लेते है । चीन के प्रति भारत का दृष्टिकोण प्रारम्भ से ही मित्रतापूर्ण रहा है। हमारे स्वतत्रता सग्राम के दिनो से ही नेहरू भारत और चीन की मित्रता पर बल देते रहे थे। सन १९४२ मे च्याग काई शेक ने भारत की यात्रा की थी, जिससे भारत मे चीन के जापानी साम्राज्यवादी के विरूद्व सघर्ष के प्रति सहानुभूति की एक लहर फैल गई । चीन मे साम्यवादी दल की विजय -चीन सम्बध और भी घनिष्ठ हो गये । अक्टूबर १९४९ मे चीन मे साम्यवादी क्रान्ति का भारत ने

स्वागत किया। गैर-साम्यवादी देशो मे भारत ही पहला देश था जिसने चीन को राजनयिक मान्यता प्रदान की। अमेरिका की नाराजगी की कीमत पर भी भारत ने कोरिया युद्ध मे चीन का समर्थन किया था। सितम्बर १९५० मे सेनफ्रासिस्को मे ४९ राष्ट्रो के साथ होने वाली जापानी सन्धि मे भारत इसलिए शामिल नही हुआ क्योकि चीन को उसमे शामिल नही किया गया था। सयुक्त राष्ट्र सघ मे चीन को मान्यता दिलाने का भारत ने भरसक प्रयत्न किया। भारत ने उस समय भी चीन को मान्यता दिलाने का प्रयास किया जब चीन का भारत के प्रति दृष्टि कोण शत्रुता पूर्ण था। भारत ने अमेरिका की उन नीतियो की सर्वदा आलोचना की जो चीन को अन्तर्राष्ट्रीय सम्मेलनो या सस्थाओ मे उचित स्थान दिलाने मे बाधा प्रस्तुत करती थी।

सन १९५४-५७ का काल भारत चीन सम्बन्धो मे प्रमोद काल कहलाता है। २९ जून,१९५४ को दोनो राष्ट्रो के मध्य एक ८ वर्षीय व्यापारिक समझौता हुआ जिसके अन्तर्गत भारत ने तिब्बत से अपने अतिरिक्त देशीय अधिकारो को चीन को सौप दिया। इस व्यापारिक समझौते की प्रस्तावना मे ही पचशील के सिद्धान्तो पर जब चीन के तत्कालीन प्रधानमत्री चाऊ एन लाई भारत आये तो सयुक्त विज्ञप्ति मे पचशील के सिद्धान्तो पर बल दिया गया। अक्टूबर १९५४ मे पण्डित नेहरू ने भी चीन की यात्रा की। अप्रैल १९५५ मे बाण्डुग सम्मेलन मे नेहरू और चाऊ एन लाई ने पूर्ण सहयोग के साथ कार्य

किया। बाद मे गोवा के प्रश्न पर भी चीन ने भारत का साथ दिया और क्यूमाये और मात्सू टापुओ पर भारत ने चीन का समर्थन किया। पामर के शब्दो मे साम्यवादी चीन के प्रति नेहरू और उनके सहयोगियो का दृष्टिकोण स्पष्ट रूप से तुष्टिकारी था। विन्सैड शौयब के अनुसार चीनियो के साथ मैत्रीपूर्ण सम्बन्ध कायम करने का जितना प्रयास नेहरू ने किया सम्भवत विश्व मे उतना किसी ने भी नही किया। स्वतत्र भारत मे हिन्दी चीनी भाई-भाई का नारा बहुत लोकप्रिय रहा[4]।

अब हम आते है टकराव और तनाव काल (१९५७ १९७८) पर पचशील और बाण्डुग सम्मेलन को भारतीय कूटनीति की महान सफलताए माना गया था परन्तु वस्तुत वे भारतीय कूटनीति की पराजय सिद्ध हुए। तथ्य तो यह है कि भारत की चीन सम्बन्धी नीति जिन धारणाओ पर आधारित थी वे धारणाए ही भ्रान्तिपूर्ण सिद्ध हुई। भारत और चीन के प्राचीन सम्बन्धो की धनिष्ठता को अत्यधिक बढा चढाकर देखा गया था। साम्राज्यवाद के विरूद्ध उसके सघर्ष के प्रति सहानुभूति के प्रवाह मे बहकर यह भुला दिया गया था कि चीनी लोग प्राचीन काल से ही चीन को विश्व सभ्यता का केन्द्र मानते आये है और एक प्रसारवादी नीति मे विश्वास करते रहे है। भारत पर उनके भूतकाल मे आक्रमण न करने का कारण उनकी शान्तिप्रियता नही वरन हिमालय की दुर्गम पर्वतमालाए थी। परन्तु २०वी शताब्दी मे एक ओर तो विज्ञान की प्रगति ने उनकी अगमता को काफी कम

कर दिया और दूसरी ओर तिब्बत को चीन को सौप देने की गलती कर भारत ने चीन के हमले को सरल बना दिया[5]। इसके अतिरिक्त, भारतीय विदेश नीति के निर्माता यह भूल गये कि द्वितीय विश्व युद्ध के पश्चात एशिया और अफ्रिका के जागरण से उत्पन्न हुई परिस्थितियो मे भारत और चीन के मध्य एशिया और अफ्रीका विशेषत दक्षिणी पूर्वी एशिया के नेतृत्व के लिए सघर्ष होना अनिवार्य ही था।

जहा तक *तिब्बत समस्या का प्रश्न है,* तिब्बत भारत का पडोसी राज्य है। इसके उत्तर मे चीनी सिक्याग स्थित है। भारत को अग्रेजो से तिब्बत के सम्बन्ध मे निम्न अधिकार उत्तराधिकार मे मिले -**अ** लहासा मे एक भारतीय राजनीतिक एजेण्ट रख सकना **ब** ग्यान्तसे गगटोक और यातुग मे व्यापारिक एजेसी स्थापित कर सकना **स** ग्यान्तसे के व्यापार मार्ग पर डाक एव तार के दफतर रखना तथा **द** ग्यान्तसे मे एक छोटा सा सैनिक दस्ता रखना जो व्यापार मार्ग की रक्षा कर सके।

चीन सदियो से तिब्बत पर अपना अधिकार जताता आ रहा था। चीन की नयी साम्यवादी सरकार ने स्थापना के साथ ही तिब्बत पर अपना अधिकार घोषित कर दिया और तिब्बत को अपने राज्य का अग बताया। १ जनवरी १९५० को चीन सरकार ने तिब्बत को स्वतत्र कराने की घोषणा कर दी[6] । भारत सरकार ने परिवर्तित परिस्थिति मे चीन से वार्ता कर लेना ही उचित समझा। दिसम्बर

१९५३ मे यह वार्ता प्रारम्भ हुई। पचशील के आधार पर एक समझौता दोनो देशो के बीच कर लिया गया। इसके अन्तर्गत भारत को तिब्बत मे व्यापार एजेसिया स्थापित करने का और तीर्थ यात्राओ तथा अन्य नागरिको द्वारा तिब्बत की यात्रा कर सकना मुख्य रूप से निश्चित किया गया। भारत सरकार यातुग एव ग्यान्तसे अपने सैनिक हटाने के लिए सहमत हो गयी। तिब्बत पर चीन की सार्वभौमिकता स्वीकार करने की भारतीय नीति की ससद मे कटु आलोचना हुई जबकि प्रधानमन्त्री नेहरू ने इसे पूर्णतया उचित ठहराया। उनके मतानुसार तिब्बत पर पहले से ही चीन का सार्वभौमिक अधिकार था और ब्रिटिश शासन तक ने इसे चुनौती नही दी थी। जब तक चीन दुर्बल और अविकसित था तब तक उसने अधिकार का उपयोग नही किया पर एक नयी महाशक्ति के रूप मे उभरने के पश्चात वह कैसे किसी अन्य देश भारत की सेनाए तिब्बत मे रखना सहन कर सकता था। अतएव सम्मानपूर्वक हट जाना ही उचित था।

२५ जून १९५४ को चीन के प्रधानमत्री जेनेवा से पीकिग जाते समय भारत पधारे। भारत और चीन के प्रधानमत्रियो ने अपनी सयुक्त घोषणा मे पचशील के प्रति दुबारा अपना विश्वास प्रकट किया[7]। १८ अक्टूबर, १९५४ को नेहरू पीकिग की यात्रा पर गये। इसके बाद २८ नवम्बर,१९५६ से १० दिसम्बर, १९५६ तक चाऊ एन लाई ने भारत की यात्रा की। उन्होने भारतीय ससद को सम्बोधित किया तथा बार बार भारत एव चीन की मित्रता का उल्लेख किया[8] । पुन एक

बार चीन के प्रधानमन्त्री ने पचशील मे विश्वास प्रकट करने के साथ अन्तर्राष्ट्रीय समस्याओ के समाधान के लिए शक्ति प्रयोग करने की निन्दा की। इस प्रकार १९५६ तक भारत एव चीन के बीच उत्तम राजनीतिक सम्बन्ध थे। इसी बर्ष तिब्बत के खम्पा क्षेत्र मे बडे पैमाने पर चीनी शासन के विरूद्ध विद्रोह हो गया जो १९५९ तक चलता रहा। इस विद्रोह को दलाईलामा ने ८ व्यक्तियो के दल के साथ भारत मे राजनीतिक शरण ली। इसके पश्चात एक बडी सख्या मे तिब्बती शरणार्थी भारत आये। इन सबको मसूरी के पास बसा दिया। चीन की सरकार ने इसे शत्रुतापूर्ण कार्य बताया। वस्तुत इसी समय से भारत और चीन के सम्बन्ध कुछ कुछ बिगड़ना प्रारम्भ हो गये।

जहा तक भारत चीन सीमा विवाद का सबध है अब तक भारत और चीन के मध्य सीमा को लेकर कटु विवाद प्रारम्भ हो चुका था । १९५०-५१ मे साम्यवादी चीन के नक्शे मे भारत के एक बडे भाग को चीन का अग दिखाया गया था। जब भारत सरकार ने चीन का ध्यान इस ओर दिलाया तो यह कहकर मामला टाल दिया गया कि ये नक्शे कोमिन्ताग सरकार के पुराने नक्शे है। चीन की नयी सरकार को इतना समय नही मिला है कि वह इनमे उपयुक्त सशोधन कर सके। समय मिलते ही इन नक्शो को ठीक कर दिया जाएगा। जून १९५४ मे भारत एव चीन के मध्य तिब्बत को लेकर समझौता हुआ तब वार्ता हेतु चुने गये विषयो मे सीमा विवाद का कही प्रश्न ही न था। भारत मे यही समझा गया कि समस्त विवाद

हल हो चुके है। परन्तु शीघ्र ही १७ जुलाई १९५४ को चीन ने एक पत्र द्वारा भारत पर आरोप लगाया कि भारतीय सेना ने बूजे नामक चीनी स्थान पर अवैध अधिकार कर लिया है। बूजे भारत मे बडी होती के नाम से प्रसिद्ध था। चीन के विरोध पत्र का उत्तर देते हुए भारत सरकार ने लिख दिया कि यह स्थान भारतीय प्रदेश मे है और यहा भारतीय सीमा सुरक्षा सेना की चौकी है। १९५४ से ही चीन ने सीमा के विभिन्न भारतीय प्रदेशो मे अपने सैनिक दस्ते और टुकिडिया भेजनी आरभ की। २३ जनवरी १९५९ के पत्र मे चीनी सरकार ने लिखा कि भारत और चीन के मध्य कभी भी सीमाओ का निर्धारण नही हुआ है और तथाकथित सीमाए चीन के विरूद्ध किये गये साम्राज्यवादी षडयन्त्र मात्र है[9]।

इधर अक्टूबर १९६२ मे भारत पर साम्यवादी चीन ने बडे पैमाने पर आक्रमण कर दिया। इससे पूर्व १२ जुलाई १९६२ को लद्दाख मे गलवान नदी की घाटी की भारतीय चौकी को चीनियो ने अपने घेरे मे ले लिया। ८ सितम्बर को चीनी सेनाओ ने मैकमोहन रेखा पार करके भारतीय सीमा मे प्रवेश किया। २० अक्टूबर १९६२ को चीनी सेनाओ ने उत्तर पूर्वी सीमान्त तथा लद्दाख के मोर्चे पर एक साथ बडे पैमाने पर आक्रमण किया[10] । टिडडी दल की भाति वे भारतीय चौकियो पर टूट पडे। २१ नवम्बर १९६२ को चीन ने एकाएक अपनी ओर से एकपक्षीय युद्ध विराम की घोषणा कर दी और युद्ध समाप्त हो गया[11]। चीन ने जीते हुए भारतीय प्रदेशो को भी

खाली करना प्रारम्भ कर दिया और भारत के कुछ सैनिक साजो-समान को भी वापस कर दिया।

जहा तक चीन द्वारा भारत पर आक्रमण के कारणो का सम्बध है डा वी पी दत्त के अनुसार चीन के भारत पर आक्रमण के दो उदेश्य थे **अ** अपनी शक्ति का प्रदर्शन करना **ब** भारत की निर्बलता को प्रदर्शित करना तथा **स** उसे अन्तर्राष्ट्रीय क्षेत्र मे अपमानित करना[12] ।

सक्षेप मे चीन द्वारा भारत पर आक्रमण के निम्नलिखित कारण थे-

१ चीन विस्तारवाद की नीति का प्रदर्शन करना चाहता था।

२ चीन की इच्छा थी कि वह भारत को लोकतन्त्रात्मक पद्धति से उन्नति करने मे सफल न होने दे उस पर युद्ध का बोझ डाल दे।

३ तिब्बत के प्रति भारतीय नीति से चीन नाराज था। दलाईलामा को शरण देने के कारण वह रूष्ट था।

४ उसका उदेश्य भारत को बदनाम करना था एशिया मे चीन को सर्वोच्चि शक्ति बनने की आकाक्षा तथा भारत को नीचा दिखाने की इच्छा थी।

भारत पर चीन का आक्रमण बडे सुविचारित और क्रूर विचारो से किया गया इसके निम्न उदेश्य थे-हिमालय मे पीकिग की शक्ति और अधिकार को स्थापित करना, भारत की प्रतिष्ठा को धक्का पहुचाना नेहरू को नीचा दिखाना चीन को एशिया मे बडी वास्तविक शक्ति सिद्ध करना, चीनी भाइयो के स्थान पर शक्तियो

को यह सूचना देना कि दुनिया मे तब तक शान्ति नही रह सकती जब तक कि चीन को महाशक्ति के रूप मे स्वीकार न किया जाये और उससे इस तरह का व्यवहार न हो[13]।

चीन को यह आशा थी कि युद्ध की स्थिति मे सोवियत साम्यवादी भाई उसका साथ देगा और भारत मे आन्तरिक दगे होगे। परन्तु चीन की ये कामनाए सफल नही हो सकी। अमरीका, ब्रिटेन और उसके बाद फ्रास पश्चिमी जर्मनी आस्ट्रेलिया और कनाडा ने तेजी से भारत को सैनिक सहायता दी सोवियत सघ प्राय तटस्थ रहा और उसने चीन पर युद्ध बन्द करने को दबाव डाला। मिश्र यूगोस्लाविया और घाना जैसे गुटनिरपेक्ष राज्यो का दृष्टिकोण बडा ही निराशाजनक रहा। आक्रमण की निन्दा करना तो दूर उन्होने आक्रमण के समय चुप्पी ठान ली। पाकिस्तान ने चीनी आक्रमण का लाभ उठाते हुए भारत की निन्दा करना शुरू कर दिया। पाकिस्तान ने चीनी आक्रमण को सामान्य स्थानीय मामले का रूप देने का प्रयास किया।

जहा तक चीन के एक पक्षीय युद्ध विराम के कारणो का सम्बध है, चीन ने एक पक्षीय युद्ध विराम की घोषणा करके सबको स्तब्ध कर दिया। युद्ध बन्द कर देने के कारणो के सम्बन्ध मे बडा मतभेद है। फिर भी मोटे तौर से निम्नलिखित कारण हो सकते है-

१ चीन अन्तरर्राष्ट्रीय क्षेत्र मे अपनी सद्भावना प्रकट करना चाहता था कि चीन युद्ध प्रेमी नही बल्कि उसे बाध्य होकर लड़ाई लडनी पडी

थी।

२ चीन को अपने उदेश्यो की प्राप्ति मे सफलता मिल गयी थी। सैनिक दृष्टि से चीन ने भारत को हराकर भारतीय प्रतिष्ठा को धूल मे मिला दिया और भारत की निर्बलता जग प्रसिद्ध हो गयी थी।

३ सर्दी बढ जाने से सैनिको को सामान पहुचाने के लम्बे मार्ग पार करना कठिन होता जा रहा था जिससे चीन अधिक समय तक युद्ध जारी नही रख सकता था।

४ भारत को अमेरिका और ब्रिटेन से भारी मात्रा मे सैनिक सहायता तेजी से प्राप्त होने लगी थी।

५ सोवियत सघ चीन के इस आक्रमण को उचित नही समझता था।

६ चीन इस तथ्य से परिचित था कि भारत पर प्रभुत्व जमाना आसान नही है। वह केवल अपनी शक्ति प्रदर्शित करके एशिया मे अपने नेतृत्व का दावा प्रमाणित करना चाहता था।

अब हम लेते है भारत की पराजय के कारणो को । इस युद्ध मे भारत की पराजय के निम्नलिखित कारण थे - **अ** भौगोलिक स्थिति चीन के पक्ष मे थी। चीनी तिब्बत के ऊचे पठार तथा चोटियो से आक्रमण करते थे जबकि भारतीयो को निचली घाटियो से हिमालय की ऊची चोटियो तक चढकर अपने मोर्चे की रक्षा करने का कठिन काम करना पडा। **ब** चीनियो ने इस युद्ध की तैयारी बहुत समय पूर्व से कर रखी थी जबकि भारत इसके लिए तैयार ही न था[14]।

इधर भारत और चीन के युद्ध से एशिया और अफ्रीका के कुछ मित्र राज्यो ने दोनो देशो के सीमा विवाद को हल करवाना चाहा। इन देशो ने श्रीलका की राजधानी कोलम्बो मे १० दिसम्बर से १२ दिसम्बर १९६२ तक एक सम्मेलन किया। इस सम्मेलन मे बर्मा कम्बोडिया श्रीलका धाना, इण्डोनेशिया तथा सयुक्त अरब गणराज्य के प्रतिनिधियो ने भाग लिया। भारत ने इस प्रस्तावो के बारे मे कोई स्पष्ट प्रक्रिया व्यक्त नही की। कोलम्बो प्रस्ताव के पाच सूत्र इस प्रकार है-

१ वर्तमान नियन्त्रण रेखा भारत चीन विवाद के समाधान का आधार मानी जाय।

२ **अ**- पश्चिमी क्षेत्र मे चीन वर्तमान रेखा से २० किलोमीटर पीछे अपनी सैनिक चौकिया हटा ले, जैसा कि चाऊ एन लाई स्वय श्री नेहरू को अपने २१ तथा २३ नवम्बर के पत्र मे लिख चुके है। **ब** भारत इस क्षेत्र को विसैन्यीकृत रखे और इस क्षेत्र का निरीक्षण दोनो देशो के सैनिक अधिकारी करे।

३ पूर्वी क्षेत्र मे वर्तमान नियन्त्रण रेखा को युद्ध विराम रेखा माना जाय।

४ मध्य क्षेत्र मे सीमा का निश्चय शान्तिपूर्ण साधनो से किया जाय।

५ इन प्रस्तावो की स्वीकृति से दोनो देशो के बीच परस्पर वार्ता के द्वारा निर्णय ले सकते है[15] ।

अब हम आते है सवाद काल (१९७८ ९३) पर भारत मे जनता सरकार के सत्तारूढ होने और चीन मे माओत्तर नेताओ द्वारा बागडोर सभाले जाने के बाद दोनो देशो ने विगत बातो को भूलकर नये सिरे से मधुर सम्बन्ध स्थापित करने की दिशा मे प्रयास किये। अनेक कूटनीतिक माध्यमो से भारत को पीकिग से इस बात के सकेत मिले कि वह भारत के साथ सम्बध सुधारने का इच्छुक है[16] । १९७५ मे टेबिल-टेनिस की प्रतियोगिता कलकत्ता मे हुई, जिसमे चीनी खिलाडियो के एक दल ने भाग लिया। जनवरी १९७८ मे बाग-पिग नान के नेतृत्व मे एक उच्च स्तरीय चीनी प्रतिनिधिमण्डल भारत आया। इसके बाद व्यापार- वाणिज्य प्रतिनिधिमण्डलो का दौरा हुआ और दोनो देशो के बीच १९७८ मे १ करोड २० लाख का व्यापार हुआ। सितम्बर १९७८ मे चीन के कृषि वैज्ञानिको ने भारत की यात्रा की और न्यूयार्क मे विदेशमन्त्री अटल बिहारी वाजपेयी ने चीनी विदेश मन्त्री हुआग हुआ से भेट की। १ अक्टूबर १९७८ को चीन की स्थापना की। २९वी वर्षगाठ पर उपराष्ट्रपति बी डी जत्ती उपस्थित थे। इसी माह ससद सदस्य सुब्रमण्यम स्वामी तथा मार्क्सवादी कम्युनिस्ट पाटी के एक प्रतिनिधि मण्डल ने चीन की यात्रा की। नवम्बर १९७८ मे मृणालिनी साराभाई के नेतृत्व मे भारतीय नेतृत्व मण्डली का चीन मे भव्य स्वागत किया गया। १२ फरवरी,१९७९ से प्रारम्भ होने वाली अपनी चीन यात्रा को विदेश मत्री अटल बिहारी वाजपेयी ने टोली मिशन की सज्ञा दी थी। उन्होने कहा कि इससे

एशिया मे नये शक्ति सतुलन की शुरूआत हो सकती है। विदेशमन्त्री वाजपेयी के अनुसार उनकी पीकिग यात्रा का उदेश्य लेन देन करना नही अपितु यह जानना था कि इतने वर्षो के बिगड़े सम्बन्ध के बाद आज चीन मे हवा क्या है। वाजपेयी और चीनी विदेशमन्त्री इस बात से सहमत थे कि दोनो देशो को सहयोग के क्षेत्रो का पता लगाने मे जुटे रहना चाहिए। दोनो पक्षो मे यह आम सहमति थी कि सीमा विवाद देशो के भविष्य मे सम्बन्ध का आधार है। वाजपेयी की चीन यात्रा मे सीमा विवाद का हल नही ढूढा जा सका, क्योकि यह पेचीदा मामला था। वाजपेयी को चीन आने का निमन्त्रण देकर चीन ने जहा भारत को पुचकारने का प्रयास किया वही यात्रा के समय को वियतनाम पर आक्रमण के लिये चुनकर उसने भारत को परोक्ष धमकी भी दे दी और उसे १९६२ के आक्रमण की याद भी दिला दी । चीन द्वारा १७ फरवरी, १९७९ को वियतनाम पर आक्रमण किये जाने से बाजपेयी अपनी चीन यात्रा को अधूरी छोडकर स्वदेश आ गये । बाजपेयी की चीन यात्रा से यह स्पष्ट हो गया कि जब तक सीमा सम्बन्धी मामले और कश्मीर से सम्बन्धित कुछ प्रश्नो पर सन्तोषजनक समझौता नही हो जाता तब तक चीन के साथ मैत्रीपूर्ण सम्बन्ध स्थापित नही हो सकेगे[17] ।

अर्न्तराष्ट्रीय दृष्टि से भी चीन के साथ फिर से बातचीत शुरू करने के कई कारण दिखायी देते है । चीन एक बडा पड़ोसी एशियाई देश है । उसके साथ सदा तनाव बने रहने की स्थिति दोनो

देशो के लिये अप्रिय और अहितकर है । अगर दोनो मिल बैठे तो विश्व राजनीति मे एशिया का प्रभाव बढना अवश्यम्भावी है । इसके अतिरिक्त तनाव की स्थिति मे सैनिक तैयारी पर जो व्यय होता है वह मेल-जोल बढने पर काफी कम हो जायेगा । दूसरी ओर भारत की यह माग है कि दुनिया मे तनाव कम करने की दशा मे जो कार्यवाही हो रही है, वह तब तक कारगार नही होगी जब तक उसमे चीन जैसे बडे एशियाई देशो को यथेष्ट स्थान नही दिया जायेगा । जब भारत अर्न्तराष्ट्रीय प्रयासो मे चीन को यथोचित स्थान दिलाने का पक्षधर है तो उसका स्वय चीन से मुह फेरे खडे रहना प्रत्यक्षतः असगत होगा ।

उधर चीन भारत की दोस्ती का हाथ बढाने के लिये आन्तरिक और बाह्य कारणो से विवश है । चीन मे ऐसे आसार दिखायी दे रहे है कि पुराने माओवादी रवैये से हटकर कुछ नये विकल्पो को आजमाया जाये । इसी सन्दर्भ मे चीन ने अपनी विदेश नीति के क्षेत्र मे भी पुनर्विचार करना आवश्यक समझा । चीन जानता है कि भारत प्रभाव क्षेत्र की राजनीति और महाशक्तियो के प्रसार का विरोधी है , इसलिये भारत के साथ मिलकर ही एक सक्षम एशियाई व्यक्तित्व का निर्माण हो सकता है जिससे कि एशिया मे बडी शक्तियो के प्रसार और प्रतिस्पर्द्धा को रोका जा सकता है । इसलिये भारत के साथ सम्बन्धो को सुधारने की कार्यवाही चीन के राष्ट्रहित मे है[18] ।

मार्शल टीटो की अन्त्येष्टि के अवसर पर श्रीमती गाधी ने चीन के विदेश मन्त्री हुआ कुआ फेग से वार्ता की । फेग ने जून १९८१ मे भारत की यात्रा की ओर सीमा विवाद सहित सभी प्रकार के सम्बन्धो के सामान्यीकरण हेतु वे वार्ता के लिये राजी हो गये । चीन की सरकार ने भारतीय यात्रियो को मानसरोवर तथा कैलाश पर्वत जाने की अनुमति भी दे दी । भारत और चीन मे विवादो के समाधान के लिए १९८२-८७ के मध्य कुल मिलाकर वार्ताओ के आठ दौर हुए । चीन का एक प्रतिनिधि मण्डल श्री फूहाओ के नेतृत्व मे भारत चीन सीमा विवाद पर वार्ता के लिए १६ मई १९८२ को नई दिल्ली पहुचा। दोनो पक्षो मे यह विश्वास प्रकट किया कि ४० करोड़ रूपये के आपसी व्यापार मे कई गुना वृद्धि की गुजाइश है। भारत मे आयोजित एशियाई खेलो मे चीनी दल ने भाग लिया। भारत चीन का तीसरा दौर २९ जनवरी १९८३ मे बीजिग मे शुरू हुआ। तीसरी वार्ता की सबसे बडी कमजोरी यह थी कि दोनो देश अपने अपने कोई स्पष्ट प्रस्ताव या शर्ते रखने मे असफल रहे।

१७ सितम्बर से २२ सितम्बर १९८४ को इस क्रम मे प्रारभ हुई वार्ता का पाचवा दौर चीन की राजधानी बीजिग मे सम्पन्न हुआ।

१९८० मे चीन की ओर से यह बात अवश्य सामने आयी थी कि लद्दाख मे अक्साईचिन मे चीन द्वारा छीन ली गयी। ३७००० वर्ग किलोमीटर भूमि पर भारत चीन का अधिकार मान ले तो चीन पूर्वी क्षेत्र मे मैकमोहन रेखा स्वीकार करने को तैयार है। उसके तत्काल

बाद १९८१ मे जब राष्ट्र सघ नियन्त्रित जनसख्या सम्मेलन मे भारत के ससदीय प्रतिनिधि मण्डल मे अरूणाचल प्रदेश के स्पीकर का नाम शामिल किया गया तो चीन ने इकार कर दिया। बाद मे उन्हे वीसा दे दिया गया और उसके बाद भारत चीन वार्ता के पहले और दूसरे दौर सम्पन्न हो गये।[19] लेकिन दिसम्बर १९८२ मे नवे एशियाई खेलो के समापन पर चीन ने पुन तहलका मचाया कि समापन समारोह मे अरूणाचल प्रदेश के नर्तक दल क्यो सम्मिलित किये गये। इस बार भारत के विरोध का भी चीन ने कोई सन्तोषजनक उत्तर नही दिया। भारत ने इस पर ११ दिसम्बर १९८२ को कोटनीस समारोह मे जाने वाले भारतीय प्रतिनिधिमण्डल की यात्रा भी रद कर दी।

यहा यह उल्लेखनीय है कि चीन द्वारा पूर्व मे मैकमोहन रेखा को स्वीकार करने का मतलब यही निकलता था कि नेफा अर्थात अरुणाचल मे वह भारत के दावे को मानता है । स्मरण रहे कि १९६२ मे चीन ने इस क्षेत्र पर आक्रमण किया था व अपना दावा जताया था । भारत ने उसके बाद १९७२ मे अरुणाचल को अपने राज्य का दर्जा प्रदान किया था । यदि चीन मेकमोहन रेखा को स्वीकार करने को तैयार है तो अरुणाचल के प्रश्न को लेकर बार - बार क्यो तूफान मचा रहा है ।

इधर भारत के लिये स्थति बुरी थी । १९८२ मे प्रकाशित चीनी मानचित्रो मे भी उन सभी भारतीय प्रदेशो को चीनी प्रदेश मे बताया गया, जिन पर चीन अपना निराधार दावा करता रहा है । इस क्रम मे

सिक्किम को भी वह भारतीय प्रदेश नही मानता । चीन सिक्किम कश्मीर व सीमा - विवाद पर अपनी पूर्व नीति बदले बिना ही भारत से सम्बन्ध सुधारना चाहता है । वह इस प्रक्रिया मे कही भी प्रतिबद्ध नही होना चाहता है ।

सम्भवत श्री राजीव गाधी ने अपने अन्य दुस्साहसिक कार्यो की तरह इस दमघोटू वातावरण को भी मिटाने का सकल्प किया और कूटनीति वार्ताओ के क्रम मे दूसरे पक्ष मे नियत्रण पाकर चीन जाने को तैयार हुए- ठीक २६ वर्षो के बाद एक तो पारस्परिक सम्बन्ध चाहे जितने भी बिगड गये थे उन्हे सामान्य बनाना ही था, दूसरे उस सीमा विवाद को भी हल करने का रास्ता ढूढना था जो चीनियो से अधिक भारत के लिये स्थायी सिर-दर्द बन चुका था।

चीन मे श्री राजीव गॉधी का अप्रत्याशित रूप से शानदार स्वागत हुआ। वह इस बात का प्रमाण माना जा सकता है कि विगत २६ वर्षो मे चीन वालो का भी मन बदल चुका होगा और कही न कही से वे भी उस अवसर की तलाश मे थे जिसे श्री गाधी ने स्वय आगे बढकर उन्हे दे दिया था[20] ।

चीन मे श्री गाधी ने वैसे तो राजनयिक आवश्यकताओं के अनुरूप अनेक अवसरो पर अनेक वक्तव्य दिये, किन्तु उनका सर्व प्रमुख नीतिगत भाषण वह था जो उन्होने अपनी यात्रा के पहले ही दिन, अपने और श्रीमती सोनिया गॉधी के सम्मान मे, चीन के प्रधान मत्री श्री ली पेग और श्रीमती पेग द्वारा आयोजित राजकीय भोज के

अवसर पर दिया था।

मानो भगवान बुद्ध का कोई देवदूत दोनो देशो के बीच के भूगोल के उँचे पर्वतो, बीहड वनो भयानक मरूस्थलो और दहाडती नदियो को ही उनके इतिहास को भी अनेक गहरी खाइयो और अनुलघनीय घाटियो को पार करता हुआ आधुनिक चीन मे उतर आया था और नये चीनी समाज को एक बार फिर बुद्ध और गाधी दोनो का सन्देश एक साथ दे रहा था।[21]

श्री गाधी का यह भाषण राजनयिक शिष्टाचार का उत्कृष्टतम नमूना तो था किन्तु उसमे दोनो देशो के लम्बे ऐतिहासिक सम्बन्धो के हर उतार चढाव की सारी वास्तविकताये बिना कुछ भी छुये एक पारदर्शी चित्रावली के समान प्रतिबिम्बित हो गई थी। आखिर वह पूरे २६ वर्षो की अन्यमनस्कता के बाद भारत और चीन का पहला शिखर सवाद जो था।

राजीव गाधी का विचार था कि- "हमारे दोनो देश विश्व की सर्वाधिक उत्कृष्टतम सभ्यताओ का प्रतिनिधित्व करते है। मानव प्रगति के लिये हमारा योगदान महत्वपूर्ण रहा है। हम एक दूसरे को हजारो वर्षो से जानते रहे है। हजारो वर्षो से हमने एक दूसरे से विचारो का आदान प्रदान किया है। हमारे दोनो देश भिन्न-भिन्न कारणो से यूरोपीय शक्तियो के विप्लव के आगे पराभूत हुए। उसके बाद हमदोनो ने अलग-अलग तरीको से पुन स्वतत्रता प्राप्त की" ।

हमने उत्तर उपनिवेशवादी एशिया के पुनर्जागरण को मजबूत

करने के लिये साथ-साथ कार्य किये। एशियायी सबध सम्मेलन से लेकर बाडुग सम्मेलन तक हमारी एक आवाज रही जिसमे हमने सभी राष्ट्रो की समानता, सभी लोगो के लिये न्याय तथा स्थायी शान्ति की माग की। हमने शान्तिपूर्ण सह-अस्तित्व के जरिये शान्ति और सुरक्षा की ठोस नीव रखने के लिये मिलकर कार्य किया ताकि भय और आशका के स्थान पर विश्वास की भावना पैदा हो सके।

फिर श्री गाधी ने स्वभावत उस कटुता की भी चर्चा की जो अचानक दोनो देशो के सबधो मे आ गयी।

सामान्य प्रयास के इस चरण के बाद हमारी मैत्री टूटने का एक दौर आया। सीमा पर मतभेदो के कारण दुभाग्यपूर्ण घटनाये घटित हुई, जिनसे हमारे सबधो मे तनाव आ गया[22] ।

उन्होने आगे कहा- अब अतीत के दायरे से निकलकर बाहर देखने का वक्त आ गया है। अब समय आ गया है जब हमारे देशो के बीच सबध उस स्तर तक बहाल किये जाय, जो हमारे देशो की शताब्दियो की मैत्री के अनुरूप हो। हम दोनो देश मिलकर मानवजाति के एक तिहाई के बराबर है। हम मिलजुलकर बहुत कुछ कर सकते है[23]।

श्री गाधी ने याद दिलाया - १९५४ मे भारत और चीन ने शान्तिपूर्ण सह-अस्तित्व के पॉच सिद्धान्तो-पचशील की घोषणा की थी। हमने इन सिद्धान्तो पर जोर दिया, लेकिन उस समय इनको बहुत कम अगीकार किया गया। विश्व टकराव के रास्ते पर आगे

बढने के लिये उस समय इतना आमादा था कि वह पचशील के रास्तो का विकल्प ढूढने मे लगा हुआ था। मगर अब तीस वर्षो के दुखद दौर के बाद विश्व-पथ के लिये उन्हे ही अपनाने के प्रयास किये जा रहे है[24]।

श्री गाधी ने कहा- शान्ति का मार्ग इस मान्यता से आरम्भ होता है कि परमाणु युद्ध कभी जीता नही जा सकता। इसलिये उसे लडा जाना नही चाहिये। परमाणु हथियारो के अनुसधान के बाद से पहली बार हमने न केवल परमाणु हथियारो के नियत्रण बल्कि उनमे कमी लाने की भी प्रक्रिया देखी है। वास्तव मे एक बडी सैनिक शक्ति ने सोवियत सघ की ओर सकेत परम्परागत हथियारो तथा सैनिको की सख्या मे पर्याप्त कमी लाने की घोषणा भी की है।
इन कटौतियो से भी ज्यादा महत्वपूर्ण वह भाषा जो अपनाई जा रही है तथा वह तर्क जिसका अनुसरण किया जा रहा है[25]।

विश्व धीरे-धीरे उन सिद्धान्तो के और करीब पहुचता जा रहा है जिन्हे हम लोगो ने तीन दशक पूर्व सयुक्त रूप से तैयार किया था। भारत और चीन यदि एक दूसरे से अलगाव रखेगे, तो उनके लिये एक साथ मिलकर काम करना मुश्किल होगा। भारत और चीन यदि एक दूसरे के साथ तालमेल रखे तो वे मिलकर कार्य कर सकते है। मै उसी लक्ष्य की दिशा मे तौर तरीको का पता लगाने के लिये आया हूँ।

श्री गॉधी ने पण्डित जवाहर लाल नेहरू की चीन यात्रा के

समय पेइचिग मे प्रकट किये गये उनके मार्मिक उदगारो की चर्चा की जिसमे श्री नेहरू ने कहा था- हमे यह मानना चाहिये कि इस दुनिया मे रहने का एकमात्र रास्ता सह अस्तित्व और सहयोग तथा प्रत्येक देश को अपनी तरह से जीने का अधिकार को मान्यता देना है। भविष्य मे एक दूसरे के खिलाफ पूर्व और पश्चिम जैसी कोई चीज नही होगी। दुनिया केवल एक होगी जो मानवता की प्रगति के लिये विभिन्न भागो के बीच मैत्री पूर्ण सहयोग के प्रति समर्पित होनी चाहिये।

श्री राजीव गॉधी ने अपील की- शान्तिपूर्ण सह-अस्तित्व के सिद्धान्तो को मानने के लिए विश्व से आग्रह करते समय, हमे अपनी समस्याओ को हल करने मे भी इन सिद्धान्तो का अनुसरण करना चाहिए। सीमा का सवाल एक बड़ी समस्या है। यह हमारी जनता की भावनाओ और सवेदनाओ को स्पर्श करती है। हमे समस्या का स्थायी समाधान ढूढना चाहिए, जो एक दूसरे के दृष्टिकोण की सूझ-बूझ पर आधारित हो। इस समय सीमा-क्षेत्र मे शान्ति की आवश्यकता है। हमे विश्वास है कि सीमा का सवाल सदभावनापूर्ण तरीके से हल कर दिया जायेगा। यह यथार्थवादी समय सीमा के अन्तर्गत हल किया जाना चाहिये। भारत उसके अनुसार आगे बढने के लिये तैयार है।

श्री गॉधी ने कहा- हमारे दोनो देश विकासशील है, और विशाल जनसख्या वाले तथा महाद्वीपीय आकार वाले है दोनो ही अपनी जनता को समानता तथा न्याय के साथ विकास के लाभो तथा

आधुनिकीकरण के लाभो को देना चाहते है। इन कार्यो को पूरा करते समय हम एक दूसरे से बहुत कुछ सीख सकते है[26]।

चीन ने अपनी अर्थ-व्यवस्था तथा समाज को आधुनिक बनाने के लिये अभिनव उपायो को लागू करने की दिशा मे अनेक नई मजिले तय की है। अपने राष्ट्रीय जीवन मे आपने जो उल्लेखनीय कायाकल्प किया है उसके लिये हम आपको बधाई देते है। आपकी कृषि मे सफलताये-उत्पादन तथा विविधता दोनो ही दृष्टियो से वास्तव मे शानदार है। जल प्रबन्ध बाढ नियत्रण तथा भूमिसुधार के क्षेत्र मे आपके कौशल मे हमारी खास दिलचस्पी है।

भारत मे भी हमने खाद्यानो का उत्पादन तिगुना बढा लिया है और दूसरी हरित क्रान्ति लाकर इस शताब्दी के अत तक इस उत्पादन को दोगुना करना चाहते है। विस्तार तथा गहराई दोनो मे हमारे औद्योगिक निर्माताओ तथा स्वदेशी प्रौद्यौगिकी ने हमारी आत्मनिर्भरता को लाने की भूमिका निभाई है। जो हमारी आर्थिक दर्शन का सबसे आवश्यक गुण है।

उन्होने कहा-हमने कुछ क्षेत्रो मे अत्यन्त उत्कृष्ट सफलता हासिल की है जबकि आपने भी अन्य क्षेत्रो मे उत्कृष्ट सफलताये अर्जित की है। हम उन अवसरो का स्वागत करेगे, जबकि भारतीय तकनीकी विशेषज्ञो और वैज्ञानिक अब चीनी तकनीकी विशेषज्ञो और वैज्ञानिको के साथ मिलकर काम करे।

श्री गॉधी ने जोर देते हुए कहा- भारत तथा चीन के स्थायी तथा मैत्रीपूर्ण सम्बन्ध हमारे क्षेत्र के भाग्य का निर्धारण करेगे। वास्तव मे वे विश्व इतिहास की दिशा पर महत्त्वपूर्ण प्रभाव डालेगे। विश्व आज मानवता की एकता को मान्यतादेने की आवश्यकता महसूस कर रहा है। हमारा स्वप्न एक ऐसे विश्व का है जहा टकराव के बजाय बातचीत हो तथा तनाव के बजाय सुलह शान्ति हो। हमारा स्वप्न एक ऐसे विश्व का है जो अहिंसा मे विश्वास रखता हो। हम महात्मा गाधी के इस अमर उदगार मे पुन आस्था व्यक्त करते है -- यह मेरी दृढ आस्था है कि हिसा से कोई स्थायी चीज नही बन सकती ।

अन्त मे श्री गॉधी ने कहा -भारत और चीन की मैत्री ऐसी है जो विश्व के लिए बहुत कुछ योगदान कर सकती है। हम सीमा सम्बन्धी अपने मतभेदो का समाधान करने की दिशा मे काम करने के वास्ते बचनबद्ध है। हमारी यह यात्रा उस सकल्प को गभीरता प्रदान करती है तथा एक नये चरण के सूत्रपात का प्रतीक है। हम विश्व मे शान्ति तथा सभी लोगो मे समृद्धि के लिए मिलकर खोज फिर शुरू करने की आशा करते है[27]।

श्री गॉधी और उनके अष्टमण्डल के सदस्यो ने चीन के बहुत से नेताओ और अधिकारियो से बाते की बहुत से समारोहो मे सम्मिलित हुये, चीन की दीवार से लेकर अन्य बहुत से ऐतिहासिक स्थान देखे किन्तु उनकी यात्रा का सर्वाधिक सार्थक और सोद्देश्य

अवसर वह था, जब चीन के सर्वोच्च वयोवृद्ध नेता और चीनी कम्युनिस्ट पार्टी के महामत्री श्री दग झियाओ पग से श्री गॉधी की मुलाकात हुई। उनकी नब्बे मिनट की बात के बाद श्री पग इतने प्रभावित हुये कि एकाएक कह बैठे- जो गुजर गया उसे भूल जाना बेहतर है। मै नही समझ पा रहा कि विश्व की दो बडी सभ्यताये अपनी पुरानी गलतियो से सबक क्यो नही हासिल करती।

श्री दग झियाओं पग की बाते इस बात का स्पष्ट सकेत थी कि चीन भी भारत से सम्बन्ध सामान्य बनाने को उतना ही उत्सुक है, और पिछली बाते भुलाकर नये सिरे से रिश्ते बनाने का अभिलाषी है।चीन की ओर से दुश्मनी खत्म होने का सकेत तो महामत्री श्री दग झियाओ पग ने श्री राजीव गॉधी से अपनी वार्ता के अतिम क्षणो मे अपने बूढे और कापते किन्तु अनुभव की ऊर्जा से सर्वशक्तिमान बने हाथो मे श्री राजीव गॉधी के युवा किन्तु रोमाचित हो रहे हाथो, को पूरे डेढ मिनट तक थामे और हिलाते रहकर यह कहकर दिया था कि- वह अनुभवी नेता अपने विशिष्ट अतिथि पर अपने मार्मिक वचनो के प्रभाव की परख कर लेना कभी नही भूला।

श्री राजीव गाधी की यात्रा के दौरान चीन ने यह भी वादा किया था कि वह भविष्य मे किसी भारतीय विरोध तत्व को हथियार या प्रशिक्षण नही देगा, ताकि उत्तर पूर्व मे भारत विरोधी गतिविधियो पर रोक लग सके। इस बात का भी आश्वासन दिया गया कि भविष्य मे भारत चीन सीमा की देख रेख पर चीन कम से कम धन व्यय

करेगा। भारत अपनी ओर से भी इस बात पर सहमत हुआ। व्यापार और सस्कृति सबधी समझौते भी हुये जिनसे यह स्पष्ट हो गया कि दोनो देश १९६२ के पूर्व के माहौल को पुन नया जीवन देने को तैयार है।

श्री राजीव गाधी की चीन-यात्रा उनके शान्ति अभियान के क्रम मे एक बहुत बडी उपलब्धि थी। श्री राजीव गाधी ने जब चीन जाने का सकल्प लिया था तब जाहिर है कि २६ वर्षो की दुखद स्मृतियो को भूलकर ही लिया था, और वे १९६२ के क्षुब्ध और आक्रोश से भरे हुए भारत के प्रतिनिधि नही थे। चीन जाकर उन्होने भी देखा कि श्री दग झियाओ पग की और श्री ली पेग जैसे आज के नेता भी चेयरमैन माओ और प्रधानमत्री श्री चाउ इन लाई के अलगाववादी और अतिवादीयुग के चीनी समाज के प्रतिनिधि नही रह गये थे। वे उस युग की मानसिकता को काफी पीछे छोड आये थे।

पाद टिप्पणिया

1 Bandyopadhyay, J India China Relation Outlook for the 1980's, Foreign Affairs Reports (New Delhi) Page-87

2 Chakravarti, P G Indo China Relations Page-116

3 Dutta V P China's Foreign Policv Page-208

4 Ismail, M. India and their Neighbours Page-117

5 Chopra, S ED, Studies in India's Foreign Policy Page-219

6 Times of India 2 1 1950

7 Indian Exoress 26 6-1954

8 Statesman – 11 12 1956

9 Government of India White paper on Indo China Relations

10 Hindustan Times 21 10 1962

11 Times of India – 22-11-1962

12 Dutta V P China's Foreign Policy Page-189

13 Levi, W Free India in Asia Page-114

14 Levis,Martin Deming(Ed) Gandhi Maker of Modern India Page-201

15 Times of India – 13 12 1962

16 Ramakant, Nepal, China and India Page-119

17 Subramanvam, K Our National Securitv Page-54

18 Tharoor, S Reasons of State-Political Development and India Foreign Policy under Indira Gandhi, 1966 1977 Page-112

19 Ministry of External Affairs India Foreign Affairs Records

20 Kundra J C Indian Foreign Policv Page-89

२१ सरकार चीन के प्रधानमत्री द्वारा श्री राजीव गाधी से साथ समारोह के दौरान आयोजित भोज के अवसर पर श्री राजीव गाधी द्वारा दिये गये भाषण से टाइम्स आफ इण्डिया ।

२२ श्री राजीव गाधी द्वारा चीन यात्रा के दौरान दिये गये भाषण के अश-राष्ट्र बन्धु राजीव द्वारा श्री जगदीश त्रिगुणायन से उद्धत

२३ श्री राजीव गाधी द्वारा चीन यात्रा के दौरान दिये गये भाषण के अश- राष्ट्र बन्धु राजीव द्वारा श्री जगदीश त्रिगुणायन के उद्धत

२४ श्री राजीव गाधी द्वारा चीन यात्रा के दौरान दिये गये भाषण के अंश- राष्ट्र बन्धु राजीव द्वारा श्री जगदीश त्रिगुणायन के उद्धत

२५ श्री राजीव गाधी द्वारा चीन यात्रा के दौरान दिये गये भाषण के अश- राष्ट्र बन्धु राजीव द्वारा श्री जगदीश त्रिगुणायन के उद्धत

२६ श्री राजीव गाधी द्वारा चीन यात्रा के दौरान दिये गये भाषण के अश- राष्ट्र बन्धु राजीव द्वारा श्री जगदीश त्रिगुणायन के उद्धत

२७ Bandyopadhvav, J India-China Relation Outlook Page-194

अध्याय-४

नेपाल हिमालय की उपत्यकाओ मे बसा हुआ एक छोटा सा देश है। यह भारत और तिब्बत के बीच स्थित है और अब तिब्बत पर चीन के आधिपत्य के बाद भारत और चीन एक बफर स्टेट का कार्य करता है। यह विश्व का एकमात्र हिन्दू राष्ट्र है। इसकी स्थापना पृथ्वी नारायण शाह (१७२३-१७७४) ने १७६९ मे की। आधुनिक नेपाल के निर्माता पृथ्वी नारायण शाह ने नेपाल की विदेश नीति का निर्धारण करते हुए कहा था यह देश दो चटटानो के बीच खिले हुए फूल के समान है। हमे चीनी सम्राट के साथ मैत्रीपूर्ण सम्बन्ध रखने चाहिए तथा हमारे सम्बन्ध दक्षिणी सागरो के सम्राट से भी मधुर होने चाहिए। पर वह बहुत चालाक है। अपने दो पडोसियो मे से वह भारत को खतरे का अधिक बडा स्रोत मानता था। पिछले २०० वर्षो के इतिहास मे नेपाल की विदेश नीति की प्रधान विशेषता यह रही है कि दोनो पडोसियो मे से जो ज्यादा बलवान कहा उसे खुश रखो।

भारत के उत्तर-पूरब मे स्थित नेपाल सामरिक दृष्टि से अत्यन्त महत्वपूर्ण है। चीन द्वारा तिब्बत को हस्तगत कर लेने के बाद भारत-चीन सम्बन्धो मे नेपाल की सामरिक स्थिति का राजनीतिक महत्व बढ गया। उत्तर मे भारत की सुरक्षा आज एक बडी सीमा तक नेपाल की सुरक्षा पर निर्भर करती है। प० नेहरू ने १७ मार्च १९५० को कहा था जहा तक कुछ एशियाई गतिविधियो का सबध है, भारत-नेपाल के बीच किसी प्रकार का सैन्य समझौता नही है लेकिन

नेपाल पर किये जाने वाले किसी भी आक्रमण को भारत सहन नही कर सकता। नेपाल पर कोई भी सम्भावित आक्रमण निश्चित रूप से भारतीय सुरक्षा के लिए खतरा होगा। अक्टूबर १९५६ मे डा० राजेन्द्र प्रसाद ने अपनी नेपाल यात्रा के दौरान कहा था कि नेपाल की शान्ति और सुरक्षा के लिए कोई खतरा भारतीय शान्ति और सुरक्षा के लिए खतरा है। नेपाल के मित्र हमारे मित्र है और नेपाल के शत्रु हमारे शत्रु है।

जहा तक भारत नेपाल का सम्बन्ध (१९४७ १९६२) है। भारत मे ब्रिटिश शासन के समय यद्यपि नेपाल औपचारिक रूप से एक स्वतत्र देश था तथापि नेपाल की राजनीति मे ब्रिटिश शासको का हस्तक्षेप बहुत अधिक था। स्वतत्र भारत सरकार साम्राज्यवादी नीति की पोषक न होने के बाबजूद सामरिक महत्व के कारण नेपाल की अवहेलना नही कर सकती थी। इसके अतिरिक्त साम्यवादी चीन का तिब्बत मे प्रभाव बढ जाने से यह प्रारम्भ मे ही स्पष्ट हो गया था कि साम्यवादी चीन तिब्बत पर अपना अधिकार जमा लेगा और इस प्रकार नेपाल एव चीन की सीमाए बिल्कुल मिल जायगी। सयुक्त राज्य अमेरिका भी इसी कारण नेपाल की राजनीति मे रूचि लेने लगा। इस प्रकार नेपाल मे बडी अन्तराष्ट्रीय शक्तियो के बीच टक्कर होने की स्थिति उत्पन्न हो गयी और ऐसा प्रतीत होने लगा कि नेपाल शीत युद्ध का क्षेत्र बन जायेगा। अपनी सुरक्षा की दृष्टि से भारत सरकार ऐसी स्थिति मे नेपाल की राजनीति से उदासीन

नही रह सकती थी । अतएव प्रारम्भ से ही भारत सरकार ने नेपाल की राजनीतिक एव आर्थिक स्थिति को दृढ करने की नीति अपनायी[1]।

१९४७ मे नेपाल के प्रधानमत्री की माग पर भारत सरकार मे एक वरिष्ठ भारतीय राजनीतिज्ञ श्रीप्रकाश को नेपाल भेजा गया जिससे नेपाल का सविधान तैयार कराने मे सहायता दी जा सके । जो सविधान बना यह राजशाही की निरकुशता का अन्त करने वाला था अतएव उसे राजाओ ने कार्यान्वित नही होने दिया ।

भारत सरकार नेपाल के साथ एक नयी सन्धि भी करना चाहती थी। १९४९ मे सधि का एक मसविदा भी तैयार किया गया परन्तु इसका कोई अन्तिम निष्कर्ष नही निकला क्योकि नेपाल सरकार भारत के प्रति सशकित था। सधि की महत्वपूर्ण शर्त यह थी कि नेपाल मे लोकतान्त्रिक प्रणाली स्थापित हो। चूँकि नेपाल के प्रधानमत्री राणा मोहन शमशेर जग नेपाल के परम्परागत प्रधानमत्रियो के प्रसिद्ध वश राणा परिवार के थे और राजा की सम्पूर्ण सत्ता वर्षो से इस राणा परिवार के हाथ मे थी, अतएव राणा मोहन शमशेर जग बहादुर लोकतान्त्रिक पद्धति का समर्थन कैसे कर सकते थे।

तिब्बत मे चीन की गतिबिधिया बढने से नेपाल की सुरक्षा के बारे मे भारत की चिन्ता बढ गयी और १७ मार्च १९५० को प्रधानमत्री नेहरू ने ससद मे कहा कि नेपाल पर कोई भी सम्भावित आक्रमण निश्चित रूप से भारत के लिए खतरा होगा। अप्रैल १९५० मे जनरल

विजय शमशेर और एन एम दीक्षित ने नेपाल सरकार के प्रतिनिधि के रूप मे भारत की यात्रा की और ३० जूलाई १९५० को दोनो देशो के मध्य एक सधि हुई पर इसी बीच नेपाल मे घटित घटनाओ के कारण भारत सरकार और नेपाल की राणा सरकार के सम्बन्धो मे तनाव उत्पन्न हो गया।

इसी समय १९५० के राणाशाही से मुक्ति के लिए प्रयास शुरू हुआ। १६ नवम्बर १९५० को नेपाल के महाराजा त्रिभुवन ने राज परिवार के १४ सदस्यो के साथ अपने राजमहल का परित्याग कर भारत मे शरण ली। राजा शमशेर के विरूद्ध गृहयुद्ध शुरू हो गया। यह विद्रोह भारत के भू-भाग से ही सचालित किया गया। भारत के सहयोग से ही नेपाल मे राणाशाही का अन्त हुआ और नेपाल के महाराणा वास्तविक शासक बने तथा लोकतत्र की स्थापना हुई। इस समय पण्डित नेहरू ने कहा था। नेपाल की स्वतत्रता का सम्मान करते हुए भी हम नेपाल मे कोई अव्यवस्था सहन नही कर सकते क्योकि इससे हमारी सीमा सुरक्षा कमजोर हो जाती है। भारत ने बार-बार सयुक्त राष्ट्र सघ मे नेपाल की सदस्यता की वकालत की और १९५५ मे उसके सदस्य बन जाने पर प्रसन्नता प्रकट की। नेपाल के विदेश मत्री ने १ फरवरी, १९५५ को एक भाषण मे कहा कि नेपाल किसी भी दशा मे भारत के विरूद्ध नही जायेगा। भारत ने नेपाल को अन्तराष्ट्रीय मानसिकता प्राप्त करने मे बडी सहायता दी है और वह नेपाल का सबसे बड़ा मित्र है[2]। इसके कुछ समय पश्चात

भारत की लोकसभा मे बोलते हुए नेहरू ने विदेश नीति पर एक दूसरे से परामर्श करने की उस धारा की पुष्टि की जो भारत-नेपाल की मित्रता सधि १९५० मे दी गयी थी। उन्होने यह स्पष्ट कर दिया कि भारत का इरादा नेपाल के आन्तरिक मामलो मे हस्तक्षेप करने का नही किन्तु नेपाल की धटनाओ का भारत पर महत्त्वपूर्ण प्रभाव पडता है। अतएव भारत का नेपाल के विषय मे चिन्ता करना एव सतर्क रहना स्वाभाविक है।

अनेक कारणो से १९५३-५४ मे भारत के प्रति नेपाली जनता का आक्रोश उभरकर सामने आया। वहा के लोगो को यह भ्रम हुआ कि भारत उसके आन्तरिक मामलो मे हस्तक्षेप करता है। दूसरा भारत मे बहकर आने वाली कोसी नदी पर नेपाली भूमि मे बाध बना था। तीसरे भारतीय नदी नेपाल मे थी और भारतीय तकनीकी विशेषज्ञ भी वहॉ थे। चौथा व्यापार समझौते मे कुछ प्रतिबन्ध भारत की ओर से लगे हुए थे। इन्ही सब कारणो से १९५४ मे जब भारतीय सदभावना मण्डल नेपाल पहुचा तो कुछ लोगो ने काले झण्डे दिखाकर प्रदर्शन किया था।

नेपाल के प्रधानमत्री टका प्रसाद ने इसे असन्तुष्ट विरोधी दलो का प्रदर्शन कहते हुए स्पष्ट किया कि नेपाल की अपनी प्रार्थनाओ पर भारतीय सेना आयोग १९५१ मे नेपाल की सेना को सगठित करने और प्रशिक्षण देने आया था। नेपाली सेना मे कोई भारतीय परामर्शदाता नही थे और जो थोड़े से भारतीय परामर्शदाता थे वे भी

तकनीकी सहायता सचालक के अर्न्तगत थे ।कोसी बॉध के कारण नेपाल का भी लाभ था और यहा भूमि भारत ने क्रय की थी और इससे नेपाल की सार्वभौमिकता पर प्रतिकूल प्रभाव नही पडता था। नेपाल ने स्वय भी रेलवे के लिये बिहार मे भूमि खरीदी थी। स्थिति की ओर भी स्पष्ट करते हुए भारतीय राजदूत ने कहा कि नेपाल की दी जाने वाले भारतीय सहायता मे कोई भी शर्त नही जोडी गयी है और यह सहायता नेपाल सरकार की प्रार्थना पर दी गयी है। भारतीय सैनिक एव अन्य विशेषज्ञ पूर्ण रूप से परामर्शदाता के रूप मे है उनकी कोई राजनीतिक स्थिति नही है और ये नेपाल से कुछ नही लिया है, जबकि नेपाल को इस बाध के कारण बिजली एव सिचाई की सुविधा मिलेगी[3]।

१९५५-५६ के बीच भारत एव नेपाल के मैत्रीपूर्ण सम्बन्ध नेपाल के महाराजा की भारत यात्रा नवम्बर १९५५ एव भारतीय राष्ट्रपति की नेपाल यात्रा अक्टूबर १९५६ से और भी घनिष्ठ हो गये। काठमाण्डू लौटकर नेपाल के महाराजा ने एक नागरिक सभा मे कहा कि नेहरू को उन्होने नेपाल का सबसे अच्छा मित्र पाया। भारत के राष्ट्रपति राजेन्द्र प्रसाद ने कहा कि भारत की नेपाल मे कोई क्षेत्रीय महत्वाकाक्षाए नही है- हमारे मित्र आपके मित्र है और आपके मित्र हमारे।

इधर १९५५ से चीन नेपाल मे सक्रिय होने लगा। १९५६ मे

नेपाली प्रधानमत्री ने चीन की यात्रा की और २० सितम्बर, १९५६ को नेपाल-चीन मैत्री सधि पर हस्ताक्षर हुए। जनवरी १९५७ मे चीन के प्रधानमत्री चाऊ-एन-लाई नेपाल आये । अपने भाषणो मे उन्होने नेपाल की स्वतन्त्रता और सार्वभौमिकता को अक्षुण बनाये रखने मे यथाशक्ति सहायता का आश्वासन ऐसे ढग से दिया जिससे प्रतीत हुआ कि नेपाल की स्वतन्त्रता को भारत से खतरा है । उन्होने यह भी कहा कि नेपालियो और चीनियो की एक ही प्रजाति है । चीन नेपाल को ६ करोड रूपयो की सहायता देने का भी वचन दिया । नेपाल का चीन के प्रति अधिक झुकाव होना एव भारत से दूर हटना स्वाभाविक था । १९५९ मे नेपाल के प्रधानमत्री कोइराला ने चीन की यात्रा की और चाऊ-एन-लाई को पुन नेपाल आने के लिए आमान्त्रित किया । चीन एव नेपाल के मध्य एवरेस्ट पर्वत शिखर के बारे मे एक समझौता भी हुआ जिसकी भारत मे ही कडी आलोचना हुई।

कोइराला मन्त्रिमण्डल कुछ ही समय बाद भग कर दिया गया और नेपाली काग्रेस के अनेक नेताओ को गिरप्तार कर लिया गया किन्तु इनमे से कुछ व्यक्ति भागकर भारत चले गये और यही से नेपाल मे जन आन्दोलन को सचालित करने तथा सफल बनाने का प्रयत्न करने लगे[4] । नेपाल मे यह समझा गया कि भारत द्वारा नेपाल नरेश विरोधी कार्य को प्रश्रय दिया जा रहा है । इससे दोनो देशो के आपसी सम्बन्धो मे कटुता आ गयी, जो १९६१ तक बराबर बनी रही।

भारत की अनेक चेतावनियो को अनसुनी करके महाराजा महेन्द्र ने काठमाण्डू-ल्हासा मार्ग बनाने के सम्बन्ध मे चीन से समझौता करके भारत के लिए खतरा उत्पन्न कर दिया। महाराजा महेन्द्र चीन यात्रा पर गये। उन्होने भारत के ऐतिहासिक और अटूट सम्बन्धो का जिक्र किया किन्तु साथ ही चीन के साथ पुरातन सम्बन्धो की चर्चा की जो पुनस्थापित हो रहे थे। भारत के प्रति उन्होने उदासीनता का रूख अपनाया। जब १९६२ मे भारत-चीन युद्ध प्रारम्भ हुआ तब नेपाल ने तटस्थता की नीति अपनायी जिसे भारत ने पसन्द नही किया।

जहा तक भारत-नेपाल का सम्बन्ध (१९६२-१९७७) है। १९६२ मे यद्यपि नेपाल भारत-चीन युद्ध मे तटस्थ अवश्य रहा किन्तु चीनी आक्रमण से नेपाल चौकन्ना हो गया। चीनी आक्रमण के बाद भारत के लिए नेपाल मे अपनी स्थिति दृढ करना भी आवश्यक हो गया। तत्कालीन गृहमत्री लालबहादुर शास्त्री ने नेपाल की यात्रा की और सरल सौम्य नीति से नेपाल के अनेक सन्देह भी दूर किये। इसके बाद ही नेपाल नरेश १३ दिन की भारत यात्रा पर आये एव डा० राधाकृश्णनन ने नेपाल की यात्रा की। इस समय नेपाल सरकार ने आश्वासन दिया कि नेपाल के मार्ग से भारत पर कोई आक्रमण नही हो सकेगा[5]।

२३ सितम्बर १९६४ को भारत के विदेशमत्री सरदार स्वर्णसिह ने

नेपाल की यात्रा की। इस समय नेपाल और भारत के मध्य एक समझौता हुआ । इसके अनुसार भारत ने नेपाल के लिए ९ करोड रूपयो की लागत से सीमावर्ती कस्बे सुगोली और मध्यपूर्वी नेपाल मे ओखरा घाटी के बीच १२८ मील लम्बी सडक बनाने का
निश्चय किया । काठमाण्डू से लेकर भारतीय सीमा मे रक्सैल को जोडने वाली एक अन्य सड़क योजना भी बनी। कोसी योजना पूर्ण करने का निश्चय किया गया ।कोसी योजना का उद्देश्य नेपाल की बाढ से बचाना बिजली पूर्ति करना एव सिचाई मे लाभ पहुचाना था[6]।

दिसम्बर १९६५ मे नेपाल नरेश ने पुन भारत की यात्रा की । इस यात्रा के अन्त मे भारतीय प्रधानमत्री लालबहादुर शास्त्री एव नेपाल नरेश की सयुक्त विज्ञप्ति मे नेपाल नरेश ने स्वीकार किया कि भारत की सहायता से नेपाल मे चल रहे विकास कार्यो की प्रगति सन्तोषपूर्ण ढग से हुई । भारतीय प्रधानमत्री ने विश्वास दिलाया कि नेपाल की पचवर्षीय योजना मे भारत अधिकतम सहयोग देगा।

जनवरी १९६६ मे सूर्यबहादुर थापा नेपाल के नये प्रधानमत्री बने । वे मार्च १९६६ मे भारत आये । भारत और नेपाल के सम्बन्धो मे इससे कुछ सुधार हुआ परन्तु शीघ्र ही साढे चार वर्गमील के सुस्ता क्षेत्र को लेकर दोनो देशो मे सीमा-विवाद उठ खड़ा हुआ।
अक्टूबर १९६६ मे श्रीमती इन्दिरा गाधी ने नेपाल की यात्रा की

उन्होने नेपाल के पचायती लोकतत्र की सराहना की और महाराजा महेन्द्र को दार्शनिक शासक कह कर पुकारा । जून १९६९ मे चीन के दबाव मे आकर नेपाली प्रधानमत्री के एन विष्ट ने भारत से नेपाल की उत्तरी सीमा पर काम करने वाले तकनीशियनो को वापस बुलाने और अपनी सैनिक चौकिया हटा लेने की माग की। इससे भारत मे काफी प्रभाव पडा । नेपाल ने समझ लिया कि भारत एक दुर्बल पडोसी नही है[7]।

१९७२ मे राजा महेन्द्र के निधन के बाद वीरेन्द्र नेपाल के राजा बने। उन्होने नेपाल के विकास कार्यक्रमो मे सहायता देने मे भारत की उदारता की सराहना की। १९७४-७५ मे सिक्किम के भारत मे विलय की घटना की नेपाल मे प्रतिक्रिया हुई किन्तु भारत ने इस बात का आश्वासन दिया कि नेपाल और सिक्किम की स्थिति भिन्न है । अक्टूबर १९७५ मे महाराजा वीरेन्द्र भारत आये और भारत ने नेपाल को आश्वासन दिया कि वह उसकी पचवर्षीय योजनाओ मे भरपूर सहायता देगा। अप्रैल १९७६ मे नेपाल के प्रधानमत्री तुलसीगिरि भारत आये तो उन्होने 'समदूरी' सिद्धान्त के तहत भारत और चीन से समदूरी पर बल दिया । लेकिन भारत सरकार इस बात पर बल देती रही कि नेपाल के भारत से विशिष्ट सम्बन्ध है अत उसका समदूरी सिद्धान्त अनुचित है ।

अब हम लेते हैं जनता सरकार के दौरान भारत-नेपाल सम्बध

को जनता पार्टी सरकार ने नेपाल से मधुर सबध स्थापित करने के लिये पुरजोर प्रयत्न किये । १९७६से अधर मे लटकी हुयी व्यापार और आवागमन सधि को बिल्कुल उसी तरह सम्पन्न किया जैसा कि नेपाल चाहता था[7] । मार्च १९७८ मे एक के बजाय दो सधिया की गयी। दोनो मे रियायतो का अम्बार लगा दिया गया । नेपाली उद्योग के विकास का जिम्मा भारत ने अपने कन्धो पर लिया तथा नेपाल द्वारा विनिर्मित लगभग ६० वस्तुओ पर से तटकर हटा लिया। नेपाल को १६ आवश्यक वस्तुए निर्मित देते रहने का दायित्व भी भारत ने सभाला। पारगमन सधि के अन्तर्गत भूवेष्टित देशो को भी प्राप्त नही है । भारत नेपाल सबधो को सुधारने के लिये विदेश मत्री ने दो वर्षो मे काठमाडू की अनेक यात्राये की। श्री देसाई भी नेपाल गये।इस बीच नेपाल नरेश तथा प्रधानमत्री भी भारत यात्रा पर आये ।

राजीव गाधी के काल तक भारत नेपाल के मध्य मतभेद के कई बिन्दु पैदा हो चुके थे। भारत और नेपाल के सुरक्षा सम्बन्धी हित समान होने पर भी उनके सम्बन्धो मे अत्यधिक उतार-चढाव रहा है। अनेक बार भारतीय हितो की उपेक्षा करते हुए अर्थात भारतीय हितो के विरूद्ध नेपाल ने साम्यवादी चीन के साथ समझौते किये। भारत और नेपाल मे गलतफहमिया विद्यमान रही है और वस्तुओ के लिए पारगमन की सुविधाओ और व्यापार सचालन के सम्बन्ध मे मतभेद रहे है। नेपाल मे चीन की गतिविधिया भारत विरोधी और ध्वसात्मक रही है। नेपाल द्वारा काठमाण्डू-ल्हासा सडक मार्ग बनाने के सबध मे

चीन के साथ समझौता स्पष्टत भारत विरोधी कदम था। एवरेस्ट पर्वत के सबध मे नेपाल-चीन मे प्रारम्भिक समझौता भारत के प्रति विश्वासघात था।। आजकल नेपाल का आग्रह है कि नेपाल को शाति क्षेत्र घोषित किया जाये[9]। भारत सरकार का दृष्टिकोण यह है कि केवल नेपाल ही क्यो सम्पूर्ण उपमहाद्वीप को शान्ति क्षेत्र घोषित किया जाये। चीन पाकिस्तान श्रीलका और बगलादेश ने नेपाल के दृष्टिकोण का समर्थन किया है। १९८३ मे राष्ट्रपति रीगन ने भी नेपाल को शान्ति क्षेत्र घोषित करने की माग को समर्थन दिया था। अलोचक इसे भारत विरोधी प्रस्ताव मानते है। उनके अनुसार यह अप्रत्यक्ष रूप से भारत पर एक प्रकार का दोषारोपण है कि भारत नेपाल के लिए खतरा है। सभवत नेपाल को शान्ति क्षेत्र घोषित कराने के पीछे नेपाल का प्रधान उद्देश्य भारत के प्रभाव और विशिष्ट स्थिति को नकारना है जिसे वह अपने राष्ट्रीय व्यक्तित्व की खोज मे ही बाधक मानता है। यह उसकी भारत और चीन के मध्य ऐतिहासिक सन्तुलनकारी भूमिका का एक रूप भी हो सकता है नेपाल इस प्रस्ताव को भारत से अधिकाधिक आर्थिक सहायता पाने के लिए एक सौदेबाजी के आधार के रूप मे भी उपयोग करना चाहता है।

भारत के प्रथम युवा प्रधानमत्री राजीव गाधी की विदेश नीति विषयक समझ ज्यादा वैज्ञानिक और स्थापित अतर्राष्ट्रीय मानको के अनुरूप थी[10]।

उनके काल मे नेपाल के साथ भारत का सहयोग निरन्तर बढता चला गया। सितम्बर,१९८५ मे महामहिम नेपाल नरेश ने अपनी दिल्ली यात्रा के दौरान व्यापक विचार - विमर्श किया। नेपाल की विकास परियोजनाओ मे भारत की मदद की सराहना की गयी। दोनो देशो के बीच पारगमन सधि को मार्च १९८९ तक बढाया गया। इस सधि से भारत के रास्ते नेपाल को समुद्री मार्ग मिलता है[11]।

भारत और नेपाल के बीच सभी क्षेत्रो मे सबध सुदृढ होते गये है। १९८६ मे २१ से २५ जुलाई तक भारत के राष्ट्रपति नेपाल की राजकीय यात्रा पर गये। इस दौरान भारत के राष्ट्रपति और नेपाल नरेश के बीच लाभदायक विचार विमर्श हुआ। दोनो पक्षो के बीच आपसी सबधो के विभिन्न पहलुओ पर अधिकारी स्तर पर विचार विमर्श किया गया[12]। प्रधानमत्री श्री राजीवगॉधी और नेपाल नरेश के बीच दो बार सितम्बर १९८६ मे हरारे मे और नवम्बर १९८६ मे बेगलूर मे बातचीत हुयी। इन मुलाकातो से दोनो नेताओ को द्विपक्षीय सबधो के सभी पहलुओ पर नि सकोच और मैत्रीपूर्ण बातचीत करने का मौका मिला[13]।

भारत ओर नेपाल के बीच परम्परागत मैत्री सबधो की पुष्टि होती रही। प्रधानमत्री ने सार्क शिखर सम्मेलन के लिये नवम्बर,१९८७ मे काठमाडू की यात्रा की और नेपाल नरेश के साथ विविध मुददो पर सफल बातचीत की। भारत नेपाल के बीच गहन आर्थिक सहयोग को जून १९८७ मे भारत नेपाल मे सयुक्त आयोग की

स्थापना के लये हस्ताक्षरित समझौते से और भी बल मिला[14]।

व्यापार और पारगमन के मामले पर भारत और नेपाल के बीच मतभेद होने के बावजूद दोनो देशो के बीच परस्पर यात्राओ के आदान प्रदान की परम्परा जारी रही । नेपाल के साथ व्यापार और पारगमन की सधियो की अवधि २३मार्च,१९८९ को समाप्त हो गयी। इस मामले को हल करने के लिये मार्च १९८९ मे विदेश मत्री स्तर की वार्ता हुयी इसके बावजूद मतभेद बने रहे। भारत के विदेश मत्री ने एक बार फिर अगस्त१९८९ मे काठमाण्डू मे बातचीत की। महाराजा वीरेन्द्र से भी मिले। कुछ समय बाद नेपाल के महाराजा सितम्बर १९८९ मे नौवे गुटनिरपेक्ष शिखर सम्मेलन के दौरान बगलूर मे तत्कालीन प्रधानमत्री राजीवगॉधी से मिले। ये शिखर वार्ता लाभदायक सिद्व हुयी। मौजूदा मतभेदो को शान्तिपूर्वक ढग से दूर करने के उद्देश्य से समूचे भारत नेपाल सबधो की समीक्षा करने के लिये भारत ने हमेशा तत्परता दिखायी है[15]।

(क) राजीव गाधी के प्रयासो से ही आगे चलकर भारत नेपाल के आर्थिक-तकनीकी सबध मजबूत हुए। उनके बाद भी विकास कार्यो मे सबसे अधिक धन भारत का ही लगा हुआ है ।नेपाल को भारत ने हर तरह का प्रशिक्षण दिया है भारत ने अनेक नेपाली नागरिको को प्रशिक्षण किया है । भारत ने नेपाल को जिन परियोजनाओ के लिये सहायता दी है,उनमे प्रमुख है।

(क) देवीघाट, त्रिशूल करनाली, पचेश्वर जल-विद्युत योजनाये

(ख) त्रिभुवन गणपथ काठमाण्डु-त्रिशूली मार्ग त्रिभुवन हवाई अड्डा

(ग) काठमाण्डु रक्सौल टेलीफोन सयन्त्र

(घ) चत्र नहर परियोजना कोसी और गडक परियोजना,

(च) भूवैज्ञानिक अनुसधान तथा खनिज खोजबीन का काम,

(छ) वीरगज और हितौदा रेल निर्माण तथा

(ज) काठमाण्डु घाटी के एक उपनगर पाटन मे एक औद्योगिक बस्ती की स्थापना[16] ।

दिसम्बर १९९० मे एक द्विपक्षीय करार पर हस्ताक्षर हुए जिसके अर्न्तगत भारत टर्न की और सहायक अनुदान के आधार पर रक्सौल मे करोड रूपये की लागत से एक नये रोड एव रेल पुल का निर्माण करेगा जो कि भारत-नेपाल से आने-जाने के लिए और माल लाने - ले जाने के लिए सर्वाधिक महत्वपूर्ण सीमा स्थल होगा। दिसम्बर १९९१ मे भारत ने नेपाल के महान देश भक्त एव स्वतत्रता सग्राम सेनानी वी एच कोइराला की पुण्यतिथि मे भारत-नेपाल फॉउण्डेशन बनाने का प्रस्ताव स्वीकार कर लिया। दोनो ही देश दो-दो करोड रूपये के अशदान से स्थापित इस फाउण्डेशन के द्वारा द्विपक्षीय सहयोग को बढावा देगे। वे औद्योगिक क्षैत्र मे साझा उद्यम लगाने को भी सहमत हो गये है। इसके अन्तर्गत चीनी कागज तथा सीमेट पर विशेष ध्यान दिया जायेगा। नेपाल के आग्रह पर भारत विराट नगर मे वी पी कोइराला स्मृति मेडिकल कालेज रगेली मे एक टेलीफोन एक्सचेज, विराट- नगर -झापा तथा चतरावीपुर मार्ग

के निर्माण जनकपुर-बीजलपुर के रेल लाइन के नवीनीकरण और रक्सौल तक की रेल लाइन को बडी लाइन मे परिवर्तित करने को राजी हो गया है[17]।

भारत भूटान सबध- भूटान पूर्वी हिमालय मे स्थित एक छोटा-सा स्वतत्र राज्य है। इसके पश्चिम मे भारत का सिक्किम प्रान्त तथा बगाल का दार्जिलिग जिला इसे नेपाल से अलग करता है। इसकी उत्तरी तथा उत्तर-पूर्वी सीमा पर तिब्बत और इसके पूरब तथा दक्षिण मे भारत का असम प्रान्त है।

भूटान एक पर्वतीय राज्य है और पर्वतो के बीच घाटियो मे बसा हुआ है। इसका क्षेत्रफल १८ ००० वर्गमील और जनसख्या लगभग ८ लाख है। यहा अधिकतर भूटिया जाति के लोग रहते है। भूटान के लोग बौद्ध धर्मावलम्बी है।

भारत की प्रतिरक्षा मे भूटान का अत्यधिक महत्व है। भारत की उत्तरी प्रतिरक्षा व्यवस्था मे भूटान को भेद्यागा की सज्ञा दी जाती है। चुम्बी घाटी से चीलन की सीमाए केवल ८० मील है। यदि चीन विस्तारवादी इरादो से इस क्षेत्र मे घुसपैठ करे तो वह न केवल भूटान को बल्कि उत्तरी बगाल असम और अरूणाचल प्रदेश को भारत से काट सकता है। चीन ने भूटान-तिब्बत की वर्तमान प्राकृतिक सीमाओ को कभी स्वीकार नही किया। सौभाग्य से भारत-भूटान सम्बन्ध मित्रतापूर्ण रहे है और उनमे कोई प्रमुख समस्या नही है।

भारत भूटान को एक स्वतन्त्र देश के रूप मे बनाये रखना चाहता है। भारत की पहल पर ही भूटान १९७१ मे सयुक्त राष्ट्र सघ का सदस्य बना। १९७३ मे वह निर्गुट आन्दोलन मे शामिल हुआ १९७७ मे भारत ने भूटान के राजदूतावास का नई दिल्ली मे दर्जा बढा दिया भूटान सार्क का भी सदस्य है और वह दक्षिण एशिया मे डाक सेवाओ मे सहयोग सम्बन्धी समिति का अध्यक्ष है।

जहॉ तक भारत भूटान सम्बन्ध के सक्षिप्त इतिहास का प्रश्न है आज से लगभग ५०० वर्ष पूर्व तिब्बत के खामा प्रान्त के लोग यहा आकर बस गये और धीरे-धीरे उन्होने इस पर कब्जा कर लिया। आगे चलकर वर्तमान महाराजा के पूर्वजो ने लामाओ के प्रभुत्व को समाप्त कर दिया और भूटान पर अपना आधिपत्य जमा लिया। भारत-भूटान सम्बन्धो की शुरूआत १८६५ की सन्धि जो कि भारत की ब्रिटिश सरकार और भूटान के मध्य हुई थी, के द्वारा भूटान को भारतीय रियासत का रूप प्रदान किया गया था। उसके बाद १९१० मे पुनरवा सन्धि द्वारा इन सम्बन्धो को सुदृढ किया गया। इस सन्धि के अन्तर्गत तत्कालीन ब्रिटिश भारत सरकार ने भूटान के आन्तरिक मामलो मे हस्तक्षेप न करने और भूटान ने विदेशी मामलो मे भारत से निर्देशित होना स्वीकार कर लिया।

अगस्त १९४९ मे भूटान सरकार ने स्वतन्त्र भारत की सरकार

से एक नई सन्धि की समे पुनरवा सन्धि की अनेक धाराओ का उल्लेख किया।

इसमे दोनो देशो ने चिरस्थायी शान्ति और मित्रता को सुनिश्चित करने का आश्वासन दिया। इस सन्धि के अनुसार भूटान और भारत का सम्बन्ध पूर्ववत बनाये रखने का निश्चय किया गया। भारत ने भूटान के आन्तरिक मामलो मे हस्तक्षेप न करने का वचन दिया। सन्धि के अनुच्छेद २ मे कहा गया कि भूटान सरकार विदेशी मामलो मे भारत सरकार की सलाह को मार्गदर्शन के नाते मानने के लिए सहमत है। यह भी व्यवस्था की गयी कि भारत ५ लाख रूपये वार्षिक सहायता देगा। सिक्किम ने सन्धि के जरिये उसका वैदेशिक सम्बन्ध और प्रतिरक्षा का भार भारत को सौप दिया था। लेकिन भूटान ने इस सन्धि के द्वारा केवल विदेश नीति का भार ही भारत को सौपा था। भारत चीन युद्ध के बाद भूटान ने प्रतिरक्षा का भार भी भारत को सौप दिया[18]।

नेहरू और श्रीमती इन्दिरा गाधी के प्रधानमन्त्रित्व काल मे भारत और भूटान के सम्बन्ध बहुत मधुर रहे। भारत ने भूटान के विकास मे सक्रिय रूचि ली और उसे आर्थिक सहायता दी ।
३० करोड रूपये की लागत से भारतीय सीमा सडक सगठन ने भूटान मे १००० किलोमीटर लम्बी सडक का निर्माण किया। चीन भूटान के ३०० वर्गमील क्षेत्र पर दावा करता है इस क्षेत्र मे भी एक सडक बनायी गयी। भूटानी विद्यार्थी भारत मे शिक्षा ग्रहण करने आने

लगे। भारत ने भूटान मे हवाई पटिटया भी बनायी जिन पर हेलीकाप्टर उड सकते है। भारत के सहयोग से ही भूटान की नयी राजधानी थिम्पू का निर्माण किया गया। भूटान के दूसरे महत्वपूर्ण नगर पारो का विकास भी भारत के सहयोग से हुआ। भारत ने भूटान मे विद्यालय और अस्पताल बनवाये।

१९७० मे भूटान ने सयुक्त राष्ट्र सघ का सदस्य बनने के लिए प्रार्थना-पत्र दिया जिसका भारत ने समर्थन किया । सितम्बर १९७१ मे भूटान सुयुक्त राष्ट्र सघ का सदस्य बन गया। बगला देश के सकट के समय भूटान ने भारत को नैतिक समर्थन प्रदान किया तथा भूटान ने भारत के तुरन्त बाद बगला देश को मान्यता दे दी। १३-१४ अगस्त १९७६ को भूटान नरेश गुटनिरपो राष्ट्रो के शिखर सम्मेलन मे भाग लेने जाते हुए दिल्ली रूके। इस गुटनिरपेक्ष सम्मेलन मे भूटान ने भारत की अच्छे पडोसी की नीति की प्रशसा की ।

सन १९७३ मे सिक्किम के भारत विलय की घटना ने भूटान पर गहरा प्रभाव डाला और भूटान ने बडी बारीकी के साथ अन्य देशो से मेल-मिलाप बढाने का अभियान छोडा। १९७४ मे भूटान नरेश के राज्यारोहण के अवसर पर भूटान ने १९४९ की सन्धि की धारा २ की व्याख्या का प्रश्न उठाया। भूटान ने इसकी यह व्याख्या करने का प्रश्न किया कि भूटान वैदेशिक सम्बन्धो के मामले मे भारत के परामर्श को मानने के लिए बाध्य नही[19] ।

जहा तक मे जनता पार्टी शासन और भारत भूटान सम्बन्धो का प्रश्न है भारत और भूटान के सम्बन्धो मे प्रकट रूप से कोई तनाव नही था किन्तु जनता पार्टी के शासन के दौरान दो छोटी-छोटी समस्याओ का समाधान हुआ। एक तो १९७२ के व्यापार समझौते की धारा ५ के अनुसार भूटानियो पर भी विदेशी व्यापार के सम्बन्ध मे वे ही कानून-**कायदे** लागू होते थे जो कि भारतीय व्यापारियो पर होते थे। भूटान की माग थी कि इस अड़चन को हटाया जाये। विदेश मन्त्री वाजपेयी की भूटान यात्रा के दौरान इस समस्या का समाधान हुआ। दूसरा भूटान की इस पुरानी माग को भी स्वीकार किया गया कि उसे नई दिल्ली मे राजदूतावास खोलने दिया जाये। जनता शासन ने भूटानी मिशन को न केवल राजदूतावास को दर्जा दिया अपितु उसे बगला देश से भी राजनयिक सम्बन्ध स्थापित करने की सुविधा दी गयी। दोनो देशो के सम्बन्धो को घनिष्ठ बनाने के लिए भूटान के युवा नरेश जिग्मे सिघे वागचुक ने दो बार भारत की यात्रा की तथा भारतीय विदेश मन्त्री वाजपेयी भी एक बार भूटान गये। वाजपेयी ने दावा किया कि भारत और भूटान के सम्बन्ध अत्यन्त उत्तम है तथा जो कुछ छोटी-मोटी अडचने थी उन्हे दूर कर दिया गया है[20]।

मार्च १९७८ मे भूटान नरेश भारत आये तो भारत ने भूटान को चौथी पचवर्षीय योजना के लिए ७० करोड रूपये का अनुदान स्वीकार किया। यह योजना कुल ७७ करोड रूपये की थी। इस

अवसर पर भूटान नरेश वागचुक ने कहा था कि भूटान को भारत की मित्रता पर भरोसा है।

जून १९८१ मे विदेश मन्त्री पी वी नरसिम्हा राव थिम्पू की सदभावना यात्रा पर गये। भारत ने भूटान की पाचवी विकास योजना के लिए १३९ करोड रूपये देने का प्रस्ताव किया। भूटान को पारो से कलकत्ता तक अन्तर्राष्ट्रीय विमान सेवा प्रारम्भ करने की अनुमति दी गयी। असम-पश्चिम बगाल के साथ सीमा निर्धारण के लिए खम्भे लगाये गये और भारत ने भूटान मे रहने वाले १ ५०० तिब्बती शरणार्थियो को लेना स्वीकार कर लिया। भारत और भूटान के बीच १० दिसम्बर, १९८३ को एक व्यापारिक समझौता हुआ। इसमे भारत ने वायदा किया कि भारत भूटान के व्यापार को अन्य बाहरी देशो के साथ बढाने मे मदद करेगा। सन १९८४ मे भारत और भूटान के बीच दूर सचार और माइक्रोवेव की व्यवस्था की गयी।

जहा तक भारत और भूटान के बीच मतभेद के मुद्दो का प्रश्न है भारत और भूटान के बीच कुछ मनमुटाव १९४९ की भारत-भूटान मैत्री की धारा २ की व्याख्या को लेकर है। इस धारा मे कहा गया है कि भारत भूटान के आन्तरिक मामलो मे कोई दखल नही देगा, लेकिन विदेशी मामलो मे भूटान को भारत की सलाह-मशविरा से ही चलना पडेगा। भूटान का मत है कि इस धारा की मनचाही व्याख्या नही की जा सकती। भारत का मत है कि १९४९ की सन्धि के तहत

भारत भूटान की रक्षा के लिए बाध्य है। भूटान इस प्रकार की व्याख्या का खण्डन करता है। कामचलाऊ सरकार के समय वागचुक ने १९४९ की सन्धि की धारा २ पर पुनर्विचार की बात कही थी[21]।

भारत-भूटान सम्बन्धो मे कतिपय गौड मुद्दो को लेकर भी उत्तेजना पैदा होती जा रही है। ये है - भूटान के आयात-निर्यात पर भारत के कानूनो का लागू होना। १९७२ के व्यापार समझौते की धारा पाच मे इसकी व्यवस्था है। नवम्बर १९७७ मे भारत के तत्कालीन विदेश मन्त्री अटल बिहारी वाजपेयी ने अपनी भूटान यात्रा के दौरान उसे आश्वासन दिया था कि ये नियम अब भूटान के माल पर लागू नही होगे। पर्यटको के लिए आन्तरिक रेखा परमिट व्यवस्था। भूटान का मत है कि विदेशी पर्यटको को भूटान आने मे परमिट न मिलने से राजस्व की हानि होती है अत इसमे भारत को उदार नीति अपनानी चाहिए[22]।

विभिन्न अन्तर्राष्ट्रीय मुद्दो पर भी भूटान ने भारतीय दृष्टिकोण से भिन्न नीति अपनायी है। हवाना गुटनिरपेक्ष सम्मेलन १९७९ मे जहा भारत बहुसख्यक निर्गुट देशो के साथ कम्पूचिया की सीट को खाली रखने के पक्ष मे था वहा भूटान ने कम्पूचिया की सीट पोल पोत समूह को देने की वकालत की। भारत जहा परमाणु अप्रसार सन्धि को पक्षपातपूर्ण मानता है वहा भूटान इस सन्धि के पक्ष मे है । जून १९८१ मे भूटानी विदेश मत्री ने राष्ट्रीय असेम्बली मे घोषणा की कि भूटान चीन के साथ सीधे द्विपक्षीय वार्ता करना चाहता है ताकि

भूटान-चीन सीमा को चिन्हित किया जा सके।

चीन की भूटान मे घुसपैठ निश्चित ही भारत की चिन्ता का कारण है। चीन ने पिछले दिनो मे पशुओ को चराने के बहाने भूटान की सीमाओ का अतिक्रमण किया। तिब्बती काफी अन्दर तक भूटान की सीमाओ मे चले आये। दूसरा भारत की चिन्ता का कारण भूटान मे रह रहे वे ४००० तिब्बती शरणार्थी है जो १९५९ से वहा रह रहे है और जिन्हे भूटान की राष्ट्रीय असेम्बली ने १९७९ मे एक प्रस्ताव पास कर कहा है कि वे या तो भूटान की नागरिकता स्वीकार करे और भूटान समाज मे घुल-मिल जाये या फिर उन्हे निकाल बाहर किया जाये अर्थात उन्हे तिब्बत वापस भेज दिया जाये। इस चेतावनी के पीछे चीन का हाथ है जो भारत के राष्ट्रीय हित और आदर्श के विपरीत है। यदि तिब्बती शरणार्थी भूटान नेपाल या भारत की नागरिकता ग्रहण कर लेते है तो फिर तिब्बत की स्वाधीनता का मसला ही समाप्त हो जाता है।

समीक्षाधीन वर्ष के दौरान भारत और भूटान के बीच परम्परागत निकट और मैत्रीपूर्ण सबध और भी मजबूत हुए सितम्बर १९८६ मे हरारे मे आयोजित नाम शिखर सम्मेलन और १९८६ मे १५से१७ नवम्बर तक बगलूर मे सम्पन्न सार्क शिखर सम्मेलन मे भूटान नरेश और प्रधानमत्री श्री राजीवगॉधी को आपसी हितो से सबधित मामलो पर उच्चतम स्तर पर विचार करने का मौका मिला।

इन दोनो देशो के बीच विद्यमान सहयोग और विश्वास के सबधो को परिलक्षित करती है।भारत ओर भूटान के परम्परागत रूप से निकट और मैत्रीपूण सबध और सुदृढ हुये[23] । नवम्बर १९८७ मे काठमाण्डू मे हुये सार्क शिखर सम्मेलन मे भूँटान नरेश एव प्रधान मत्री के बीच आपसी हितो के मामलो पर उच्च स्तर पर बातचीत करने का अवसर प्राप्त हुआ। वार्ताओ मे आपसी हित के मामलो पर विशेष रूप स विचारो की सामजस्यता परिलक्षित हुयी जिसस दो देशो के बीच मौजूदा आपसी विश्वास और सहयोग सबधो का पता चलता है। आर्थिक क्षेत्र मे सहयोग बढा है और भारत मे विभिन्न क्षेत्रो मे भूँटान को विशेषज्ञ उपलब्ध कराये है[24]।

भारत और भूटान के बीच परम्परागत घनिष्ठ और मैत्रीपूर्ण सबध और मजबूत हुये। महत्त्वपूर्ण यात्राओ का आदान प्रदान हुआ । १९८९ मे भारत की तरफ से विदेश सचिव तत्कालीन प्रधान मत्री श्री राजीवगाँधी और राष्ट्रपति श्री आर वेकटरामन ने भूटान की यात्रा की । भूटान से वहाँ के योजना उपमत्री श्री दाशो चेक्याब दोरजी और विदेश् मत्री श्री ल्योरो दावा त्सेरिग ने भारत की यात्रा की । इन यात्राओ के दौरान परस्पर हित के विषयो पर लाभदायक विचार विमर्श किया गया। आर्थिक क्षेत्र के सहयोग मे उल्लेखनीय वृद्धि हुयी ।अक्टूबर १९८८ मे प्रतिष्ठित चुखा पनबिजली परियोजना जो पूरी तरह भारतीय सहायता से बनायी गयी थी का राष्ट्रपति श्री

आर वेकटरामन और भूटान नरेश ने सयुक्त रूप से उदधाटन किया। भारत भूटान को वानिकी उधोग, दूरसचार पनबिजली सर्वेक्षण और शिक्षा आदि जैसे क्षेत्रो मे विशेषज्ञो और प्रौधोगिकविदो की सेवाए उपलब्ध कराता रहा है[25]।

पाद टिप्पणिया

1 Mukherjee Dilip Dealing with Nepal (Times of India June 6 1990)

2 Ramakant Nepal, China and India Page 84

3 Singh, L P India s Foreign Policy – The Shastri Period Page 103

4 Prasad Bimal India s Foreign Policy Studies and continuty and Change Page 139

5 Ramakant Nepal China and India Page 99

6 Times of India- 24 9 1964

7 Subramanyam, K Out national Security Page 168

8 Tharoor S Reasons of State-Political Development and India s Foreign Policy Under Indira Gandhi, 1966 67 Page 113

9 Dutt P V India Foreign Policy Page 169

10 Times of India 27 5 1991

11 'भारत १९८६' - सूचना एव प्रकाशन विभाग भारत सरकार - पृष्ठ - ७१८ ७१९

12 भारत १९८७' सूचना एव प्रकाशन विभाग भारत सरकार पृष्ठ ५१५

13 भारत १९८७ - सूचना एव प्रकाशन विभाग भारत सरकार पृष्ठ ५१५

14 'भारत १९८८ - सूचना एव प्रकाशन विभाग भारत सरकार पृष्ठ ५५६

15 भारत १९९०' सूचना एव प्रकाशन विभाग भारत सरकार पृष्ठ ६४५

16 Murty K S India Foreign Policy Page 112

17 Appadora, A and Rajan, M S India s Foreign Policy and Relation Page 165

18 Prasad Biman India's Foreign Policy Studies and continuty and change Page 239

19 Murti, K S India Foreign Policy Page 113

20 Appadora A and Rajan, M S India s Foreign Policy and Relation Page 191

21 Subramanyam, K. Our national Security Page 107

22 Times of India Editorial – 23 11 1977

२३ 'भारत १९८७' - सूचना एव प्रकाशन विभाग भारत सरकार - पृष्ठ ५१५

२४ भारत १९८८-८९ - सूचना एव प्रकाशन विभाग भारत सरकार - पृष्ठ - ५५६

25 'भारत १९९०' - सूचना एव प्रकाशन विभाग भारत सरकार पृष्ठ - ६४६

अध्याय-५

14 अगस्त, 1947 की आधी रात भारत ब्रिटिश दासता से मुक्त तो हुआ किन्तु वृहत्तर भारत का अविभाज्य अग पाकिस्तान विभाजित हो गया । समान सस्कृति भाषा बोल-चाल और परम्पराओं के बावजूद भारत के पाकिस्तान से सम्बध विभाजन के समय की गयी भूलो और पाकिस्तानी कटटरता के कारण सदा से ही कटु रहे ।इस अध्याय मे भारत - पाक सम्बन्धो की पेचीदिगियो का विश्लेषण तथा राजीव गाधी के प्रधानमत्रित्व काल मे किये गये समझौता प्रयासो का विवेचन किया जायेगा ।

एशिया महाद्वीप में ब्रिटिश उपनिवेशवाद की समाप्ति के साथ एक नये सघर्ष की शुरूआत हुई जिसके परिणामस्वरूप इस क्षेत्र से 'शान्ति' शब्द का लोप ही हो गया । यह सघर्ष है दो पडोसी देशो का सघर्ष जिसे भारत पाक सघर्ष के नाम से जाना जाता है । भारत विभाजन के समय की घृणा और अविश्वास ने दोनो ही देशो को आज तक युद्ध की तैयारी मे लगाये रखा । प्रारम्भ से ही दोनो देशो की सेनाए एक दूसरे के आमने सामने न केवल तैनात रही, अपितु तीन बडे युद्ध हुए और एक छोटी सी चिनगारी से किसी भी दिन चौथा युद्ध शुरू हो जाये तो आश्चर्य नही[1] । पाकिस्तान की विदेश नीति का आधार शुरू से ही भारत विरोध रहा है । पाकिस्तान मुस्लिम लीग की हिन्दुओ के प्रति घृणा की नीति का फल है, इसलिए पाकिस्तान के शासको के लिए यह आवश्यक हो गया कि वे भारत विरोध की नीति अपनाए, क्योकि यदि वे ऐसा नही करते है

तो उसके जन्म का आधार नष्ट हो जाता है । कश्मीर का प्रश्न इस नीति की प्रमुख अभिव्यक्ति है कश्मीर को प्राप्त करने के लिए कभी अमेरिका और ब्रिटेन का पिछलग्गू बने रहने की नीति तो कभी चीन की चापलूसी यही सकेत देती कि उसका भारत विरोध हमेशा बना रहेगा ।

भारत पाक सघर्ष की प्रकृति को सही रूप से समझने के लिये भारत विभाजन मे निहित तथ्यो का वस्तुनिष्ठ अध्ययन अपरिहार्य है । विभाजन की घटना ने दो समुदायो के बीच घृणा अविश्वास और वैमनस्य को क्रूरतम ढग से उजागर किया है । विभाजन के बाद सभी समस्याओ के स्वत ही सुलझ जाने का सपना देखते वालो ने जब वास्तविकता पर नजर दौडाई तो उन्हे घोर निराशा हुई । पाकिस्तान के जन्म से ही समस्याए सुलझने की अपेक्षा अधिक उलझती चली गयी और इस महाद्वीप मे नये सघर्ष का सूत्रपात हुआ जो अपनी पुष्टि से कही अधिक गहरा और पेचीदा था[2] ।

कुलदीप नैयर के शब्दो मे 'विभाजन के लिए आप किसी को भी दोषी ठहराये वास्तविकता यह है कि इस पागलपन की दो समुदायो और दो देशो के बीच दो पीढियो से भी अधिक समय तक के लिए सम्बन्धो मे कडवाहट उत्पन्न कर दी। दोनो देशो मे हर समय और हर कदम पर मतभेद बढता गया और छोटी से छोटी बात ने बडे विवाद का रूप धारण कर लिया।[3] माइकल ग्रेशर ने ठीक ही

लिखा है 'भारत और पाकिस्तान हमेशा अघोषित युद्ध मे रहे है।' भारत पाक सबधो की चर्चा करते हुये प० नेहरू ने भारतीय ससद मे स्पष्ट कहा कि लोगो मे यह भ्रान्ति पूर्ण धारणा है कि कश्मीर विवाद ही दोनो देशो के सघर्ष का कारण है। हमारी मूलभूत विचार धारा ही भिन्न है ।हम धर्म निरपेक्षवाद मे विश्वास करते है ।किन्तु पाकिस्तान इस्लामवाद और दुराष्ट्र सिद्धात मे विश्वास करता है । इस सिद्धात के अनुसार कश्मीर मे मुसलमानो का बहुमत पाकिस्तान के लिये एक असहनीय तथ्य है । भारत के प्रति शत्रुता का विचार पाकिस्तान की धार्मिक राजनीति का एक अनिवार्य अग बन गया है[4] ।

जहा तक भारत पाक सबधों को प्रभावित करने वाली समस्यायो का प्रश्न है भारत पाक सबधो को प्रभावित करने वाली समस्याये मुख्यत तीन प्रकार की है ।

विभाजन से उत्पन्न होने वाली समस्याये

भारत विरोधी नीति अर्थात जेहाद (धार्मिक युद्ध) की नीति से उत्पन्न होने वाली समस्या तथा

पाकिस्तान की सीटो सेण्टो की सदस्यता तथा भारत की किलेबदी से उत्पन्न होने वाली समस्या।

सर्वप्रथम हम विभाजन से उत्पन्न होने वाली समस्यायो को लेते है ।भारतीय नेताओं को आशा थी कि देश के विभाजन से शान्ति और आपसी मेल-जोल को बढावा मिलेगा और दोनो देश शान्ति सद्भावना और सहयोग के वातावरण मे आर्थिक विकास के

लम्बे और कठिन कार्य मे जुट जाएँगे। लेकिन पाकिस्तान के जन्म के साथ ही कुछ ऐसी समस्याये उत्पन्न हो गयी जिनके कारण प्रारम्भ से ही दोनो देशो के मध्य सबधो मे कटुता आ गयी । ये समस्याये थी क- हैदराबाद विवाद ख- जूनागढ विवाद ग- ऋण की अदायगी का प्रश्न घ- नहरी पानी विवाद च- शरणार्थियो का प्रश्न छ-कश्मीर विवाद [5]।

जहा तक हैदराबाद विवाद का प्रश्न है हैदराबाद भौगोलिक दृष्टि से भारत के अन्तर्गत मिल सकता था ।रियासत के निजाम का रवैया बहुत ही अस्पष्ट और अनिश्चयात्मक था पाकिस्तान ने हैदराबाद को इस भ्रम मे रखा कि मुसीबत के समय वह उसके साथ है ।हैदराबाद का निजाम एक स्वतत्र राज्य स्थापित किये जाने का स्वप्न सजोये था। किन्तु भ्रम बनाये रखने के लिये वह भारत के साथ विलय की बातचीत भी करता रहा ।निजाम का मूल लक्ष्य दक्षिणी भारत मे मुस्लिम वर्चस्व स्थापित करना था । पाकिस्तान के सहयोग और निजाम के आशीर्वाद से राजकारो ने मारकाट, लूटमार और हत्यारो के माध्यम से इस क्षेत्र मे भयावह स्थिति उत्पन्न कर दी । परिणाम स्वरूप भारत को सैनिक कार्यवाही करनी पडी । हैदराबाद रियासत को भारत मे सम्मिलित कर लिया गया । और निजाम को ५० लाख रूपये प्रिवीपर्स के रूप मे देना तय किया । पाकिस्तान ने इस प्रश्न को तीन बार सयुक्त राष्ट्र सघ मे उठाया किन्तु अमरीका के सिवाय उसमे किसी ने भी दिलचस्पी नही ली ।

अब हम लेते है जूनागढ़ विवाद को । जूनागढ काठियावाड की एक छोटी सी रियासत थी जिसका शासक मुस्लिम था । उसने रियासत को पाकिस्तान मे सम्मिलित करने की घोषणा कर दी और पाकिस्तान ने उसका सम्मिलन स्वीकार कर लिया जबकि वहॉ की अधिकाश जनसख्या हिन्दू थी ।रियासत की जनता ने नवाब को पाकिस्तान भागने के लिये बाध्य कर दिया और नवम्बर १९४७ मे मुस्लिम दीवान को बाध्य होकर भारत सरकार को हस्तक्षेप के लिये आमन्त्रित करना पडा ।लोगो की इच्छा को ध्यान मे रखते हुये जनमत सग्रह के बाद जूनागढ के मसले को लेकर भारत विरोधी प्रचार किया ।

जहा तक ऋण की अदायगी का प्रश्न है विभाजन के उपरान्त भारत ओर पाकिस्तान के बीच कई आर्थिक समस्याए थी । दोनो देशो के आमदनी और कर्ज का बटवारा एव लागत धन के बीच सतोषजनक बटवारा करना था । मुद्रा के सबध मे निर्णय लेना था । व्यापारिक सबध मे तनातनी शुरू हुयी क्योकि पाकिस्तान ने तुरन्त ही जूट के निर्यात पर प्रतिबध लगा दिया । आर्थिक समस्याओ मे सबसे कठिन विस्थापितो की सम्पत्ति की समस्या थी । जो हिन्दू शरणार्थी पाकिस्तान मे अपनी सम्पत्ति छोड़कर आये थे उसका मूल्य तीन हजार करोड़ रूपये था । जबकि जो मुसलमान भारत मे अपनी सम्पत्ति छोडकर गये थे उसका मूल्य ३०० करोड रूपये था। १९५० मे नेहरू - लियाकत अली समझौते द्वारा इस समस्या का समाधान

किया गया ।

विभाजन के बाद भारत-पाकिस्तान दोनो सरकारो के दायित्व और लेनदारी को समान अनुपात मे बाटा जाना चाहिये था परन्तु सौजन्यवश भारत सरकार ने ब्रिटिश सरकार के सारे ऋण व्यापार को स्वीकार किया । इसके उपलक्ष्य मे भारत को ३०० करोड रूपया प्रतिवर्ष पाकिस्तान सरकार से मिलना था और यह ५ वर्ष बाद दिया जाना तय हुआ । परन्तु पाकिस्तान सरकार इस ऋण देने मे टाल-मटोल करने लगी । दूसरी तरफ भारत को ५५ करोड रूपया रक्षा सग्रह का पाकिस्तान को देना था । गाधी जी ने दोनो देशो मे मधुर सबध बनाने हेतु यह रूपया भारत सरकार से पाकिस्तान को दिलवा दिया जब कि नेहरू और पटेल का मत था कि वह रूपया पाकिस्तान को नही दिया जाना चाहिये था । उस समय कश्मीर मे युद्ध चल रहा था और नेहरू व पटेल का विचार था कि इस धन का उपयोग पाकिस्तान और अधिक हथियार खरीदकर युद्ध तेज करने के लिये करेगा ।

अब हम लेते है नहरी पानी विवाद पर ।पजाब के राजनीतिक विभाजन के कारण यह नहरी पानी विवाद उठ खडा हुआ । ये नहरे आर्थिक दृष्टिकोण से उस समय बनायी गयी थी जब विभाजन का विचार तक किसी के मस्तिष्क मे न था । विभाजन के कारण नहरो के पानी का असतुलित विभाजन हो गया । पजाब की पॉचो नदियो मे से सतलज और रावी दोनो देशो के मध्य से बहती है । परन्तु

शरणार्थियो का प्रश्न भी महत्वपूर्ण मुद्दा बना रहा । विभाजन के बाद मुस्लिम लीग ने पाकिस्तान मे साम्प्रदायिक दगे करवाये जिससे हजारो के सख्या मे शरणार्थी भारत भाग कर आ गये । पाकिस्तान मे हिन्दुओ का जीवन और इज्जत सुरक्षित नही था । हजारो व्यक्ति वहा मौत के घाट उतार दिये गये । हजारो महिलाओ के साथ बलात्कार हुए जिसकी भारत मे भी प्रतिक्रिया होना स्वाभाविक था । यहा भी कई स्थानो पर दगे हुए और मुसलमान भागने लगे। भारत की धर्म निरपेक्ष सरकार उनकी रक्षा नही करती थी । इसलिये जितनी बडी सख्या मे विस्थापित पाकिस्तान से आये उतनी बडी सख्या मे भारत से पाकिस्तान नही गये। आज भी हिन्दू शरणार्थियो पर पाकिस्तान मे साम्प्रदायिक अत्याचार बदस्तूर जारी रहने के कारण हिन्दू अल्पसख्यक भारत को पलायन करने पर मजबूर हैं ।

सबसे गभीर मसला कश्मीर विवाद को लेकर है । कश्मीर की समस्या दोनो देशो के बीच एक ऐसे ज्वालामुखी की तरह है जो समय-समय पर लावा उगलती रहती है । अलाप माइकल के शब्दो मे, कश्मीर समस्या अनिवार्यत भूमि या पानी की समस्या नही यह लोगो के प्रतिष्ठा की समस्या है ।

कश्मीर की समस्या भारत और पाकिस्तान के बीच सबसे उलझी हुयी समस्या है । स्वतत्रता के बाद जहा भारत और पाकिस्तान दो नये राज्य बने वहा देशी रियासते एक प्रकार से स्वतत्र हो गयी

ब्रिटिश सरकार ने घोषणा कर दी थी कि देशी रियासते अपनी इच्छानुसार भारत अथवा पाकिस्तान मे विलय हो सकती है। अधिकाश रियासते भारत अथवा पाकिस्तान मे मिल गयी और उनकी कोई समस्या उत्पन्न नही हुई। भारत के लिए हैदराबाद और जूनागढ ने अवश्य समस्या उत्पन्न कर दी थी परन्तु वह शीघ्र ही हल कर ली गई। कश्मीर की स्थित कुछ विशेष प्रकार की थी। भारत के उत्तर पश्चिम सीमा पर स्थित यह राज्य भारत अथवा पाकिस्तान दोनो को जोडता है। यहॉ की जनसख्या का बहुसख्यक भाग मुस्लिमधर्मी था परन्तु यहॉ का आनुवषिक शासक एक हिन्दू राजा था। अगस्त १९४७ मे कश्मीर के शासक ने अपने विलय के विषय मे कोई तत्कालीन निर्णय नही लिया। पाकिस्तान इसे अपने साथ मिलाना चाहता था। २२अक्तूबर,१९४७ को उत्तर पश्चिम सीमा प्रान्त के कवालियो ने एक अनेक पाकिस्तानियो ने कश्मीर पर आक्रमण कर दिया। पाकिस्तान ने अपनी सीमा पर भी सेना का जमाव कर लिया। चार दिनो के भीतर ही हमलावर आक्रमणकारी श्रीनगर से २५मील दूर बारामूला तक जा पहुॅचे।२६ अक्तूबर को कश्मीर के शासक ने आक्रमणकारियो से अपने राज्य को बचाने के लिए भारत सरकार से सैनिक सहायता की माग की और साथ ही कश्मीर को भारत मे सम्मिलित करने की प्रार्थना भी की। भारत सरकार ने इस प्रस्ताव को स्वीकार कर लिया। २७ अक्तुबर को भारतीय सेनाये कश्मीर भेज दी गई तथा युद्ध समाप्ति पर जनमत

सग्रह की शर्त के साथ कश्मीर को भारत का अग मान लिया गया। भारत द्वारा कश्मीर की सुरक्षा के निर्णय के कारण और उधर पाकिस्तान द्वारा आक्रमणकारियो को सहायता देने की नीति के कारण कश्मीर दोनो राष्ट्रो की बीच युद्ध का क्षेत्र बन गया। प्रारम्भ मे भारत सरकार ने पाकिस्तान सरकार से प्रार्थना की कि कबायलियो का मार्ग बन्द कर दे परन्तु जब इस बात के प्रमाण मिलने लगे कि पाकिस्तान सरकार स्वय इन कबायलियो की सहायता कर रही है तो १ जनवरी १९४८ को भारत सरकार ने सुरक्षा परिषद मे यह शिकायत की कि पाकिस्तान से सहायता प्राप्त करके कबायलियो ने भारत के एक अग कश्मीर पर आक्रमण कर दिया है जिससे अर्न्तराष्ट्रीय शान्ति और सुरक्षा को खतरा है। दूसरी तरफ पाकिस्तान ने भारत पर आरोप लगाया कि कश्मीर का भारत मे विलय अवैधानिक है। सुरक्षा परिषद ने इस समस्या का समाधान करने के लिये चेकोस्लोवाकिया अर्जेन्टाइना, अमेरिका कोलाम्बिया और बेलजियम को सदस्य नियुक्त कर मौके पर स्थिति का अवलोकन करके समझौता कराने के उद्देश्य से सयुक्त राष्ट्र आयोग की नियुक्ति की।

सयुक्त राष्ट्र आयोग ने तुरन्त अपना कार्य प्रारम्भ कर दिया। और मौके पर स्थिति का अध्ययन कर १३ अगस्त १९४८ को दोनो पक्षो से युद्ध बन्द करने और समझौता करने हेतु निम्नाकित आधार प्रस्तुत किये-

१- पाकिस्तान अपनी सेनाये कश्मीर से हटाने तथा कबायलियो और सामान्य रूप से कश्मीर मे न रहने वाले विदेशियो को भी वहा से हटाने का प्रयत्न करे।

२- सेनाओ द्वारा खाली किये गये प्रदेश का शासन प्रबन्ध स्थानीय अधिकारी आयोग के निरीक्षण मे करे।

३- जब आयोग भारत को पाकिस्तान द्वारा उपर्युक्त वर्णित शर्तो को पूरा करने की सूचना दे तो भारत भी समझौते के अनुसार अपनी सेनाओ का अधिकाश भाग वहा से हटा ले ।

४- समझौता होने तक भारत सरकार युद्धविराम के अन्दर उतनी ही सेनाये रखे जितनी की इस प्रदेश मे कानून एव व्यवस्था बनाये रखने के कार्य मे स्थानीय अधिकारियो को सहायता देने के लिए वाछनीय हो।

इस सिद्धान्त के आधार पर दोनो पक्ष एक लम्बी वार्ता के अनुसार १ जनवरी १९४९ को युद्धविराम के लिए सहमत हो गये। कश्मीर के विलय का अन्तिम फैसला जनमत सग्रह के माध्यम से किया जाना था। जनमत सग्रह की शर्तो को पूरा करने के लिए एक अमेरिकी नागरिक एडमिरल चेस्टर निमित्ज को प्रशासक नियुक्त किया गया। उन्होने जनमत सग्रह के सम्बन्ध मे दोनो पक्षो से बातचीत की किन्तु उसका कोई परिणाम नही निकला । अन्तिम मे उन्होने अपने पद से त्यागपत्र दे दिया।

युद्ध विराम रेखा निर्धारित हो जाने पर पाकिस्तान के हाथ मे

कश्मीर का ३२,००० वर्गमील क्षेत्रफल रहा । इसकी जनसख्या ७ लाख थी । पाकिस्तान ने इस क्षेत्र को आजाद कश्मीर कहा। युद्ध विराम रेखा के इस पार भारत के अधिकार मे ५३ ००० वर्गमील क्षेत्रफल था जिसकी जनसख्या ३३ लाख थी ।

नेहरू जनमत सग्रह के लिये तैयार थे । सयुक्त राष्ट्र ने यह शर्त लगा दी कि पाकिस्तान द्वारा हस्तगत क्षेत्र से जब पाकिस्तानी सेना एव कबायली पूर्णतया हट जायेगे तभी जनमत सग्रह होगा । पाकिस्तान आजाद कश्मीर से अपनी सेनाये हटाने के लिये तैयार न था । पाकिस्तान ने अमरीका से १९५४ मे सैनिक सधि कर ली । वह १९५५ मे बगदाद पैक्ट (सेण्टो) का भी सदस्य हो गया। उसने अपने कुछ अड्डे अमरीका को दे दिये। इससे भारत ने खतरा अनुभव किया। भारत का मत था कि पाकिस्तान कश्मीर लेने के लिए अपनी सैनिक शक्ति बढा रहा है। अत परिवर्तित अर्न्तराष्ट्रीय परिस्थितियो मे जवाहर लाल नेहरू ने अपनी कश्मीर नीति मे परिवर्तन कर लिया। उन्होने निश्चय कर लिया कि कश्मीर मे जनमत सग्रह कराना सम्भव नही है। इसी समय सोवियत सघ का कश्मीर के प्रश्न पर भारत को समर्थन मिल गया जिससे भारत की स्थिति मजबूत हो गयी। उसका भी अर्न्तराष्ट्रीय जगत तथा सुरक्षा परिषद मे एक शक्तिशाली मित्र हो गया। १९५० मे पण्डित नेहरू ने पाकिस्तान से युद्ध वर्जनक सन्धि करने का प्रस्ताव रखा परन्तु पाकिस्तान ने उसे ठुकरा दिया। ६ फरवरी १९५४ को कश्मीर की सविधान सभा ने एक प्रस्ताव पास

कर जम्मू कश्मीर राज्य का विलय भारत मे होने की पुष्टि कर दी। भारत सरकार ने भारतीय सविधान मे सशोधन कर १४ मई १९५४ को अनुच्छेद ३७० के अन्तर्गत कश्मीर को विशेष दर्जा दे दिया। २६ जनवरी १९५७ को जम्मू कश्मीर का सविधान लागू हो गया। उसके साथ ही जम्मू कश्मीर भारतीय सघ का एक अभिन्न अग बन गया। इसके बाद भी पाकिस्तान बार-बार कश्मीर का प्रश्न उठाता रहा। २ जनवरी १९५७ को सुरक्षा परिषद मे इस प्रश्न को उठाया गया। ब्रिटेन, फ्रास और अमरीका ने सुरक्षा परिषद मे पाकिस्तान का समर्थन करते हुए कहा कि कश्मीर मे सयुक्त राष्ट्र के तत्वावधान मे जनमत सग्रह कराया जाय और सयुक्त राष्ट्र सघ की आपात सेना वहा भेजी जाय। भारत ने इस प्रस्ताव का घोर विरोध किया। भारत के समर्थन मे सोवियत सघ ने इस प्रस्ताव पर अपने निषेधाधिकार का प्रयोग किया। भारतीय प्रतिनिधि कृष्णा मेनन ने अपने ७ घण्टे ४८ मिनट तक के लम्बे ऐतिहासिक भाषण मे कहा कि मूल प्रश्न यह नही कि जम्मू कश्मीर मे सविधान लागू हो या न हो। मूल समस्या यह है कि जम्मू कश्मीर से पाकिस्तानी सेनाए अभी तक क्यो नही निकली। १९६२ मे सुरक्षा परिषद मे पाकिस्तान ने कश्मीर मे आत्म निर्णय की माग दोहरायी इस प्रस्ताव को सोवियत सघ ने वीटो द्वारा समाप्त कर दिया। जब-जब मौका मिलता है पाकिस्तान कश्मीर के प्रश्न को उठाता रहता है। अप्रैल १९८२ मे जनरल जिया-उल-हक ने कहा की कश्मीर एक अन्तर्राष्ट्रीय मुद्दा है।

मार्च १९८३ मे नयी दिल्ली मे आयोजित सातवे गुटनिरपेक्ष सम्मेलन मे भी जनरल जिया ने कश्मीर को एक विवादास्पद मुद्दा बताया। सितम्बर १९९२ मे गुट निरपेक्ष शिखर सम्मेलन (जकार्ता) के पूर्ण अधिवेशन मे पाकिस्तानी प्रधानमन्त्री नवाज शरीफ ने कश्मीर का मुद्दा फिर से उठाया। पाक प्रधानमन्त्री बेनजीर भुटटो ने सयुक्त राष्ट्र मानवाधिकार सम्मेलन जेनेवा १९९४ मे भारत के विरूद्ध आरोप लगाया कि वह कश्मीर मे मानवाधिकारो का उल्लघन कर रहा है।

वस्तुत भारत और पाकिस्तान के बीच कश्मीर तनाव का मुख्य कारण है। वह कश्मीर को अब भी एक समस्या मानता है। एक पाकिस्तानी पत्रकार के अनुसार हमारी भावनाए अब भी कश्मीर के बारे मे वैसी ही है जैसी कि पहले थी परन्तु एक बात याद रखनी चाहिए कि हमने १९७२ मे शिमला सम्मेलन के दौरान भी कश्मीर देना स्वीकार नही किया था। भारत का मत है कि पाकिस्तान कश्मीर तथा अन्य कोई द्विपक्षीय मुद्दा सयुक्त राष्ट्र सघ के मच से नही उठा सकता लेकिन पाकिस्तान इस दृष्टिकोण को स्वीकार नही करता।

१९६५ मे भारत-पाक युद्ध अप्रैल १९६५ मे कच्छ के रन को लेकर भारत एव पाकिस्तान के बीच सघर्ष हो गया। पाकिस्तानी सेना की दो टुकिडया भारतीय क्षेत्र मे आ घुसी और कच्छ के कई भागो पर अधिकार कर लिया। कच्छ के रन मे उत्पात के साथ-साथ पाकिस्तान ने कश्मीर मे भी घुसपैठ प्रारम्भ कर दी थी। यह घुसपैठ पूर्ण योजनाबद्ध थी। चीन की सहायता से हजारो पाकिस्तानी सैनिको

को छापामार युद्ध मे प्रशिक्षित किया गया था। योजना के अनुसार छापामार दस्ता शस्त्रो से सज्जित होकर असैनिक वेश मे कश्मीर मे घुसने वाला था। कश्मीर मे आन्तरिक रूप से उपद्रव एव तोड़-फोड़ द्वारा ऐसी स्थिति उत्पन्न करने की योजना थी जिससे भारतीय सेना को कश्मीर से भागना पडे। पाकिस्तान का विश्वास था कि कश्मीर की मुस्लिम जनता छापामारो का साथ देगी। किन्तु यह विश्वास अन्त मे असत्य प्रमाणित हुआ। ४ तथा ५ अप्रैल,१९६५ को हजारो पाकिस्तानी छापामार सैनिक कश्मीर मे घुस आये[7]। पाकिस्तानी घुसपैठ को सदैव के लिए रोकने के विचार से भारत सरकार ने उन स्थानो पर अधिकार करने का निर्णय किया जहा से होकर पाकिस्तानी घुसपैठिये कश्मीर के भारतीय हिस्से मे आते थे। इसी बीच पाकिस्तान की नियिमत सेना ने अन्तर्राष्ट्रीय सीमा रेखा को पार करके भारतीय भू-भाग पर आक्रमण कर दिया और पूर्ण रूप से युद्ध आरम्भ हो गया। ४ सितम्बर,१९६५ को सुरक्षा परिषद ने एक प्रस्ताव पास कर भारत और पाकिस्तान दोनो से अपील की कि वे युद्ध विराम करे। २२ सितम्बर १९६५ को दोनो देशो मे युद्ध बन्द हो गया [8]। भारत को युद्ध मे ७५० वर्ग मील भूमि मिली जबकि पाकिस्तान को २१० वर्ग मील भूमि मिली। यह युद्ध भारत-पाकिस्तान के कटु सम्बन्धो की अन्तिम परिणति थी।

ताशकन्द समझौता मे सोवियत प्रधानमत्री ने पाकिस्तान के राष्ट्रपति अयूब खा और भारत के प्रधानमन्त्री लालबहादुर शास्त्री को

वार्ता के लिए ताशकन्द मे आमन्त्रित किया। ४ जनवरी १९६६ को यह प्रसिद्ध सम्मेलन प्रारम्भ हुआ और सोवियत सघ के प्रयत्नो के परिणामस्वरूप १० जनवरी १९६६ को प्रसिद्ध ताशकन्द सम्मेलन पर हस्ताक्षर हुए। समझौते के अन्तर्गत भारतीय प्रधानमन्त्री एव पाकिस्तान के राष्ट्रपति सहमत हुए कि-

१ दोनो पक्ष जोरदार प्रयत्न करेगे कि सयुक्त घोषणा-पत्र के अनुसार भारत और पाकिस्तान मे अच्छे पड़ोसियो के सम्बन्ध निर्मित हो। वे राष्ट्र सघ के घोषणा-पत्र के अन्तर्गत पुन दुहराते हैं कि बल प्रयोग का सहारा न लेगे और अपने विवाद को शान्तिपूर्ण तरीको से सुलझायेगे।

२ दोनो देशो के सभी सशस्त्र सैनिक २५ फरवरी, १९६६ के पूर्व उस स्थान पर वापस चले जायेगे जहा वे ५ अगस्त १९६५ के पूर्व ये और दोनो पक्ष युद्ध विराम की शर्तो का पालन करेगे।

३ दोनो देशो के परस्पर सम्बन्ध एक दूसरे के आन्तरिक मामलो मे हस्तक्षेप न करने की नीति पर आधारित रहेगे।

४ दोनो देश एक दूसरे के विरूद्ध होने वाले प्रचार को निरूत्साहित करेगे और दोनो देशो के मध्य मैत्रीपूर्ण सम्बन्धो की वृद्धि करने वाले प्रचार को प्रोत्साहन देगे।

५ दोनो देशो के मध्य राजनयिक सम्बध पुन सामान्य रूप से स्थापित किये जायेगे। दोनो देशो मे एक दूसरे के उच्चायुक्त अपने पदो पर वापस जायेगे।

६ दोनो देशो के मध्य आर्थिक एव व्यापारिक सम्बन्ध पुन सामान्य रूप से स्थापित किये जायेगे।

७ दोनो देश युद्धबन्दियो का प्रत्यावर्तन करेगे। एक दूसरे की हस्तगत की हुई सम्पत्ति की वापसी पर भी विचार करेगे।

८ दोनो देश सन्धि से सम्बन्धित मामलो पर विचार करने के लिए सर्वोच्च स्तर परएव अन्य स्तरो पर आपस मे मिलते रहेगे।

यद्यपि इस समझौते के कारण भारत को वह सब प्रदेश पाकिस्तान को वापस देने पडे जो उसने अपार धन एव जन की हानि उठाकर प्राप्त किये थे तथापि यह समझौता निश्चय रूप से भारत और पाकिस्तान के सम्बन्धो मे एक शान्तिपूर्ण मोड का प्रतीक बन गया[13]।

इधर पूर्वी पाकिस्तान (बगलादेश) मे असन्तोष बढता जा रहा था। शेख मुजीबके नेतृत्व मे बगलादेश मे स्वायत्तता का आन्दोलन प्रारम्भ हो गया। पूर्वी पाकिस्तान पूर्णतया मुजीब के साथ था। याहया खा ने बगालियो पर अत्याचार करने प्रारम्भ कर दिये। पूर्वी बगाल के घोर अत्याचारो से घबराकर बगाली घरबार सामान छोड, जान बचाने हेतु भारत की सीमा मे प्रवेश करने लगे। १० हजार शरणार्थी प्रतिदिन भारत आने लगे। शरणार्थियो की सख्या भारत मे १ करोड तक पहुच गयी। इसी समय २ दिसम्बर, १९७१ को पाकिस्तानी वायुयानो ने भारत के हवाई अड्डो पर भीषण बमबारी कर दी। ४ दिसम्बर,१९७१ को भारतीय सेना ने जवाबी हमला किया। भारत्त के विमानो ने पाकिस्तान के महत्वपूर्ण हवाई अड्डो पर बम बर्षा की।

१६ दिसम्बर, १९७१ को ढाका मे एक सैनिक समारोह मे जनरल नियाजी ने भारत के ले कर्नल जगजीतसिह अरोरा के सम्मुख आत्म-समर्पण कर दिया। उनके साथ ९३ हजार सैनिको ने भी हथियार डाल दिये और उन्हे गिरफ्तार कर लिया गया। बगलादेश स्वतन्त्र हो गया तथा भारत ने एकतरफा युद्ध विराम कर दिया। भारत ने इस युद्ध मे पाकिस्तान की ६ हजार वर्ग मील भूमि पर अधिकार कर लिया। पाकिस्तान मे जनरल याहया खा के स्थान पर सत्ता जुल्फिकार अली भुट्टो के हाथ मे आ गयी। भुटटो और श्रीमती गाधी मे पत्र व्यवहार हुआ और २८ जून, १९७२ को शिमला मे दोनो देशो के मध्य वार्ता होना तय हुआ। ३ जुलाई १९७२ को दोनो देशो के बीच एक समझौता हो गया। इस समझौते के निम्नलिखित मुख्य उपबन्ध थे -

१ दोनो सरकारो ने यह निश्चय किया कि दोनो देश परस्पर सघर्ष को समाप्त करते है जिससे दोनो देशो के सम्बन्धो मे बिगाड उत्पन्न हुआ था।

२ दोनो ही सरकारे अपनी सामर्थ्य के अनुसार एक-दूसरे के प्रति घृणित प्रचार नही करेगी।

३ आपसी सम्बन्धो मे समानता लाने की दृष्टि से - क दोनो राष्ट्रो के बीच डाक-तार सेवा, जल, थल, वायुमार्गो द्वारा पुन सचार व्यवस्था स्थापित की जायेगी। ख एक-दूसरे देश के नागरिक और निकट आये इसलिए नागरिको को आने-जाने की सुविधाए दी जायेगी।

ग जहा तक सम्भव हो सके व्यापारिक एव आर्थिक मामलो मे सहयोग का सिलसिला जल्द से जल्द शुरू हो। घ विज्ञान एव सास्कृतिक क्षेत्रो मे आदान-प्रदान बढाया जायेगा।

४ स्थायी शाति कायम करने की प्रक्रिया का सिलसिला आरम्भ करने के लिए दोनो सरकारे सहमत है कि क भारत और पाकिस्तान की सेनाये अपनी अर्न्तराष्ट्रीय सीमा मे लौट जायेगी। ख दोनो देश बिना एक-दूसरे की स्थिति को क्षति पहुचाये जम्मू-कश्मीर मे १७ दिसम्बर,१९७१ को हुए युद्ध विराम के फलस्वरूप नियन्त्रण रेखा को मान्य रखेगे। ग सेनाओं की वापसी इस समझौते के लागू होने के ३० दिन के भीतर पूरी हो जायेगी।

५ शिमला समझौते के क्रियान्वयन के लिए दोनो देशो के शासनाध्यक्ष परस्पर मिलते रहेगे [10]।

शिमला समझौते के आलोचको का कहना है कि यह भारत का पाकिस्तान के समक्ष आत्मसमर्पण था। भारत के सैनिको ने जिसे युद्ध के मैदान मे जीता था उसे भारत की कूटनीति ने शिमला मे खो दिया। आलोचको का कहना है कि कश्मीर समस्या का स्थायी हल ढूढे बिना पाकिस्तान के ५,१३९ वर्ग मील क्षेत्र को लौटाना राजनीतिक सफलता नही कहा जा सकता। दूसरे शब्दो मे, आलोचको का कहना है कि शिमला समझौते ने कश्मीर पर पाकिस्तान से सौदेबाजी करने का अवसर हाथ से खो दिया।

२ भारत विरोधी नीति अर्थात जेहाद (धार्मिक युद्ध) की नीति से उत्पन्न होने वाली समस्याए

भारत-पाक सम्बन्धो मे कटुता और वैमनस्य कई बार पाकिस्तान के साम्प्रदायिक दृष्टिकोण से उत्पन्न हो जाता है। धार्मिक और साम्प्रदायिक वैमनस्य को पाकिस्तान के शासक जान-बूझकर बनाये रखना चाहते है। वे साम्प्रदायिक विष को अन्तर्राष्ट्रीय सम्मेलनो और सगठनो मे भी अभिव्यक्त करते रहे। सितम्बर १९६३ मे हजरतबल-काण्ड को लेकर पाकिस्तान ने कश्मीर मे साम्प्रदायिक दगे कराने का प्रयास किया। १९६५ मे बड़े पैमाने पर कश्मीर मे घुसपैठियो को भेजना शुरू कर दिया और विद्रोह भडकाने के लिए साम्प्रदायिक विष का सहारा लिया। १९६९ मे रबात मुस्लिम शिखर सम्मेलन के समय तत्कालीन पाकिस्तानी राष्ट्रपति याहया खा ने भारतीय प्रतिनिधिमण्डल के साथ बैठने से इकार कर दिया।

३ पाकिस्तान की सीटो, सेण्टो की सदस्यता तथा भारत की किलेबन्दी से उत्पन्न होने वाली समस्या-

भारत-पाक सबधो मे कटुता पैदा करने वाली एक प्रमुख समस्या पाकिस्तान की गुटीय और शस्त्रो की होड़ की नीति है। वस्तुत पाकिस्तान ने सीटो १९५५ और सेण्टो १९५५ जैसे सैनिक सगठनो का सदस्य बनकर शीत-युद्ध को भारत के दरवाजे पर लाकर खड़ा कर दिया। दूसरे, पाकिस्तान ने अपनी सैनिक शक्ति बढाने के लिए भारत विरोधी प्रचार का सहारा लेकर, अमरीका से ही नही

बल्कि सेण्टो शक्तियो विशेषकर ईरान से प्रचुर मात्रा मे सैनिक सहायता प्राप्त की। भारत–चीन सबधो मे बिगाड आने से पाकिस्तान ने चीन की हमदर्दी प्राप्त करने की कोशिश की और उससे अस्त्र-शस्त्रो को प्राप्त किया। पश्चिमी शक्तिया भी इस उप-महाद्वीप मे पाकिस्तान को भारत के बराबर बनाये रखना चाहती है। वे समझती है कि यदि भारत को शाति का समय मिल गया तो वह महान शक्ति बन जायेगा। अत अमरीका ने भारत के विरोध पर भी पाकिस्तान को अस्त्र-शस्त्र दिये[11]।

पाकिस्तान द्वारा आतकवाद को प्रोत्साहन- दुर्भाग्यवश पाकिस्तान द्वारा पजाब और जम्मू-कश्मीर मे भारत के विरूद्ध आतकवाद को लगातार सहायता पहुचाने और उसे बढावा दिये जाने के कारण दोनो देशो के बीच सबधो मे काफी कटुता उत्पन्न हुई। राजीव गाधी के सत्तासीन होने पर पाकिस्तान द्वारा अपनी प्रतिरक्षा जरूरतो से कही अधिक आधुनिक हथियार हासिल करने और परमाणु बम बनाने के प्रयास की सभावना से भारत को चिन्ता बनी जिससे पाकिस्तान नेताओं द्वारा उच्च स्तर पर दिये गये आश्वासनो के बावजूद सिख उग्रवादियो को सीमा पार से मदद दिया जाना जारी रहना भी भारत के लिए इतनी ही चिन्ता का विषय रहा फिर भी, इन घटनाओ के बावजूद भारत शिमला समझौते की भावना के प्रति अपनी वचनबद्वता के अनुरूप पाकिस्तान के साथ सौहार्दपूर्ण और सहयोगात्मकसबध विकसित करने के अपने प्रयास जारी रखे रहा।

पाकिस्तान के राष्ट्रपति श्री जिया-उल-हक के साथ हुई चार बैठको के आधार पर वे १७ दिसम्बर १९८५ को नई दिल्ली की यात्रा पर आये जिसमे दोनो पक्षो ने घोषणा की कि वे एक दूसरे के परमाणु प्रतिष्ठानो पर हमला नही करेगे। दोनो पक्षो ने सहयोग के विकास के रास्ते से बाधाओ को दूर करने के लिए द्विपक्षीय बैठको का कार्यक्रम भी तय किया [12]। राष्ट्रपति जिया और हमारे प्रधानमत्री की बैठक के निर्णयो का पालन करते हुए जनवरी १९८६ मे भारत के वित्त मत्री ने पाकिस्तान की यात्रा की और आर्थिक और व्यापारिक सहयोग बढाने पर वार्ता की। दोनो देशो के प्रतिरक्षा सचिव सियाचिन
ग्लेशियर क्षेत्र की स्थति पर विचार करने के लिए मिले। दोनो देशो के विदेश सचिवो ने स्थाई शाति मैत्री और सहयोग के निर्माण के लिए सधि यासमझौते का एक विस्तृत मसौदा तैयार करने के लिए विचार-विमर्श किया। लेकिन कुछ महत्वपूर्ण पहलुओ पर मतभेद बरकरार [13]है।

राजीव गाधी के सत्तासीन होने पर पाकिस्तान द्वारा अपनी प्रतिरक्षा जरूरतो से कही अधिक आधुनिक हथियार हासिल करने और परमाणु बम बनाने के प्रयास की सभावना से भारत को चिन्ता बनी, जिससे पाकिस्तान नेताओं द्वारा उच्च स्तर पर दिये गये आश्वासनो के बावजूद सिख उग्रवादियो को सीमा पार से मदद दिया जाना जारी रहना भी भारत के लिए इतनी ही चिन्ता का विषय रहा

फिर भी। इन घटनाओ के बावजूद भारत शिमला समझौते की भावना के प्रति अपनी वचनबद्वता के अनुरूप पाकिस्तान के साथ सौहार्दपूर्ण और सहयोगात्मक सबध विकसित करने के अपने प्रयास जारी रखा पाकिस्तान के राष्ट्रपति श्री जिया-उल-हक के साथ हुई चार बैठको के आधार पर वे १७ दिसम्बर १९८५ को नई दिल्ली की यात्रा पर आये जिसमे दोनो पक्षो ने घोषणा की कि वे एक दूसरे के परमाणु प्रतिष्ठानो पर हमला नही करेगे। दोनो पक्षो ने सहयोग के विकास के रास्ते से बाधाओ को दूर करने के लिए द्विपक्षीय बैठको का कार्यक्रम भी तय किया। राष्ट्रपति जिया और हमारे प्रधानमत्री की बैठक के निर्णयो का पालन करते हुए, जनवरी, १९८६ मे भारत के वित्त मत्री ने पाकिस्तान की यात्रा की और आर्थिक और व्यापारिक सहयोग बढाने पर वार्ता की। दोनो देशो के प्रतिरक्षा सचिव सियाचिन ग्लेशियर क्षेत्र की स्थति पर विचार करने के लिए मिले। दोनो देशो के विदेश सचिवो ने स्थाई शाति मैत्री और सहयोग के निर्माण के लिए सधि यासमझौते का एक विस्तृत मसौदा तैयार करने के लिए विचार-विमर्श किया। लेकिन कुछ महत्वपूर्ण पहलुओं पर मतभेद बरकरार रहे[14]।

वर्ष १९८७ मे भारत मे आतकवादियो को निरतर सहायता देने नाभिकीय अस्त्रो के विकास के कार्यक्रम निरतर चलते रहने आधुनिकतम हथियारो की निरतर तलाश मे रहने, अतर्राष्ट्रीय मचो पर कश्मीर के सवाल को उठाने की कोशिश तथा भेदभाव रहित

आधार पर व्यापार विकसित करने मे झिझक की वजह से पाकिस्तान के साथ सम्बन्ध सुधारने के हमारे प्रयासो पर विपरीत प्रभाव पडा[15]। इन दुर्भाग्यपूर्ण बातो के बावजूद, प्रधानमत्री ने १६ नवम्बर १९८६ को बगलूर मे प्रधानमत्री जुनेजो के साथ हुई मुलाकात मे इस बात पर सहमति व्यक्त की कि दिसम्बर १९८६ मे हमारे गृह सचिव और विदेश सचिव को पाकिस्तान जाकर सामान्यीकरण की प्रक्रिया को पुन शुरू करने की सम्भावनाओ का पता लगाना चाहिये[16]। इस समझौते के अनुरूप निश्चित कार्यक्रम के तहत गृह सचिव और विदेश सचिव ने पाकिस्तान की यात्रा की और अपने समकक्ष अधिकारियो से व्यापक बातचीत की। गृह सचिव की यात्रा के दौरान यह फैसला हुआ कि इसके लिए दो समितिया गठित की जाएगी जिनमे एक नए सीमा क्षेत्र नियमो को तैयार करेगी तथा दूसरे नशीले पदार्थो के अवैध व्यापार और तस्करी रोकने के सम्बध मे विचार करेगी लेकिन जनवरी १९८७ मे भारत-पाकिस्तानी सीमा पर पाकिस्तानी फौजो के उत्तेजनात्मक और खतरनाक ठिकानो तक आगे बढ जाने की वजह से भारत-पाकिस्तान सीमा पर तनाव बढ गया [17]। सैनिको के इस जमाव की वजह से उत्पन्न तनावपूर्ण स्थिति को समाप्त करने के लिए भारत ने अपनी ओर से बातचीत का सिलसिला शुरू किया और सैनिको की वापसी तथा बातचीत को आगे बढाने के लिये एक समयबद्ध कार्यक्रम तैयार किया गया। इस दौरान भारत बराबर इस बात पर जोर देता रहा है कि सभी मतभेदो

को शातिपूर्ण बातचीत के द्वारा सुलझाने की जरूरत है[18] ।

राजीव गाधी द्वारा भारत और पाकिस्तान के साथ सम्बन्ध बनाने के प्रयास जारी रखे गए । शिमला समझौते की भावना के पूर्णत अनुरूप पाकिस्तान के साथ सौहार्दपूर्ण सहयोगपूर्ण और अच्छे पड़ोसी के सम्बन्धो के विकास के प्रति भारत वचनबद्ध है। प्रधानमत्री और जिया के बीच फरवरी १९८७ मे नई दिल्ली मे बैठक के अलावा भारत-पाक सीमा पर शाति बनाये रखने और नशीली दवाओ की तस्करी रोकने तथा आर्थिक सहयोग और व्यापार बढाने के उद्देश्य से सचिव स्तर पर अनेक महत्वपूर्ण बैठके भी हुई ।

दिसम्बर १९८८ मे अपनी यात्रा के दौरान श्री प्रधानमत्री श्रीमती बेनजीर भुट्टो के साथ द्विपक्षीय और आपसी हित के अन्य मुद्दो पर गहन बातचीत की । इन वार्ताओ के फलस्वरूप पाकिस्तान के साथ निम्नलिखित तीन समझौतो पर हसताक्षर किए गये

१ परमाणुविक सस्थापनाओ और सुविधाओ पर अनाक्रमण समझौता,

२ सास्कृतिक सहयोग समझौता और

३ अतर्राष्ट्रीय वायु परिवहन से प्राप्त आय पर दोहरे करारोपण से बचाव सम्बन्धी समझौता [19]।

अच्छे सम्बन्धो के प्रति भारत की सच्ची भावनाओ का पाकिस्तान द्वारा सही प्रतिदान नही किया गया, जैसा कि उसके द्वारा किए गए अनेक विपरीत कार्यो से स्पष्ट है जिनसे वातावरण

बिगडा है और भारत से सम्बन्धो पर बुरा असर पडा है। इसमे इसकी हथियारोन्मुख परमाणु नीति इसकी वास्तविक रक्षा आवश्यकताओ से कही ऊपर अवाक्स जैसे अत्याधुनिक हथियार प्राप्त करने की इच्छा भारत के विरूद्ध आतकवादी गतिविधियो मे इसके शामिल होने कश्मीर के प्रश्न को अतर्राष्ट्रीय स्तर पर ले जाने के इसके सघन एव एकीकृत प्रयास सियाचिन क्षेत्र मे इसके द्वारा सेना की आपराधिक कार्रवाई, भारत के साथ गैर-भेदमूलक व्यापार सम्बन्ध स्थापित करने के प्रति इसकी अनिच्छा और व्यक्ति-से-व्यक्ति के सम्बन्धो को बढावा देने के प्रति इसकी ढील आदि शामिल है[20] ।

दोनो देशो के द्विपक्षीय सबधो को बेहतर बनाने के उददेश्य से पाकिस्तान के साथ लगातार सम्पर्क बनाये रखने के लिये १९८८ और १९८९ के दौरान अधिकारी स्तर पर कई महत्वपूर्ण बैठके हुयी । भारत ने स्पष्ट किया कि वह पाकिस्तान के सम्बन्धो को तेजी के साथ सामान्य बनाने का इच्छुक है । प्रधानमत्री श्रीमती बेनजीर भुटटो का मत था कि पाकिस्तान शिमला समझौते के दायरे मे समाधान करना चाहता है ।

अतर्राष्ट्रीय मच पर राजीव गाधी ने पाकिस्तान के प्रति भारत की नीयत उजागर करते हुए साफ शब्दो मे कहा था- "दक्षिण एशिया के सम्बन्ध मे हमने कई अवसरो पर पाकिस्तान के साथ मैत्री और मधुर तथा सहयोगपूर्ण सम्बन्धो की बात दोहराई है। हमारे दिलो

मे पाकिस्तान के लोगो के प्रति सदभावनाए है जिनके साथ हमारी भाषा सगीत और साहित्य का साझा है। हमारा इतिहास साझा है। पाकिस्तान के लोगो के प्रति दुर्भावना नही है। हम उनका भला चाहते है और इसीलिए हम लोगो के स्तर पर यात्रियो पर्यटको, छात्रो पत्रकारो श्रमिक नेताओं महिला ग्रुपो के आदान-प्रदान का स्वागत करते है [22]।"

राजीव गाधी ने दोनो देशो के मध्य सम्बध मधुर बनाने के लिए सास्कृतिक, व्यापारिक, बौद्धिक आदान-प्रदान तथा हित सरक्षण की दिशा मे कई प्रस्ताव पाकिस्तान के समक्ष रखे किन्तु दुर्भाग्यवश पाकिस्तान से अत्यन्त असतोषजनक प्रत्युत्तर प्राप्त हुआ। इसे स्पस्ट करते हुए श्री राजीव गाधी ने कहा कि "दूसरी ओर पाकिस्तान दोनो देशो के लोगो के बीच इन कार्यक्रमो को रोक रहा था। वह परमाणु हथियार कार्यक्रम पर ही जोर दे रहा था। उन्होने सियाचिन जैसे क्षेत्रो मे आक्रामक रूख अपना रखा है। वह अपने क्षेत्र मे आतकवादियो और पृथकवादियो को सहायता और शरण दे रहे है[23]।" राजीव गाधी ने पाकिस्तान से कहा था कि हमारी सीमाओ पर आतकवादी घटनाओ मे हुए अचानक वृद्धि पर बातचीत के लिए भारत तथा पाकिस्तान के गृह सचिवो को बातचीत करनी चाहिए। दोनो देशो के बीच विभिन्न स्तरो पर बेहतर सचार सुविधा होनी चाहिए। सैनिक क्षेत्र मे पहले से ही हाटलाइन है। शायद गृह सचिवों के बीच भी हाटलाइन की जरूरत है ताकि यदि कोई तनाव उत्पन्न

हो तो उसे जितनी जल्दी सभव हो समाप्त किया जा सके।

भारत और पाकिस्तान के विदेश सचिवो के बीच एक हाटलाइन हुआ करती थी। किन्तु पाकिस्तान के अनुरोध पर इसे हटा दिया गया। राजीव गाधी चाहते थे कि इसे बहाल किया जाये ताकि यदि कोई तनाव हो तो उसे तुरन्त कम किया जा सके।
भारत विरोधी प्रचार का सहारा लेकर अमरीका से ही नही बल्कि सेण्टो शक्तियो, विशेषकर ईरान से प्रचुर मात्रा मे सैनिक सहायता प्राप्त की। भारत–चीन सबधो मे बिगाड आने से पाकिस्तान ने चीन की हमदर्दी प्राप्त करने की कोशिश की और उससे अस्त्र-शस्त्रो को प्राप्त किया। पश्चिमी शक्तिया भी इस उप-महाद्विप मे पाकिस्तान को भारत के बराबर बनाये रखना चाहती है। वे समझती है कि यदि भारत को शाति का समय मिल गया तो वह महान शक्ति बन जायेगा। अत अमरीका ने भारत के विरोध पर भी पाकिस्तान को अस्त्र-शस्त्र दिये।

पाकिस्तान द्वारा आतकवाद को प्रोत्साहन- दुर्भागयवश पाकिस्तान द्वारा पजाब और जम्मू-कश्मीर मे भारत के विरूद्ध आतकवाद को लगातार सहायता पहुचाने और उसे बढ़ावा दिये जाने के कारण दोनो देशो के बीच सबधो मे काफी कटुता उत्पन्न हुई[24]।

पाद टिप्पणिया

1 Burk S M Mainsprings of India and Pakistan Foreign Policies Page 37
2 Ismil M India and their Neighbours Page 94
3 An article on Pakistan by Kuldeep Nayyar
4 लोकसभा मे भारत पाक सबधो पर दिये गये वर्ष १९६५ मे प० जवाहरलाल नेहरू के भाषण के अश ।
5 Braine B Will India Stay in the Common Wealth ? Page 207
6 Panikhr K M India and Indian Ocean Page 114
7 Times of India 6 4 1965
8 Hindustan Times – 23 9 1965
9 Indian Express – 11 1 1966
10 Stateman – 4 7 1972
11 Prasad Bimal The Origins of Indian Foreign Policy The Indian National Congress and World Affairs 1885-1947 Page 139
12 Times of India 18 12 1985
13 भारत १९८७ सूचना एव प्रकाशन विभाग पृष्ठ-५१४ ५१५
14 भारत १९८७ सूचना एव प्रकाशन विभाग
15 भारत १९८८ ८९ - सूचना एव प्रकाशन विभाग पृष्ठ-५५६
16 Stateman 17 11 1986
17 भारत १९८८ ८९ - सूचना एव प्रकाशन विभाग पृष्ठ-५५६
18 Murty K S Indian Foreign Policy Page 113
19 भारत १९९० सूचना एव प्रकाशन विभाग पृष्ठ-६४५
20 Kundra, J C Indian Foreign Policy Page 133
21 भारत १९९० सूचना एव प्रकाशन विभाग पृष्ठ-६४५
22 सूचना विदेश मत्रालय की वर्ष ८८-८९ की अनुदान मागो पर वाद विवाद पर उत्तर देते हुए लोकसभा वाद-विवाद २० ४ ८८ कालम स० २८० से २८७
23 विदेश मत्रालय की वर्ष ८८-८९ की अनुदान मागो पर वाद-विवाद पर उत्तर देते हुए लोकसभा वाद विवाद, २० ४ ८८ कालम स० २८० से २८७
24 राजीव गाधी एव ससद, सम्पादक सी०के०जैन महासचिव लोकसभा पृष्ठ-४७४ ४७५

अध्याय-६

राजीव गाधी के भारत के प्रधानमत्री के रूप मे सत्तारूढ होने के समय श्रीलका भीषण आतकवाद एव पृथकतावाद की धधकती ज्वाला मे सुलग रहा था निरीह और निरअपराध लोगो की हत्या की जा रही थी ।सरकारी सम्पत्तियो को नुकसान पहुचाया जा रहा था। श्रीलका सरकार बेवश और असहाय साबित हो रही थी। ऐसी स्थिति मे स्वाभाविक था कि कई देश अपनी राजनीतिक रोटी सेकने के लिये श्रीलका के आतरिक मामलो मे दखल देने की ताक मे थे । राजीव गाधी ने अपनी राजनीतिक सूझबूझ और कूटनीतिक समझ से श्रीलका से सम्बध बेहतर करने तथा हर सभव सहायता के लिए दोस्ती का हाथ बढाया। इसलिये कि श्रीलका अहिसा और प्रेम के मसीहा भगवान बुद्ध के अनुयायियो की धरती है, जहा वहसी हिसा का ताडव चल रहा था [1]। इसलिये भी कि अपने पडोसी देश मे किसी अन्य देश का अड्डा बने भारत के हित मे नही था ।

श्री लका भारत के दक्षिण मे स्थित एक छोटा द्वीप है जिसका क्षेत्रफल २५,३३२ वर्गमील तथा जनसख्या १७ १३५ ००० है । सास्कृतिक दृष्टि से श्रीलका भारत के साथ जुड़ा है । यहॉ पर रहने वाले भारतीय तमिलनाडु के मूल निवासी है । श्रीलका के अधिकाश निवासी बौद्ध धर्मावलम्बी है । हिन्द महासागर मे भारत के समीप होने के कारण सैनिक एव सामरिक दृष्टि से श्रीलका का भारत के लिए अत्यधिक महत्व है ।

भारत और श्रीलका एक दूसरे के पडोसी देश है किन्तु उनके सम्बन्ध पडोसियो के सम्बन्धो से अधिक गहरे है । श्रीलका भारतीय उपमहाद्वीप का ही एक अग है अत इसका राजनीतिक महत्व ही नही बल्कि औद्योगिक, आर्थिक एव सास्कृतिक महत्व भी है । भारत से श्रीलका की दूरी पाक जलडमरूमध्य पार करके बहुत कम समय मे तय की जा सकती है । आधा घण्टे से कम की उडान मे कोई भी भारत से श्रीलका पहुँच सकता है अथवा श्रीलका से भारत आ सकता है । किन्तु वहा पहुचकर उसे ऐसा नही लगता कि वह किसी अन्य देश मे पहुच गया है । दक्षिण भारत की जलवायु एव सस्कृति की बहुत सी विशेषताए वहा पर दिखलाई देती है । वैसे भी भारत एव श्रीलका के सम्बन्ध सदियो पुराने हे । मौर्य सम्राट अशोक के युग मे ही श्रीलका और भारत के बीच गहरे सम्बन्ध थे । अशोक ने बौद्ध धर्म का प्रचार करने के लिए अपने ही पुत्र को श्रीलका भेजा था और इसमे कोई सन्देह नही कि वह बौद्ध धर्म के अनुयायी है और वे प्राचीन भारत के ऋषियो के कृत्यो से प्रेरणा प्राप्त करते है[2] ।

१७ १३ मिलियन जनसख्या का यह देश भारत से दक्षिण मे पाक जलडमरूमध्य से पृथक होता है इसके पश्चिम मे पाक जलडमरूमध्य एव मन्नार की खाडी है । पूरब एव उत्तर मे बगाल की खाडी एव दक्षिण मे हिन्द महासागर है । दुनिया के इस भूभाग के अन्य देशो की तरह श्रीलका भी उपनिवेशीकरण का शिकार हुआ और १५० वर्ष से अधिक समय तक विदेशी शक्तियो के प्रभुत्व मे

रहा है। सर्वप्रथम पुर्तगालियो ने इस देश पर अपना अधिकार किया उसके बाद डच लोगो ने किन्तु कालान्तर मे इनका स्थान अग्रेजो ने ले लिया । अग्रजो ने अपनी विश्व प्रसिद्ध नीति 'फूट डालो और शासन करो' का यहा भी उपयोग किया और वे श्रीलका की जनसख्या के दो बडे समूहो मे आपस मे वैमनस्य बनाये रखने मे सफल रहे यहा पर बहुमत सिहली भाषा-भाषियो का है किन्तु तमिल भाषा -भाषी लोग अल्पतम होते हुए भी काफी प्रभाव रखते है ।

अन्र्तराष्ट्रीय राजनीति मे श्रीलका का विशिष्ट महत्व है । हिन्द महासागर मे से गुजरने वाले सभी जलमार्गो का यह केन्द्र है । इसी सामरिक स्थिति के कारण अग्रेज इसे छोड़ना नही चाहते थे ।

भारत और श्रीलका औपनिवेशिक दासता के एक लम्बे समय तक शिकार रहे है । दोनो ही देश लगभग साथ-साथ स्वाधीन हुए । श्रीलका के राष्ट्रीय स्वाधीनता के आन्दोलन को भारत के राष्ट्रीय आन्दोलन से प्रेरणा मिली । श्रीलका की सरकार ने भी भारत सरकार के समान गुटनिरपेक्षता की नीति को स्वीकार किया । भारत की भाति श्रीलका की नीति अन्र्तराष्ट्रीय क्षेत्र मे शान्तिवाद गुटनिरपेक्षता सह-अस्तित्व और दूसरे देशो से मित्रतापूर्ण सम्बन्धो की रही । भारत की भाति श्रीलका भी राष्ट्रमण्डल का सदस्य बना । कोलम्बो योजना के अन्र्तगत, जिसकी रचना १९५० मे कोलम्बो मे राष्ट्रमण्डलीय प्रधानमन्त्रियो के सम्मेलन मे की गयी थी दोनो देशो ने आर्थिक क्षेत्र मे पूर्ण सहयोग किया है[3] ।

भारत और श्रीलका मे मैत्रीपूर्ण सम्बन्ध होनेपर भी समय-समय पर कुछ घटनाए घटित होती रही है जिससे दोनो देशो के बीच मतभेद उभरकर सामने आये।

इनमे भारत प्रवासियो की समस्या प्रमुख रही है। भारत और श्रीलका के मध्य विवाद का प्रमुख मसला भारतीय प्रवासियो को लेकर उत्पन्न हुआ। श्रीलका के अधिकाश भारतीय प्रवासी है। लगभग १० लाख मजदूर चाय और रबड की खेती पर काम करने के लिए लाये गये थे। ये श्रमिक सस्ते थे और इनमे से अधिकाश दक्षिण भारत से ले जाये गये थे। १९४८ मे श्रीलका के स्वतत्र होने तक यह ब्रिटिश नागरिको के रूप मे समान अधिकारो एव मताधिकार का लाभ उठाते थे परन्तु शीघ्र ही १९४८ के सीलोन नागरिकता अधिनियम एव सीलोन ससदीय अधिनियम १९४९ के द्वारा इन्हे मताधिकार से वचित कर दिया गया। नागरिकता प्राप्त करने के लिए उन्हे यह प्रमाणित करना पडता था कि उनके माता-पिता या वे स्वय श्रीलका मे जन्मे थे और १९३९ से लगातार श्रीलका मे ही निवास कर रहे है। इस प्रकार श्रीलका सरकार का विचार सम्भवत यह था कि कम से कम भारतीयो को श्रीलका की नागरिकता प्राप्त हो सके।

इसके पीछे मुख्य कारण ये थे -

१ बढती हुइ जनसख्या के कारण श्रीलका मे आर्थिक दबाव अनुभव होने लगा था और सिंहली लोग चाहते थे कि प्रवासी भारतीय यहा

से चले जाये तो उनको रोजगार के अधिक अवसर प्राप्त होने लगे

२ प्रवासी भारतीय अपनी कमाई का बड़ा भाग भारत भेज देते थे। श्रीलका के विदेशी विनिमय पर इसका बुरा प्रभाव पडता था।

३ भारतीय प्रवासी वर्षो से श्रीलका मे रहने के बाद भी भारत को ही अपना देश मानते थे।

४ प्रवासी भारतीयो की बड़ी सख्या चुनावो को अत्यधिक प्रभावित करती थी। इसीलिए १९४९ के निर्वाचन कानून द्वारा उन्हे मताधिकार से वचित कर दिया गया[4]।

उपर्युक्त कारणो के बाबजूद भी प्रवासी भारतीयो के प्रति श्रीलका सरकार का व्यवहार आपत्तिजनक और अन्यायपूर्ण था। प्रवासी भारतीय श्रमिको को जिनके श्रम से श्रीलका ने आर्थिक उन्नति का और यूरोपीय पूजीपतियो के कोष भरे अब श्रीलका से बहिष्कृत करने का प्रयास किया जा रहा था। समस्या और भी अधिक गम्भीर तब हो गयी जब श्रीलका सरकार ने प्लान्टेशन लेबर एव विदेशी व्यावसायिक सगठनो का राष्ट्रीकरण करने की नीति प्रकट की। अशिक्षित भारतीय श्रमिको के साथ यह अन्याय था, अतएव भारत सरकार के लिए हस्तक्षेप करना आवश्यक हो गया। इस समस्या के समाधान के लिए भारत सरकार ने श्रीलका सरकार से वार्ता प्रारम्भ की। लम्बी वार्ता के परिणामस्वरूप जनवरी १९५४ मे जान कोटलेवाला नई दिल्ली आये थे और नेहरू के साथ उनका एक समझौता हुआ, जिसे नेहरू-कोटलेवाला समझौता कहते है।

इसकी शर्ते निम्न प्रकार थी -

१ श्रीलका की सरकार उन सभी भारतीय मूल के लोगो के नाम रजिस्टर करेगी जो श्रीलका मे स्थायी रूप से रहने के इच्छुक है ।

२ जो श्रीलका की नागरिकता नही चाहते उन्हे भारत वापस भेज दिया जायेगा ।

३ भारत से श्रीलका को अवैध अप्रवास सख्तीपूर्वक रोका जायेगा ।

४ नागरिकता प्राप्त करने के लिए दो वर्षो से जो आवेदन पत्र पडे है उनका निर्णय सरकार शीघ्र करेगी ।

५ भारतीयो के लिए श्रीलका मे एक अलग चुनाव रजिस्टर बनेगा जिसके आधार पर वे निश्चित सख्या मे अपने प्रतिनिधि चुनेगे ।

६ जिन भारतवासियो को श्रीलका मे नागरिकता नही दी जा सकेगी उन्हे विदेशी के रूप मे रहने की सुविधा दी जाएगी[5] ।

श्रीलका की सरकार ने इस समझौते का इमानदारी से पालन नही किया भारतीय मूल के बहुत सारे व्यक्तियो को नागरिकताविहीन बना दिया । मार्च १९५४ मे श्रीलका सरकार ने भारतीय मूल के नागरिको के निवास आज्ञा पत्रो (रेजीडेन्सी) का नवीनीकरण स्थगित करने की आज्ञा दे दी और इस प्रकार श्रीलका मे वर्षो से बसे हुए नागरिको को अवैध निवासी बना दिया । यह सब दिल्ली समझौते की भावना के विरूद्ध था । इसके पूर्व वीसा प्राप्त करना आवश्यक नही था । भारत सरकार की ओर से भारतीय उच्चायुक्त ने श्रीलका को चेतावनी दी कि भारत सरकार केवल

उन्ही व्यक्तियो को भारतीय नागरिको के रूप मे स्वीकार करेगी जिन्होने स्वेच्छा से इसके लिए आवेदन किया है और ऐसे व्यक्तियो को फिर श्रीलका के बगीचो एव अन्य खेतियो पर भी काम करने की अनुमति नही दी जायेगी।

राज्यविहीन नागरिको की स्थिति पर दोनो सरकारो मे मूलभूत अतर था । श्रीलका सरकार इन्हे तब तक भारतीय नागरिक कहती थी जब तक वह उन्हे अपना नागरिक न मान ले। भारत सरकार के दृष्टिकोण से केवल वे ही व्यक्ति भारतीय नागरिक थे जिनके पास सदैव से भारतीय पासपोर्ट अथवा अनुमति पत्र थे और जिन्होने भारतीय उच्चायुक्त के आफिस मे अपने को पजीकृत करा लिया था शेष व्यक्ति राज्यविहीन थे । इसी प्रकार बडी सख्या मे राज्यविहीन व्यक्तियो की समस्या उत्पन्न हो गयी । इससे भारत और श्रीलका के सम्बन्धो मे कटुता उत्पन्न हो गयी । १९५६ के भाषा विवाद से यह कटुता और बढ गयी । श्रीलका सरकार ने यह आरोप लगाया कि इन दगो के पीछे भारत का हाथ था । परन्तु भण्डारनायके के प्रधानमत्रित्व (१९५६-५९) काल मे भारत और श्रीलका सम्बधो मे सुधार हुआ । भण्डारनायके नेहरू के प्रशसक और मित्र थे,वे गुटनिरपेक्षता की नीति मे विश्वास करते थे और भारत को श्रीलका का एक बडा मित्र-राष्ट्र मानते थे[6] । उनकी हत्या के बाद श्रीमती भण्डारनायके १९६०-७७ के कार्यकाल मे भी भारत- श्रीलका सम्बध मधुर रहे । इसी कारण अक्टूवर १९६४ मे भारतीय प्रधानमत्री

लालबहादुर शास्त्री और श्रीमती भण्डारनायके के बीच एक समझौता हुआ जिसमे निम्न बाते मुख्य थी-

१ श्रीलका मे रह रहे वे सभी भारतीय नागरिक जो अभी तक किसी भी देशो के नागरिक नहीं है वे भारत या श्रीलका मे से किसी भी देश की नागरिक नही है वे भारत या श्रीलका मे से किसी भी देश की नागरिकता अपनाये।

२ यह अनुमान था कि श्रीलका मे ऐसे ९७५००० व्यक्ति है जो राष्ट्रीयताविहीन है । समझौते के अनुसार यह तय किया गया कि इनमे से ५,२५,००० व्यक्तियो को भारत और ३ ०० ००० व्यक्तियो को श्रीलका अपनी नागरिकता प्रदान करे और १ ५०,००० व्यक्तियो की नागरिकता की समस्या को एक अन्य समझौते द्वारा सुलझा दिया जायेगा ।

३ आने वाले १५ वर्षो मे यह कार्य पूरा कर लिया जाये।

४ भारत आने वाले प्रवासियो को वे सभी सुविधाए प्राप्त होगी जो किसी भी अन्य विदेशी को प्राप्त होती है लेकिन उन्हे विदेशो मे धन भेजने की सुविधा नही होगी ।

५ भारतीय अपने कमाई हुई पूँजी को भारत ले जा सकेगे लेकिन उसकी सीमा चार हजार से कम नही होनी चाहिए [7]।

इस समझौते मे एक कमी यह रह गयी कि १,५०,००० राष्ट्रीयताविहीन व्यक्तियो की नागरिकता का सतोषपूर्ण फैसला नही हो पाया । लेकिन जनवरी १९७४ मे जब श्रीलका की प्रधानमत्री

श्रीमती भण्डारनायके भारत आयी तो शेष १ ५० ००० राष्ट्रीयताविहीन व्यक्तियो की नागरिकता का भी फैसला हो गया। एक समझौते के अनुसार दोनो देशो ने आधे-आधे यानी ७५-७५ हजार व्यक्तियो को अपनी-अपनी नागरिकता देना स्वीकार कर लिया।

विवाद का दूसरा बिन्दु है कच्छदीप टापू का मसला। भारत-श्रीलका के बीच दूसरा मसला कच्छदीप से सम्बन्धित रहा है। कच्छदीव भारत और श्रीलका के समुद्री तटो के बीच २०० एकड का एक छोटा सा द्वीप है जिसमे नागफनी के अतिरिक्त और कुछ नही उगता। यहॉ आबादी नही के बराबर है और आस-पास मछुवारे मछली जरूर पकडते हैं दोनो देश इस भूखण्ड पर अपना आधिपत्य जताते थे। विवाद इसलिए और भी बढ गया क्योकि इस द्वीप के आस-पास तेल के काफी बड़े भण्डार होने की आशा की जाती थी। भारत ने एक महान पडोसी देश की परम्परा का निर्वाह करते हुए इस छोटे से द्वीप के कारण दोनो देशो के बीच विवाद को लम्बा खीचना उपयुक्त नही समझा। २८ जून १९७४ को दोनो देशो मे एक समझौता हुआ, जिसके अनुसार कच्छदीप टापू पर भारत ने श्रीलका की प्रभुसता को स्वीकार कर लिया।

जनता सरकार ने श्रीलका से सम्बन्ध बढाने के लिए ईमानदारी भरा प्रयत्न किया। श्रीलका के विदेशमत्री हमीद अप्रैल, १९७८ मे भारत आये और उसके बाद अक्टूबर १९७८ मे जयवर्द्धने ने स्वय भारत की यात्रा की। उन्होने प्रवासी भारतीयो की समस्या शीघ्र

सुलझाने का आश्वासन दिया किन्तु ३५ करोड रूपये के भुगतान-असन्तुलन पर चिन्ता भी व्यक्त की । उन्होने भारतीय पूँजी के विनियोग का स्वागत किया तथा दोनो देशो के सर्वविध आर्थिक सहयोग की कामना की । मुक्त व्यापार क्षेत्र स्थापित करने के प्रस्ताव पर भी ध्यान दिया गया । दोनो देशो की विदेश नीति का विश्व मामलो के बारे मे लगभग समान दृष्टिकोण था हालाकि कैम्प डेविड समझौते के बारे मे जयवर्द्धने सरकार का रूख भारत की तरह आलोचनात्मक नही था[8] । फरवरी, १९७८ मे मोरारजी देसाई ने श्रीलका की यात्रा की तथा प्रवासी भारतीयो की नागरिकता से सम्बन्धित प्रक्रिया की स्वय जाकर देखभाल की । मोरारजी की इस श्रीलका यात्रा से दोनो देशो मे मधुरता का सचार हुआ इसमे सदेह नही है ।किन्तु श्रीलका के तमिलो की समस्या के बारे मे कटुता ज्यो की त्यो बनी रही। मोरारजी ने श्रीलका के तमिलो को यह सलाह दी कि वे अलगाववाद को छोडे और सिहलियो के साथ मिल-जुलकर रहे । जनता सरकार की इतनी बडी उदारता के बाद भी सयुक्त राष्ट्र महासभा मे श्रीलका का वोट पाकिस्तान के परमाणु मुक्त क्षेत्र प्रस्ताव के पक्ष मे पडा ।

१९८२-८८ मे भारत श्रीलका सम्बन्धो को प्रभावित करने वाला मुख्य मुद्दा श्रीलका का तमिल अल्पसख्यक समुदाय है। श्रीलका की १७ १३ मिलियन की आबादी मे ७४ प्रतिशत सिंहली १३ प्रतिशत श्रीलका के तमिल, ६ प्रतिशत भारत मूल के तमिल और शेष अन्य

लोग हैं । तमिल श्रीलका के उत्तर मे जाफना जिले मे रहते है । तमिल लोग धर्म से हिन्दू कहलाते है और सिहली बौद्ध [१] ।

अनेक कारणो से श्रीलका के तमिलो मे असुरक्षा अविश्वास और आतक की भावना विद्यमान रही है । जयवर्द्धने की सरकार ने तमिलो के विरूद्ध घोर भेदभावपूर्ण नीतिया अपनायी । आतकवादियो के दमन के नाम पर निर्दोष लोगो की हत्या की जाने लगी। १९७७ के बाद चार बडे दगे एव १९८३-८५ का दमन नरसहार आदि ने तमिल नृवशियो को बाध्य कर दिया कि या तो वे समुद्र मे कूद पडे या समुद्र पार कर भारत आ जाये ।

श्रीलका के तमिलो के वर्तमान आन्दोलन का मूल कारण बहुसख्यक सिंहलियो द्वारा की गयी भेदभाव की नीति है । एक तरफ देश के आर्थिक,सामाजिक और राजनयिक क्षेत्रो मे सिहली शासक वर्ग का एकाधिकार है और दूसरी तरफ बौद्ध धर्म को देश का राष्ट्रीय भाषा का दर्जा दिया गया है दूसरी तरफ तमिलो की निम्नलिखित शिकायते है।

१ सरकारी नौकरियो मे भर्ती के वक्त तथा विश्वविद्यालयो मे प्रवेश के वक्त उनके साथ भेदभाव किया जाता है ।

२ सरकार तमिल इलाको मे सिंहली किसानो को जानबूझकर बसा रही है, ताकि तमिल लोग 'घर' मे ही अल्पसख्यक हो जाये ।

३ तमिलो के सगठन की शक्ति को तोडने के लिए सरकार तमिल अल्पसख्यक को देश के दूसरे हिस्सो मे जबर्दस्ती बिखेर रही है

४ उग्रवादियो का सफाया करने के बहाने जयवर्द्धने सरकार सरकारी आतकवाद फैला रही है[10]।

श्रीलका के तमिल समुदाय ने अपने आपको 'तमिल यूनाइटेड लिबरेशन फ्रन्ट' नाम के राजनीतिक सगठन मे सगठित कर रखा है और इसके माध्यम से समय-2पर वह अपने असन्तोष को अभिव्यक्त भी करता रहता है। तमिलो के कुछ उग्रवादी सगठन तमिल ईलम नाम के एक पृथक राष्ट्र के निर्माण की बात करते है परन्तु तमिलो का प्रमुख सगठन तुल्फ (TULF) स्वायत्तता की ही माग करता है। यह सगठन श्रीलका को विभाजित नही करना चाहता है परन्तु यह तमिलो के लिए एक स्वतत्र देश के नागरिको की तरह सम्मानित जीवन अवश्य प्राप्त करना चाहता है। यही मुद्दा तमिल आन्दोलन का मूल आधार है।

श्रीलका के तमिल अल्पसख्यक समुदाय की समस्या उसका आन्तरिक मामला है और भारत श्रीलका के आन्तरिक मामले मे हस्तक्षेप नही करना चाहता। भारत ईलम पृथक तमिल राज्य की धारणा^का समर्थक नही है। वह सगठित और अखण्ड श्रीलका ही बनाये रखना चाहता है तथापि अनेक कारणो से वहा पर होने वाली घटनाओ के प्रति भारत का चिन्तित होना स्वाभाविक है[11]। *भारत की श्रीलका के प्रति तब चितित होता है जब -*

१ श्रीलका की घटनाए तथा तमिलो पर अत्याचार भारत के तमिल समुदाय दक्षिणी राज्यो को उत्तेजित करते है।

२ भारत का उन घटनाओ से चिन्तित होना स्वाभाविक है जब सिहली बहुसख्यक समुदाय श्रीलका के तमिल अल्पसख्यक समुदाय की आर्थिक और व्यापारिक सम्पन्नता को नष्ट-भ्रष्ट कर उन्हे विपन्न बनाने का प्रयास करता है।

३ जब नरसहार से बचने के लिए एक लाख शरणार्थी भारत से शरण लेते है।

४ जब जयवर्द्धने सरकार तमिल समस्या को अलस्टर पजाब या कश्मीर समस्याओ से जोडने का प्रयास करती है।

५ जब श्रीलका सरकार तमिल उग्रवादियो को सबक सिखाने के लिए इजरायल की खुफिया सस्थाओ -शिनबेत और मौसाद को श्रीलका की सेनाओ और पुलिस को प्रशिक्षण देने के लिए भाडे पर रखती है।

६ जब श्रीलका सरकार निर्गुट नीति को ताक पर रखकर अमेरिका को प्रसन्न करने के इजरायल से राजनयिक सम्बन्ध स्थापित करती है।

७ जब श्रीलका सरकार भारत को डराने के लिए त्रिकोमल्ली बन्दरगाह मे अमेरिका नौसेना जहाजो और युद्धपोतो को सुविधाए देने कि लिए वार्ताए करती है।

जयवर्द्धने की सरकार ने तमिलो के विरूद्ध घोर भेदभावपूर्ण नीतिया अपनाया आतकवादियो के दमन के नाम पर निर्दोष लोगो की सामूहिक हत्या की जाने लगी। जुलाई १९८३ मे तमिल आतकवादियो ने १३ सैनिक मार डाले[12]। इस पर श्रीलका की सिंहली सेना पागल हो उठी और सैकड़ो निर्दोष तमिलो को गोलियो

से भून डाला। सरकारी जेलो मे बन्दी तमिलो की नृशस हत्या कर दी गयी । उनके घर और दुकाने जला दी गयी । श्रीलका के ये अत्याचार इतने भयकर थे कि स्वय श्रीलका को यह आशका होने लगी कि भारत उस पर आक्रमण कर सकता है। उसने भारत विरूद्ध अमेरिका ब्रिटेन पाकिस्तान और बगलादेश से सैनिक सहायता का आश्वासन मागा । जबकि भारत की इस प्रकार की कोई कार्यवाही करने की इच्छा नही रही[13] । श्रीमती इन्दिरा गाधी ने तो श्रीलका से दूर रहने का सिद्धान्त प्रतिपादित किया था ।

जहाँ तक तमिल समस्या के समाधान मे भारतीय सहयोग का प्रश्न है तमिल समस्या का समाधान करने हेतु भारत शुरू से ही बातचीत का रास्ता अपनाता रहा है । जुलाई १९८३ से जी पार्थसारथी भारतीय प्रधानमत्री के विशेष दूत के रूप मे कोलम्बो मे बातचीत करते रहे है । श्रीलका के राष्ट्रपति जयवर्द्धने की जून १९८४ और जून १९८५ मे दिल्ली मे भारतीय प्रधानमन्त्री के साथ शिखर वार्ताए आयोजित की गयी । भूटान की राजधानी थिम्पू मे श्रीलका की समस्या के शान्तिमय हल के लिए पहली बार ८जूलाई से और पुन १२ अगस्त से वार्ताए हुई [14]। परन्तु ये वार्ताए विफल रहीं ।

श्रीलका सरकार समस्या का समाधान सैनिक शक्ति के बल पर निकालने का प्रयत्न करती रही है, जबकि भारत बातचीत के जरिये समस्या का हल करने की सलाह देता रहा है । श्रीलका ने

भारत पर यह भी आरोप लगाया कि आतकवादी चुनौती तमिलनाडु सरकार द्वारा समर्थित आन्दोलन से शुरू होती है । इससे सदभाव कमजोर होते है और विश्वसनीयता घटती है ।

तमिलनाडु के मुख्यमत्री, श्री एम जी रामचन्द्रन के नेतृत्व मे एक सर्वदलीय प्रतिनिधि मडली २३ अप्रैल १९८५ को राजीव गाधी से मिला था और उन्होने श्रीलका मे हाल की स्थिति के बारे मे एक ज्ञापन दिया था[15]।

प्रतिनिधि मडल को आश्वासन देते हुए राजीव गाधी ने कहा था कि भारत सरकार श्रीलका की स्थिति पर नजर रखे हुए है और उससे भारत पर पडने वाले प्रभाव से हम चिंतित है। श्रीलका सरकार के साथ सामान्य श्रोतो तथा विशेष यात्राओ के माध्यम से निरन्तर सम्पर्क बनाए हुए है[16]।

राजीव गाधी ने स्पष्ट किया -"वर्तमान स्थिति को ध्यान मे रखते हुए मै राष्ट्रपति जयबर्द्धन को अपने दुख और चिता के बारे मे अवगत कराऊगा और सभी सबधित पक्षो को मान्य राजनीतिक आधार पर इस समस्या को तुरन्त हल किए जाने की आवश्यकता के बारे मे बताऊगा। स्थिति की गम्भीरता को देखते हुए मैने इस समस्या के समाधान के लिए प्रयास जारी रखने हेतु एक विशेश सलाहकार दल का गठन किया है।"[17]

भारत श्रीलका समझौता श्रीलका की यात्रा से लौटने के बाद राजीव गाधी ने ससद को अवगत कराया था- " मै इस

यात्रा को इसलिए महत्वपूर्ण मानता हूँ कि श्रीलका के महामान्य राष्ट्रपति ने और मैने कल २९ जुलाई को एक करार पर हस्ताक्षर किए जिसका उदेश्य उस कठिन सघर्ष को समाप्त करवाना है जो वर्षो से हमारे मित्र पडोसी श्रीलका को दुखी करता आया है। सदन श्रीलका के नागरिको के बीच के जातीय सघर्ष की पृष्ठभूमि से परिचित है जिसकी जडे वहा के जटिल ऐतिहासिक और आर्थिक सामाजिक कारणो मे निहित है। इस सघर्ष ने पिछले चार वर्षो मे बहुत गभीर रूप ले लिया था जिसके कारण श्रीलका के स्थायित्व और उसकी एकता और अखण्डता के लिए खतरा पैदा हो गया था।

१९८३ मे तमिलो के विरूद्ध अभूतपूर्व हिसा के साथ तो हालात बहुत ही अधिक बिगड गए। मै बडे पैमाने पर हुई हत्याओ और उन व्यापक दुख पीडाओं के ब्योरे मे नही जाना चाहता जो श्रीलका के लोगो को सहनी पडी। जुलाई १९८३ और मई १९८७ के बीच की अवधि विशेष रूप से श्रीलका के इतिहास का दुखद अध्याय है। हजारो नागरिको की हत्या हुई जिनमे तमिल, सिंहली औरते और बच्चे यहा तक कि भिक्षु और पुजारी भी शामिल है। हजारो लोग बेघर होकर खुद अपने ही देश श्रीलका मे शरणार्थी बन गए, और करीब १,५० ००० श्रीलकाई तमिल शरणार्थी भारत आ गए। ”

श्रीलका के राष्ट्रपति के साथ हुए समझौते के बारे मे उन्होने भारतीय ससद को अवगत कराते हुए कहा था- “हमने श्रीलका की

जातीय समस्या के स्थायी समाधान की एक रूपरेखा तैयार की। इस समझौते से वे बुनियादी आकाक्षाए पूरी होती है जो तमिल सघर्ष का मूल कारण है यानि उनकी यह इच्छा कि उनकी स्पष्ट जातीय अस्मिता को स्वीकार किया जाए अपने राजनैतिक भविष्य के प्रबध के लिए उन्हे राजनैतिक स्वायत्तता मिले इस लक्ष्य की पूर्ति के लिए उन्हे समुचित राजकीय सत्ता प्राप्त हो श्रीलका के उत्तरी और पूर्वी प्रान्तो को तमिलो के ऐतिहासिक निवास के क्षेत्रो के रूप मे स्वीकृति मिले तथा तमिल को श्रीलका लोकतात्रिक समाजवादी गणराज्य की एक राजभाषा माना जाए[19]। ”

इस करार मे श्रीलका के पूर्वी और उत्तरी प्रान्तो को एक प्रशासनिक ईकाई बना दिया गया है, जिसकी अपनी एक निर्वाचित प्रान्तीय परिषद होगी और एक मुख्यमत्री होगा। मई से दिसम्बर १९८६ के बीच जिन प्रस्तावो को अतिम रूप दिया था, उनकी रूप रेखा के अर्न्तगत प्रान्तीय परिषद को अधिकार दिए जाऐगे, ताकि श्रीलका के प्रान्तो को पूर्ण रूप से स्वायतत्ता का सुनिश्चय हो सके। श्रीलका मे आपातकालीन स्थिति निक ट भविष्य मे हटा ली जायेगी। लडाई बन्दी और शस्त्र समर्पण एक निश्चित समयावधि मे किया जाएगा। सभी उग्रवादी वर्गो को आम माफी दी जाएगी। तीन माह के भीतर प्रान्तीय परिषदो के चुनाव करा लिये जायेगे। इस करार मे उत्तरी और पूर्वी प्रान्तो के बीच सम्पर्क के बुनियादी मुददे पर १९८८ के अत तक जनमत सग्रह का सुझाव है, जिसे स्थगित करने का

राष्ट्रपति को विवेकाधिकार होगा[20]।

श्री राजीव गाधी ने समझौते पर प्रकाश डालते हुए ससद मे कहा कि " सिहल आतकवादी सगठन जे०वी०पी० ने सन १९७१ मे श्रीलका मे बडे पैमाने पर विद्रोह करवाया था। इस विद्रोह को दबाने के लिए तत्कालीन प्रधानमत्री श्रीमती भण्डारनायके ने भारत से सहायता मागी थी और तत्काल पूरी सहायता की थी।

राष्ट्रपति जयवर्द्धने के नेतृत्व मे श्रीलका की सरकार ने भारत से समुचित सैनिक सहायता के लिए औपचारिक अनुरोध किया ताकि जाफना प्रायद्वीप मे लडाई-बन्दी और शस्त्र समर्पण, और अगर जरूरत पडे तो पूर्वी प्रान्त मे भी सुनिश्चत हो सके। उन्होंने श्रीलका के कुछ सैनिको को जाफना से दक्षिण मे कुछ स्थानो पर ले जाने के लिए सैनिक परिवहन के लिए भी अनुरोध किया।

श्रीलका की सरकार के इस औपचारिक अनुरोध के उत्तर मे तथा हाल ही मे सम्पन्न भारत श्रीलका करार के अन्तर्गत अपने दायित्वो के अनुरूप भारत की सशस्त्र सेना जाफना प्रायद्वीप मे पहुँच गयी। सैनिक श्रीलका मे श्रीलका की सरकार के विशिष्ट और औपचारिक अनुरोध पर वहा उतरे, जिन्होने भारत-श्रीलका करार के अन्तर्गत भारत के दायित्वो और वायदो का हवाला दिया था।

श्रीलका के हाल के इतिहास का एक दुखद अध्याय समाप्त हो जायेगा है और भारत-श्रीलका सबधो का एक नया अध्याय शुरू होगा ।

इस करार से अतीत का तनाव और अविश्वास दूर हो जाएगा तथा श्रीलका और भारत के लोगो के बीच की मित्रता और अधिक सुदृढ होगी जो २५०० वर्ष से ज्यादा पुरानी है और जिनका इतिहास सास्कृतिक परम्परा एक रही है[21]। "

भारत - श्रीलका समझौते के कार्यान्वयन पर प्रकाश डालते हुए श्री राजीव गाधी ने लोक सभा मे कहा कि इस समझौते की विश्व भर मे प्रशसा की गई । इस बात को सभी मानते है कि समझौते को पूरी तरह से क्रियान्वित करना सभी के हित मे होगा। तमिल आकाक्षाए पूरी होगी। श्रीलका की एकता और अखण्डता बनाए रखी जाएगी तथा क्षेत्र मे शाति और स्थिरता को बहाल किया जा सकेगा।

समझौते पर हस्ताक्षर होने के बाद श्रीलका के सुरक्षा कर्मी अपनी बैरको मे ही रहे पूर्वी प्रान्त मे होम गार्डो से शस्त्र ले लिए गए और स्पेशल टास्क फोर्स को अधिकाश रूप से हटा लिया। सर्वक्षमा के अतर्गत ३३०० से भी अधिक तमिल बन्दियो को रिहा किया गया तथा यदि सामान्य स्थिति बनाने मे लिटटे ने अडचन नही डाली होती तो बाकी बन्दियो को भी छोड दिया जाता ।

उत्तरी और पूर्वी प्रान्तो मे सिविल प्रशासन की रूपरेखा उसी आधार पर तैयार की जा रही थी जिसका सुझाव लिटटे से लेकर तुल्फ तक के तमिल प्रतिनिधियो ने दिया था। अतरिम प्रशासनिक परिषद घोषित कर दी गई थी जिसमे लिटटे को सबसे अधिक

निर्णायक हिस्सा दिया गया था। भारत से शरणार्थियो की वापसी की योजना श्रीलका सरकार के परामर्श से बनाई गई थी। हमने भारत द्वारा घोषित २५ करोड रूपये के अनुदान के माध्यम से वित्त पोषित किए जाने वाले पुर्नवास के प्राथमिकता क्षेत्रो का पता लगा लिया था। श्रीलका के उत्तरी और पूर्वी प्रान्तो मे शाति स्थापित हो गई थी। सामान्य स्थिति की बहाली नजदीक ही थी कि लिट्टे अपने वचन से मुकर कर करारा आघात किया।

लिटटे ने जानबूझकर समझौते को असफल बनाने के प्रयास किए क्योकि वे उग्रवाद से लोकतान्त्रिक राजनैतिक प्रकिया मे आने मे या तो असमर्थ थे या अनिच्छुक। लिट्टे को राजनैतिक मुख्यधारा मे शामिल होने के लिए और यहा तक कि इस प्रकिया मे प्रमुख भूमिका निभाने के लिए भी हर सभव प्रोत्साहन तथा अवसर दिया गया। लिटटे के नेतृत्तव को जिन्होने ६०० से अधिक विरोधी तमिल उग्रवादियो को मरवा दिया था अपनी सुरक्षा के लिए व्यक्तिगत शस्त्र रखने की अनुमति दे दी थी। उन्हे अपने हथियार स्वय उनकी सुविधा के अनुसार समर्पित करने की अनुमति दी थी, हालाकि इससे कुछ प्रेरित पार्टियो ने समझौते को क्रियान्वित करने की हमारी मशा पर शक किया था। लिटटे अपनी बात से पीछे हट गए और हिसा का रास्ता अख्तियार करने का फैसला किया। एक ओर तो इसने भारत के समझौते के प्रति अपना समर्थन देने का वचन दिया लेकिन इसरी ओर इसने सेमिनारो के माध्यम से हिसा अपनी गैर-कानूनी

प्रसारण सुविधाओं के माध्यम से भारत और इस समझौते के विरूद्ध एक प्रचार अभियान शुरू कर दिया। इसने जाफना मे गडबड़िया फैलानी शुरू कर दी सामान्य जन-जीवन तथा पुननिर्माण और पुर्नवास की प्रक्रिया मे बाधा पहुचाई उन्होने तमिल भावनाओ को भडकाने का प्रयास किया। यह अनशन उन रियायतो की माग के लिए किया गया था जिनके बारे मे पहले से ही बातचीत चल रही थी और जिनहे मान लिया गया था तथा उन्होने उस पर सन्तोष व्यक्त किया था।

दुर्भागयवश इसी समय लिटटे के १२ सदस्यो ने आत्महत्या की। भारतीय शाति सेनाओ को निर्देश दिए गए थे कि वे ऐसे किसी भी आदमी को पकड ले जो हथियार लेकर चल रहा हो अथवा असैनिक लोगो को मारने के काम मे लगा हो। इस मौके पर लिट्टे ने भारतीय शाति सेनाओ पर हमले आरभ कर दिए। तब इस बात के सिवाय कोई और विकल्प नही था कि लिटटे को निशस्त्र कर दिया जाए। शान्ति सेना को ऐसे तरीके अपनाने अथवा हथियारो का प्रयोग न करने के कडे अनुदेश दिए गए थे जिसके कारण जाफना के नागरिक जो लिटटे के बन्धक बने हुए थे भारी सख्या मे हताहत न हो। भारतीय सेना ने अत्याधिक अनुशासन और साहस के साथ इन अनुदेशो का पालन किया है और तमिल नागरिको को बचाने की इस प्रक्रिया मे बहुत कुर्बानी दी है।

इन कार्रवाइयो को करते समय भारत ने इस तथ्य को नही भुलाया कि भारत का अतिम उददेश्य सत्ता का शीघ्र तथा उपयुक्त रूप से हस्तातरण सुनिश्चत करना है ताकि तमिलो की न्यायसगत आकाक्षाए पूरी हो सके और वे सुरक्षापूर्वक श्रीलका मे अन्य नागरिको के साथ सम्मान से रह सके। लिटटे द्वारा की जा रही हिसा पर नियन्त्रण करने की कोशिश करते हुए भी भारत ने श्रीलका के तमिल शरणार्थियिं की शीघ्र वापसी का सुनिश्चय करने की जरूरत की तमिल क्षेत्रो पर नये उपनिवेश न बनने देने का सुनिश्चय करने की आवश्यकता को हमेशा ध्यान मे रखा।

श्रीलका मे तमिलो की न्यायसगत आकाक्षाओ को पूरा करने का भारत ने पूरा प्रयास किया। राष्ट्रहित मे यह आवश्यक हो गया था कि भारत श्रीलका के आतरिक मामलो मे दखल दे अन्यथा सामरिक दृष्टि से महत्वपूर्ण भारत का यह पडोसी देश ऐसे देशो का अड्डा बन जाता जो भारत मे आतकवादी गतिविधियो को बढावा दे रहे थे तथा अभी तक प्रकाश मे आये कई आतकवादी सगठनो का सचालन कर रहे थे। राजीव गाधी ने वक्त की नजाकत को समझा तथा भारतीय जनता और जनप्रतिनिधियो को विश्वास मे लेकर श्रीलका मे शाति वार्ताओ के माध्यम से तथा सैनिक बल पर भी शाति कायम करने की कोशिश की। यद्यपि इसके लिये भारत का काफी धन-जन इसमे स्वाहा हो गया[22]।

पाद टिप्पणिया

1 Appadorai A Domestic Roots of India s Foreign Policy Page 162

2 अशोक और मौर्या साम्राज्य का पतन रोमिला थापर, पृष्ठ १२२

3 Ismail M India and their Neighbours

4 Ismail M India and their Neighbours

5 Gunther J Inside Asia Page 99

6 Madan Gopal India as a World Power

7 Murty K S India Foreign Policy Page – 114

8 Murty K S India Foreign Policy Page – 114

9 नव भारत टाइम्स-३ ९ १९८५ मे प्रकाशित डा० वेद प्रताप वैदिक का लेख ।

10 Mishra K P Ed Studies in Indian Foreign Policy Page 225

11 Kachroo J L India and Common Wealth

12 Indian Express 28 7 1983

13 Barman, Chandra R The Asean and India, India Quarterly Page-112

14 Indian Express – 9 7 1985

15 Times of India – 24 4 1985

16 Indian Express – 24 4 1985

17 श्रीलका की स्थिति के बारे मे वक्तव्य लोकसभा वाद विवाद २५ ४ १९८५ पृष्ठ-१६० १६१

18 भारत श्रीलका समझौते के बारे मे वक्तवय लो०स०वा०वि० ३० ०७ १९८७ पृष्ठ-२१६ २१८

19 भारत श्रीलका समझौते के बारे मे वक्तवय लो०स०वा०वि० ३० ०७ १९८७ पृष्ठ-२१६ २१८

20 जनसत्ता ३० ०७ १९८५

21 भारत श्रीलका समझौते के बारे मे वक्तव्य लो०स०वा०वि० ३० ०७ १९८७-पृष्ठ-२१६ २१८

22 भारत श्रीलका मे स्थिति के बारे मे वक्तव्य लो०स०वा०वि० ९ ११ १९८७ पृष्ठ ३१३ से ३१७

अध्याय-७

वर्ष के दौरान मालदीव और वर्मा के साथ भी सबध सुदढ हुय जो कि फरवरी,१९८५ मे मालदीव के राष्ट्रपतिश्री गयूम की यात्रा और प्रधानमत्री की हाल ही की माले की यात्रा से रेखाकित होता है। विदेश राज्य मत्री ने भी वर्ष के दौरान रगून की यात्रा की [1]।

विदेशमत्री श्री नारायणदत्त तिवारी १९८६ मे बर्मा की राजकीय यात्रा की उनकी इस यात्रा के दौरान अडमान सागर के कोको चैनल तथा बगाल की खाडी मे समुद्री सीमा के परिसीमन के सबध में एक करार पर हस्ताक्षर हुए जिसकी वजह से दोनो देशो के बीच विद्यमान मैत्रीपूर्ण और सौहार्दपूर्ण सबध ओर सुदृढ हुए है [2]।

बर्मा के साथ मौजूदा सौहार्दपूर्ण सबध सुदृढ हुये है। सितम्बर १९८७ मे बर्मा के विदेश मत्री श्री यू ये गोउग की भारत यात्रा के दौरान रगून मे दिसम्बर १९८६ मे हुये समुद्री सीमा करार की पुष्टि के प्रलेखे का आदान प्रदान किया गया। इसी के साथ भारत वर्मा के बीच समुद्री सीमा के सबध मे परिसीमन सन्धि लागू हो गयी प्रधानमत्री राजीवगॉधी ने दिसम्बर १९८७ मे बर्मा की यात्रा की ओर बर्मा की सोशिलस्ट प्रोग्राम पार्टी के अध्यक्ष श्री यू ने विन राष्ट्रपति श्री ऊ सान यू और वर्मा के प्रधानमत्री के साथ गहन बातचीत की इन वार्ताओ मे दोनो देशो के बीच विधमान मैत्री सबधो को बढाने और मजबूत करने के उपायो पर जोर दिया गया। द्विपक्षीय सबधो को प्रोत्साहित करने के लिये अनेक निर्णय लिये गये[3]।

वर्मा भारत का एक निकट का पड़ोसी देश है जिसकी भारत

के साथ एक लम्बी और सवेदनशील सीमा लगती है। दोनो देशो के बीच परम्परागत रूप से मैत्रीपूर्ण सबध रहे है और दोनो के बीच कोई समस्या नही रही। ऐसी स्थिति मे जब १९८८ मे वहॉ गम्भीर असतोष भडक उठा तो भारत को उस पर चिन्ता हुयी। यह बर्मा का आन्तरिक मामला था, लेकिन भारत के नेताओ ने उस समय जो वक्तव्य दिये उनमे बर्मा की जनता की लोकतान्त्रिक आकाक्षाओं के प्रति भारत की सहानुभूति स्पष्ट नजर आती थी। भारत की सीमाओ पर शरण लेने आये भारत के लोगो को मिजोरम और अरूणाचल प्रदेश के शिविरो मे रहने की अनुमति दी गयी[4]।

जहा तक हिन्द महासागर का सबध है राजीव गाधी ने भी माना कि हिन्द महासागर मे बडी शक्तियो की सैनिक उपस्थिति मे विस्तार और इस क्षेत्र मे बढता हुआ तनाव चिन्ता का विषय बना हुआ है। भारत इस बात के लिए दृढ रूप से वचनवद्ध है कि हिन्द महासागर क्षेत्र से विदेशी सैनिक उपस्थिति पूरी तरह समाप्त होनी चाहिए और इस क्षेत्र मे बाहरी शक्तियो द्वारा प्रयुक्त सैनिक अड्डो और अन्य सुविधाओ को पूरी तरह समाप्त किया जाना चाहिए। भारत ने यथाशीघ्र १९९० से पूर्व कोलम्बो मे हिन्द महासागर के सबध मे एक सम्मेलन बुलाए जाने की माग का समर्थन किया है।[5]

हिन्द महासागर और बडी ताकतें तथा भारत की नीति राजीव गाधी के इस क्षेत्र में विचार को जानने के लिए महत्वपूर्ण है। हिन्दमहासागर के आस-पास के देशो ने बड़ी ताकतो से अनेक बार

अनुरोध किया है कि वे इस क्षेत्र को अपने षडयन्त्रो का केन्द्र न बनाएँ और इसे शान्ति-क्षेत्र बना रहने दे। लेकिन ये बडी ताकते अपना-अपना प्रभाव क्षेत्र बढाने की होड मे बार-बार इस अनुरोध को ठुकरा कर अपना उल्लू सीधा करने की कोशिश करती रही। भारत ने हिन्द महासागर मे महाशक्तियो की सैन्य उपस्थिति तथा सैनिक अड्डो की स्थापना का सदैव ही विरोध किया है। उनकी मान्यता है कि ऐसा करने से उसके पडोस मे नए सघर्ष उत्पन्न होते है और उसकी शान्ति तथा स्थायित्व के लिए खतरा उत्पन्न हो जाता है। हिन्द महासागर को शान्ति का क्षेत्र बनाने के सम्बन्धमे१९७१ की घोषणा को शीघ्र क्रियान्वित कराने की दिशा मे भारत गुट-निरपेक्ष राष्ट्रो तथा तटवर्ती राज्यो के साथ मिलकर कार्य कर रहा है।

"भारत की हमेशा यह मान्यता रही है कि हिन्द महासागर मे इस प्रकार की स्थिति का अस्थिरकारी प्रभाव पडता है। और एक शक्ति की उपस्थिति से निश्चय ही दूसरी शक्तिया भी आकर्षित होती है जिसके परिणामस्वरूप सघर्ष का वातावरण पैदा होता है। हालाकि हिन्द महासागर मे बडी शक्तियो की सैनिक उपस्थिति को न्यायोचित ठहराने के लिए तरह-तरह की वाते कही गई जैसे तेल की निरन्तर सप्लाई का आश्वासन, सचार साधन का कायम रखा जाना सुरक्षा और क्षेत्रीय स्थयित्व। लेकिन भारत का यह पक्का विश्वास है कि इस तरह के रवैये से न तो क्षेत्र की सुरक्षा को ही योगदान मिल सकता है और न इसके स्थायित्व मे। इसके विपरीत

इससे समस्या और अधिक भडकती ही है । इस क्षेत्र मे सेना के बढते हुय जमाव से भारत और हिन्द महासागर के क्षेत्र को शान्ति का क्षेत्र बनाया जाना चाहिए [6]।"

हिन्द महासागर ससार की नौसेनाओ का अखाडा बन गया है। यह परमाणु हथियारो का अड्डा बन चुका है । हम हिन्द महासागर को शाति क्षेत्र बनाये रखने के लिये पूरी तरह वचनबद्ध है और हम इस लक्ष्य की पूर्ति के लिये प्रयास करेगे । हिन्द महासागर मे बडी ताकतो की उपस्थिति से सभी तटवर्ती राष्ट्रो को खतरा है । दिएगो गार्शिया का लगातार सैनिकीकरण हमारे लिये गभीर चिता का विषय है । हम चाहते है कि हिन्द महासागर महाशक्तियो की शत्रुता और उनके आपसी तनावो से मुक्त रहे । सयुक्त राष्ट्रसघ मे हिन्द महासागर सम्बन्धी समिति मे हमारा प्रतिनिधि सक्रिय रूप से भाग लेता है । हम कार्यवाही के बारे मे अन्य देशो के साथ बहुत निकट से सम्पर्क बनाये हुए है जो कि सयुक्त राष्ट्र सघ की साधारण सभा के निर्णयो को असली जामा पहनाने के लिये की जा सकती है । हमे तटवर्ती शक्तियो के सहयोग की जरूरत है और हमे उम्मीद है कि हमे उनका सहयोग अवश्य मिलेगा [7] ।

पाद टिप्पणिया

1 भारत १९८६-सूचना एव प्रकाशन विभाग । पृष्ठ ७१९

2 भारत १९८७-सूचना एव प्रकाशन विभाग । पृष्ठ ५१५

3 भारत १९८८-८९ -सूचना एव प्रकाशन विभाग । पृष्ठ ५५७

4 भारत १९९०-सूचना एव प्रकाशन विभाग। पृष्ठ ६४६

5 भारत १९८६-सूचना एव प्रकाशन विभाग।

6 Madan Gopal India as a World Power Page 127

7 Ministry of External Affairs India and Foreigh Affairs Records

अध्याय-८

बगला देश के उद्भव के समय अन्तर्राष्ट्रीय राजनीति मे विकसित अमरीकी-चीन नितान्त ने भारत के समक्ष बड़ी समस्या उत्पन्न कर दी थी। एक ओर पाकिस्तान चीन और अमरीका की साठगाठ से दक्षिण एशिया मे शक्ति सन्तुलन अस्त-व्यस्त हो रहा था तो दूसरी ओर पाकिस्तान के दो सम्भागो के बीच झगडे का सीधा प्रभाव भारत पर आ पड़ा था[1]। पूर्वी बगाल मे पाकिस्तान की सैनिक कार्यवाही के परिणामस्वरूप लाखो लोगो को अपना वतन छोड़कर भारत आना पडा। धीरे-धीरे शरणार्थियो की सख्या बढकर एक करोड हो गयी। ससार मे इतनी बडी जनसख्या का दूसरे देश मे आगमन पहली घटना थी। इस विशाल जनसमुदाय के खान-पान, रहन-सहन और स्वास्थ्य सम्बन्धी देखभाल का भार भारत पर था। इससे भी अधिक महत्वपूर्ण बात भारत की सुरक्षा अखण्डता और सार्वभौमिकता को अक्षुण्ण बनाये रखने की थी। विश्व के अधिकाश देश इस प्रसग पर तटस्थ थे क्योकि वे इस आग की लपट से बहुत दूर थे। किन्तु पूर्वी बगाल मे जो कुछ भी घटित हो रहा था उसे देखते हुए भारत न तो तटस्थ दृष्टा रह सकता था और न विरक्त ही। देश की ससद अखबार राजनीतिक दल और प्रबुद्ध जन सभी बगला देश की जनता और उसके नेताओं को समर्थन देने की माग कर रहे थे। भूतपूर्व विदेश मन्त्री **एम सी छागला** का कहना था राजनैतिक, वैधानिक और नैतिकता की दृष्टि से बगला देश को मान्यता देना न्यायोचित है[2]। भारतीय हितो के परिप्रेक्ष्य मे विवेचना

करते हुए उन्होने कहा कि बगलादेश का उदभव हमारे अच्छे पडोसी की दृष्टि से स्वागत योग्य है। इसके साथ हमारे सास्कृतिक राजनीतिक और व्यापारिक सम्बध होगे । यह पड़ोसी पाकिस्तान से भिन्न होगा । क्या हम अपने पूर्वी भाग मे मित्र पडोसी नही चाहते । प्रसिद्ध पत्रकार **अजित भट्टाचार्य** का अभिमत था कि भूगोल इतिहास सस्कृति और आर्थिक हितो की दृस्टि से इस सघर्ष की परिणति भारत के लिये अत्यन्त महत्वपूर्ण है । शरणार्थियो के आगमन से स्थिति और भी गम्भीर हो गयी है । इन सब बातो को देखते हुए भारत के लिये यह आवश्यक है कि इस लडाई का अन्त बगलादेश के पक्ष मे हो[3] । सन १९६२ और १९६५ मे जितनी जोखिम थी उतनी ही इसमे विद्यमान है । इससे हमे निश्चय ही लाभ होगे । वे इस प्रकार है-

अ हमारी सीमाओं के दोनो ओर एक सशक्त दुष्मन की जगह एक मित्र और दूसरा कमजोर दुश्मन ही रह जायेगा।

ब कश्मीर की सम्स्या का समाधान भी सरल हो जायेगा ।

स धर्मनिरपेक्ष राज्य की महत्ता बढेगी और धर्मतन्त्रीय राष्ट्रवाद की मिथ उजागर हो जायेगी ।

पाकिस्तान ने धीरे-धीरे पूर्वी बगाल मे अपनी स्थिति और भी सुदृढ कर ली । पश्चिम सीमान्त पर पाकिस्तानी सेना के जवानो ने स्थिति को और भी विस्फोटक बना दिया । युद्ध भारत के

दरवाजे पर दस्तक दे रहा था। निक्सन माओ से मिलने जा रहे थे और भारत यह समझने लगा कि दो शक्तियो का मिलन भारत के लिये खतरनाक हो सकता है। जब ३ दिसम्बर १९७१ को पाकिस्तान ने पठानकोट, अमृतसर जोधपुर आगरा और श्रीनगर पर बमबारी कर इस उपमहाद्वीप मे युद्ध छेड़ दिया[4] तो दो सप्ताह की घमासान लडाई के बाद बगलादेश की मुक्तिवाहिनी और भारतीय सेना के समक्ष पाकिस्तान को शस्त्र डालने पड़े। बगलादेश आजाद हुआ और शेख मुजीबुर्रहमान रिहा कर दिये गये। अपनी रिहाई के बाद ढाका जाते समय वे भारत रुके। उनके स्वागत समारोह मे भारत की भूमिका को दोहराते हुए प्रधानमन्त्री श्रीमती इन्दिरा गाधी ने जो कहा वह उल्लेखनीय है

मैने कहा था कि ये शरणार्थी अपने घर पुन लौटेगे। हम मुक्तिवाहिनी और बगलाजन की हर तरह से सहायता करेगे। हमने शेख साहब को भी मुक्त कराने का व्रत लिया था। ये तीनो वादे पूरे कर दिये गये है।

सक्षेप मे बगलादेश के निर्माण मे भारत की महत्वपूर्ण भूमिका रही है। बगलादेश का निर्माण भारत-पाक युद्ध के दौरान १६ दिसम्बर, १९७१ को हुआ। भारत ही सबसे पहला देश है जिसने ६ दिसम्बर, १९७१ को बगलादेश को मान्यता दे दी। भारत की सेनाओ ने बगलादेश की मुक्तिवाहिनी से मिलकर १६ दिसम्बर, १९७१ को स्वतन्त्र बगला देश की स्थापना करायी[5]।

६ दिसम्बर १९७१ को भारत ने बगलादेश को मान्यता दे दी। १० दिसम्बर १९७१ को प्रधानमन्त्री श्रीमती इन्दिरा गाधी और बगलादेश के तत्कालीन कार्यवाहक राष्ट्रपति नजरुल इस्लाम के मध्य एक सन्धि हुयी, जिसके अनुसार भारतीय सेनापति की अध्यक्षता मे एक सयुक्त कमान का निर्माण किया गया। जब १६ दिसम्बर, १९७१ को बगलादेश मे पाकिस्तानी सेना के कमान्डर जनरल नियाजी ने हथियार डाल दिये तो स्वतन्त्र बगलादेश का निर्माण हो गया। भारत के प्रयासो से ९ जनवरी १९७२ को भारत पहुचने पर शेख ने भारत के प्रति अपने आभार को व्यक्त किया [6]। **शेख मुजीब** ने कहा भारत-बगला देश एक असीम भाई-चारे मे बध गये है उनका कृतज्ञ राष्ट्र भारत की सहायता भुला नहीं सकेगा।

स्वतन्त्र बगलादेश के निर्माण के समय से लेकर १९७५ तक भारत-बगला देश सम्बन्ध घनिष्ठ मित्रता के रहे। अर्न्तराष्ट्रीय समस्याओ के प्रति दोनो ही देश धर्मनिरपेक्षता पचशील और गुटनिरपेक्षता की नीति मे विश्वास करते रहे। दोनो हिन्द महासागर को शान्ति का क्षेत्र बनाये रखना चाहते थे। बगला देश को मान्यता दिलाने मे भारत की कूटनीति अत्याधिक सक्रिय रही।

शेख मुजीब के कार्यकाल मे भारत और बगलादेश के बीच मैत्रीपूर्ण सम्बन्धो को सुदृढ करने के लिये निम्नलिखित सन्धिया और समझौते किये गये।

फरवरी, १९७२ मे शेख मुजीब भारत की यात्रा पर आये और मार्च १९७२ मे श्रीमती गाधी बगला देश गयीं।

१९ मार्च १९७२ को भारत और बगला देश के बीच एक मैत्री सन्धि हुई जिसकी अवधि २५ वर्ष की थी। इस सन्धि के द्वारा दोनो देशो ने एक-दूसरे के आन्तरिक मामलो मे हस्तक्षेप न करने एक दूसरे की सीमाओं का आदर करने एक-दूसरे के विरुद्ध किसी अन्य देश की सहायता नही करने विश्व-शान्ति और सुरक्षा को दृढ बनाने आदि का सकल्प किया। सन्धि मे यह भी व्यवस्था की गयी कि यदि दोनो देशो मे कोई मतभेद हो जायेगा तो उसे आपसी बातचीत द्वारा हल करने की कोशिश करेगे[7]।

भारत-बगला देश के बीच २५ मार्च १९७२ को एक व्यापार समझौता हुआ जिसके अनुसार सीमाओं के १६ - १६ कि०मी० तक स्वतन्त्र व्यापार की व्यवस्था थी। इसमे आयात-निर्यात और विनिमय सम्बन्धी कोई नियन्त्रण नहीं था।

बगला देश के आर्थिक पुनर्निमाण के लिए भारत ने २५ करोड़ रुपये मूल्य का माल और सेवाए प्रदान करने का वचन दिया। भारत ने बगला देश को ५० लाख पौण्ड की विदेशी मुद्रा का ऋण देने का भी निश्चय किया।

३० सितम्बर, १९७२ को दोनो देशो के बीच एक सास्कृतिक समझौता हुआ। जिसने दोनो के सम्बन्धो को और भी मजबूत किया।

पाकिस्तान के साथ ३ जुलाई, १९७२ को शिमला समझौता

और १८ अगस्त को युद्धबन्दी समझौता करते समय भी भारत ने बगला देश से परामर्श किया । अप्रैल १९७४ मे भारत पाकिस्तान और बगला देश के मध्य एक त्रिपक्षीय समझौता हुआ जिसके अनुसार सभी पाकिस्तानी युद्धबदी मुक्त कर दिये गये । मई १९७४ मे बगला देश और भारत के बीच सीमाकन सबधी समझौता हुआ जिसके अनुसार भारत ने दाहग्राम और अमरकोट का क्षेत्र बगला देश को दे दिया और बगला देश ने बरूबाडी पर भारतीय अधिकार स्वीकार कर लिया । मई १९७४ मे भारत ने बगला देश को ४० करोड़ रुपये का ऋण देना भी स्वीकार किया[5]। इस ऋण का उपयोग बगला देश रेल के डिब्बे और अन्य उपकरण सीमेण्ट मशीने, तथा कृषि उपकरण खरीदने के लिये करेगा।

सक्षेप मे शेख मुजीब के कार्यकाल मे भारत-बगलादेश सम्बध मधुर रहे।

जहा तक शेख मुजीब के बाद भारत बगलादेश सम्बन्ध का प्रश्न है

१५ अगस्त १९७५ को शेख मुजीब की हत्या कर दी गयी[8]। पहले मुश्ताक अहमद और फिर ६ नवम्बर, १९७६ को जस्टिस आबू सादात सयाम राष्ट्रपति बने। ३० जनवरी, १९७६ को मेजर जनरल जिया उर रहमान ने मुख्य मार्सल लॉ प्रशासक बनकर सत्ता पर अधिकार कर लिया। मई,१९८१ मे जिया उर रहमान की हत्या कर दी गयी। २४ मार्च,१९८२ को राष्ट्रपति अब्दुल सत्तार के असैनिक शासन का तख्ता पलट कर लेफ्टिनेट जनरल एच एम इरशाद मुख्य

मार्शल लॉ प्रशासक बन गये।

शेख मुजीब की हत्या के बाद बगलादेश के शासको ने भारत विरोधी और पाक समर्थक नीति अपनायी। यद्यपि इरशाद के काल १९८२ मे भारत विरोधी स्वर कुछ हल्का पडा परन्तु फिर भी भारत-बगलादेश मे उतने मधुर सम्बन्ध नही कहे जा सकते जितने शेख मुजीब के युग मे थे। वस्तुत शेख मुजीब की हत्या के बाद बगलादेश मे जो नयी सरकारे बनी उनका भारत के प्रति कठोर रूख था।

१९७५-१९८२ की कालावधि मे भारत बगला देश के मध्य सम्बन्धो को प्रभावित करने वाले जो निम्नलिखित मुद्दे प्रमुख थे।

इनमे फरक्का समस्या प्रमुख है। बगलादेश ने गगा के पानी के बटवारे की समस्या फरक्का विवाद को अर्न्तराष्ट्रीय रूप देने का प्रयत्न किया और सयुक्त राष्ट्र सघ व अन्तराष्ट्रीय मचो पर उछालने का प्रयास किया। भारत ने बगला देश को इस जलविवाद को अर्न्तराष्ट्रीय रूप न देने के लिये सहमत कर लिया और ढाका तथा दिल्ली मे वार्ताओ के बाद दोनो देशो ने २६ सितम्बर १९७७ को एक समझौता किया। यही समझौता फरक्का समझौता कहलाता है।

फरक्का समझौता ५ नवम्बर,१९७७ को लागू हुआ। इसमे दो व्यवस्थाए की गयीं -

अल्पकालीन व्यवस्था के अनुसार १२ अप्रैल से ३० अप्रैल तक जबकि पानी की बहुत कमी रहती है भारत को २०,८०० क्यूसेक और बगलादेश को ३४,७०० क्यूसेक पानी मिलेगा और इसके तुरन्त

बाद भारत को मिलने वाले पानी की मात्रा बढती जायेगी और जल्दी ही ४० ००० क्यूसेक तक पहुच जायेगी। अल्पकालीन व्यवस्था मे यह बात भी रखी गयी कि यह समझौता ५ वर्ष के लिये है और ३ वर्ष बाद इस पर पुनर्विचार किया जायेगा।

दीर्घकालीन व्यवस्था के अन्तर्गत दोनो देशो ने अपने ऊपर गगा के प्रवाह को तेज करने की जिम्मेदारी ली और १९७२ मे स्थापित सयुक्त आयोग इस सम्बन्ध मे दोनो पक्षो के प्रस्तावो की जाच करके यह बतायेगा कि उनके प्रस्ताव व्यवहारिक और मितव्ययी है या नही और ये सिफारिशे दोनो को लगभग पाच वर्ष के भीतर विचार के लिये मिल जायेगी।

भारत मे इस समझौते पर तीखी प्रतिक्रियाए हुई। आलोचको के अनुसार गगा मुख्य रूप से भारतीय नदी है क्योकि इसकी ८० प्रतिशत धारा भारत मे है। दूसरा ४० ००० क्यूसेक से कम पानी मिलने पर कलकत्ता की हालत खराब होने का अदेशा था जबकि फरक्का का निर्माण कलकत्ता बन्दरगाह के लिए ही हुआ था। तीसरा पानी की कमी के समय भारत को केवल २०,८०० क्यूसेक पानी ही मिलेगा जो इसकी आवश्यकता से लगभग २०,००० क्यूसेक कम होगा और बगला देश को अपनी आवश्यकता से ५,००० क्यूसेक अधिक पानी मिलेगा। वस्तुत बगाल और त्रिपुरा की जनता को नाराज करके फरक्का समझौता किया गया। डा वेद प्रताप वैदिक के अनुसार, फरक्का समझौते के अन्तर्गत बगला देश को रियायते

देने के लिये जनता सरकार ने भारत द्वारा प्रस्तुत पुराने सभी तर्कों को दरकिनार कर दिया। हो सकता है कि कांग्रेस सरकार कलकत्ता बन्दरगाह को बचाने के नाम पर जरूरत से ज्यादा पानी मागने की बात करती रही हो और जनता सरकार ने उचित उदारता का परिचय दिया हो किन्तु उसका नतीजा क्या हुआ?, उदारता बाझ ही साबित हुई। फरक्का समझौता गगा के पानी के बटवारे की समस्या का स्थायी समाधान नही था। अत- इसे १९८२ के समझौते स्मरण पत्र द्वारा रद कर दिया गया[9]।

गगा के पानी के बटवारे की समस्या को हल करने के लिए भारत ने सितम्बर १९७७ मे अपने हितो को अनदेखा करते हुए बगला देश के साथ इसलिए फरक्का समझौता किया था कि इससे गगा के प्रवाह को तेज किया जा सकेगा और दोनो देशो की वार्ताओ से समस्या का स्थायी समाधान हो सकेगा। लेकिन बगला देश १९७७ के अन्तरिम समझौते को अन्तिम समझौता मानता रहा और उसके द्वारा प्राप्त रियायतो को निरन्तर बनाये रखना चाहता है। इस प्रकार यह कहा जा सकता है कि बगला देश फरक्का समझौते से केवल प्रारम्भिक लाभ उठाना चाहता है, वह इसके स्थायी समाधान के प्रति बिल्कुल उत्सुक नही है[10]।

बगला देश ने गगा जल वितरण की समस्या को, जो द्विपक्षीय समस्या है, बहुपक्षीय एव अर्न्तराष्ट्रीय दिशा देने का प्रयास किया। बगलादेश ने नेपाल, चीन, भूटान और विश्व बैक को भी इस समस्या

मे घसीटने का प्रयास किया[8]।

बगला देश के हिन्दू और बिहारी मुसलमान अपने आपको सुरक्षित महसूस नही करते परिणामस्वरूप वे अवैध रूप से भारत मे आते है जिससे भारत के सीमावर्ती प्रदेशो - त्रिपुरा असम बगाल मिजोरम आदि मे स्थति बिगड जाती है।

१९७४ को समझौते के अनुसार मुहरी नदी के पानी की मध्य रेखा ही भारत-बगला देश की सीमा रेखा है। बगला देश रायफल के अधिकारियो ने इस समझौते की उल्लघन करके १९७९ मे भारतीय जमीन पर अपना दावा पेश किया और भारतीय किसानो पर गोलिया चलायी। यह विवाद ४४-४५ एकड जमीन के बारे मे है जो त्रिपुरा राज्य के बेलोनिया कस्बे के पास मुहरी नदी के भारतीय तट पर है।

नवमूर द्वीप बगाल की खाडी मे उभरा एक नया सा द्वीप है। इसका क्षेत्रफल केवल १२ वर्गकिलोमीटर है। बगला देश इसे दक्षिण तलपती कहता है और भारत इसे पुरबाशा की सज्ञा देता है। यह द्वीप भारतीय सीमाओ मे है फिर भी बगला देश इस पर अपना दावा करता है। अगस्त, १९८१ मे बगलादेश के आठ युद्वपोतो ने इस पर कब्जा करने का विफल प्रयास किया। वर्तमान मे यह द्वीप भारत के अधिकार मे है। बगला देश इस मामले को भी अन्तर्राष्ट्रीय स्तर पर लाना चाहता है।

चकमा शरणार्थियो की समस्या ने भी दोनो देशो मे उत्तेजना पैदा की। यद्यपि बगला देश ने चकमा शरणार्थियो को वापस लेने

का वायदा किया, परन्तु भय के कारण चकमा शरणार्थी बगला देश जाना नही चाहते।

अब हम उपरोक्त समस्याओं के परिपेक्ष्य मे राजीव गाधी के काल मे भारत बगला देश सम्बन्ध पर दृष्टिपात करेगे ।

उपरोक्त पृष्ठ भूमि राजीव गॉधी ने बगला देशके साथ सबंधो को गम्भीरता से लिया [11]। नैसाऊ मे राष्ट्रमडल शिखर बैठक के दौरान प्रधानमत्री ने बगला देश के राष्ट्रपति से बातचीत की । यह फैसला किया गया कि गगा के पानी के पानी की लम्बे समय से चली आ रही समस्या के समाधान का रास्ता ढूढने के लिये दोनो देशो के सिचाई मत्री की नयी दिल्ली यात्रा का परिणाम था कि सहमति के ज्ञापन पर हस्ताक्षर किये गये जिसके अन्तर्गत जल ससाधन मत्रियो को दोनो देशो मे उपलब्ध साझे जल ससाधनो का सयुक्त अध्ययन करना था इससे फरक्का गगा मे पानी का बहाव बढाने की समस्या का दोनो देश समाधान निकाल पाते। ज्ञापन मे ये भी प्राविधान था कि इसकी वैधताके तीन वर्षो के दौरान, १९८२ मे हस्ताक्षर किये गये सहमति के ज्ञापन की शर्तो व नियमो के अनुसार फरक्का मे गगा के पानी का बटवारा होगा। दक्षिण ऐशियाई क्षेत्रीय सहयोग एसोसिएशन के दिसम्बर,१९८५ मे हुये शिखर सम्मेलन के समय प्रधान मत्री पुन राष्ट्रपति इरशाद से मिले। इससे पहले वे जून मे भी उनसे मिले थे जब वे तूफान पीडितो के प्रति सहानभूति व्यक्त करने के लिये श्री लका के राष्ट्रपति जयवर्धने के साथ ढाका

और आपसी हित के मामलो पर राष्ट्रपति इरशाद के साथ गहन बातचीत की। इस यात्रा के दौरान इस बात के महत्व पर जोर दिया गया कि अप्रैल १९८६ के बाद बगलादेश से भारत मे प्रवेश करने वाले ४९००० से अधिक चकमा अप्रवासियो को बगलादेश वापिस ले ले। दुर्भाग्य से, बगलादेश के साथ बारम्बार इस बारे मे बातचीत किए जाने के बावजूद समस्या बनी हुई है और चकमा आप्रवासी भारत मे ही रह रहे है तथा वे तब तक लौटने को तैयार नही है जब तक कि बगलादेश सरकार उनकी सुरक्षा के लए निश्रित गारटी न ले। नदी जल के सामान्य बॅटवारे के प्रश्न पर इस विषय के अध्ययन के लिये गठित विशेषज्ञो की सयुक्त समिति का कार्यकाल दो बार पहले मई १९८७ मे पुन नवम्बर १९८७ मे बढाया गया था।

बगलादेश के साथ मैत्रीपूर्ण सबधो को बेहतर बनाने के प्रयास जारी रहे। सितम्बर १९८८ मे वहॉ विनाशकारी बाढ बडे पैमाने पर आई। एक पडोसी मित्र की जिम्मेदारियो के अनुरूप बगलादेश द्वारा सहायता के लिये की गयी अपील के जवाब मे वहॉ राहत सहायता पहुॅचाने वाला भारत पहला देश था[14]।

भारत बॅगलादेश से ब्रहमपुत्र नदी की विनाशकारी बाढ क्षमता पर नियत्रण करने के लिये उसे उपयोगी बनाने और इसकी प्रचुर जलराशि को दोनो देशो लिए इस्तेमाल करने मे सहयोग करने पर बल देता रहा है। भारत द्वारा १९७८ मे रखा गया पहला विस्तृत प्रस्ताव दोबारा राष्ट्रपति श्री इरशाद के सम्मुख २९ सितम्बर,१९८८को

उस समय रखा गया जब वे भारत की यात्रा मे आये थे[15]। वाद प्रवध के लिये सम्भावित सहयोग के बारे मे विचार-विमर्श करने के लिये जल ससाधन विशेषज्ञो के एक सयुक्त कार्यदल का गठन किया गया।

लगभग तीन वर्ष पहले बगलादेश के करीब ४५,००० चकमा शरणार्थी भारत आये थे और वे अभी तक यहॉ बसे हुये है। भारत बगलादेश से लगातार ये आग्रह करता है कि वह अपने यहॉ ऐसी परिस्थियॉ पैदा करे जिससे इन शरणार्थीयो मे विश्वास पैदा हो और वे अपने धर लौट जाये[16]।

इस प्रकार हम देखते है कि अपने पूरे प्रधानमत्रित्व काल मे श्री राजीव गाधी बाग्लादेश के साथ भारत के सबधो को सुधारने के कार्य मे लगे रहे है।

पाद टिप्पणिया

1 Ismail M India and their Neighbours Page 179

2 Ministry of External Affairs India and Foreign Affairs Records

3 An article by Ajit Bhattacharya on Bangaladesh crises

4 Times of India – 4 12 1971

5 Indian Express – 7 12 1971

6 Hindustan Times 10 1 1972

7 Hindustan Times 20 5 1972

8 Times of India – 16 8 1975

9 Chopra s Ed Studies in India s Foreign Policy Page 161

10 Subramanyam K Our National Security Page –149

11 Harish Chandra Rajiv Gandhi many facts Page 173

12 भारत १९८६ सूचना एव प्रकाश विभाग नयी दिल्ली पृष्ठ-७१८

13 भारत १९८७ सूचना एव प्रकाश विभाग नयी दिल्ली-पृष्ठ-५१५

14 भारत १९८८-८९ सूचना एव प्रकाश विभाग नयी दिल्ली पृष्ठ-५५६

15 Times of India 30 09 1988

16 भारत १९९०-सूचना एवं प्रकाश विभाग पृष्ठ-६४५

अध्याय-९

उपसंहार

राजीव गाधी के प्रधानमत्रित्वकाल मे भारत का पडोसी देशो से सम्बध विषयक विशद विवेचन के पश्चात हम इस निष्कर्ष पर पहुचे है कि राजीव गाधी की वैज्ञानिक सोच, नवोन्मेषक विचार और आधुनिक अवधारणा ने भारतीय विदेश नीति को एक नयी दिशा दी है। आज ग्लोबलाइजेशन और लिबरालाईजेशन के इस दौर मे जब दुनिया के सभी देश अपने सर्वागीण विकास के लिये एक दूसरे पर निर्भर है कोइ भी राष्ट्र अपने को विश्व समुदाय से अलग नही रह सकता है। ऐसी स्थिति मे यह आवश्यक हो गया है कि प्रत्येक राष्ट्र अपने पड़ोसी देशो से बेहतर सम्बध कायम करे। इनफोरमेशन टेक्नोलोजी का जो विस्फोट आज हमारे सामने दिखायी दे रहा है वह राजीव गाधी की दूरदृष्टि ने बहुत पहले ही देख लिया था। इक्कीसवी शताब्दी को कम्प्यूटर युग मे ले जाने का उनका सपना था।

भारतीय विदेश नीति के मौलिक सिद्धातो जैसे असलग्नता साधनो की पवित्रता उपनिवेशवाद तथा साम्राज्यवाद विरोधी सिद्धान्त, जातिवाद एव नस्लवाद विरोधी सिद्धात एव पचशील के महत्वपूर्ण सिद्धातो के आलोक मे भारतीय राजनीतिज्ञो द्वारा अतर्राष्ट्रीय रगमच पर किये गये निर्णयो, क्रियान्वयनो तथा अदा की गयी भूमिका का वृहद वर्णन करने के पश्चात राजीव गाधी के काल मे अतर्राष्ट्रीय सगठनो मे भारतीय योगदान की चर्चा की गयी। भारत के प्रथम प्रधानमत्री प० जवाहर लाल नेहरू से लेकर राजीव

गाधी के प्रधानमत्रित्व काल तक भारत-चीन भारत-भूटान भारत-पाकिस्तान भारत-श्रीलका, भारत-बग्लादेश सम्बधो का मूल्याकन वर्तमान परिप्रेक्ष्य मे किया गया ।

किसी भी देश की विदेश नीति वहॉ के राष्ट्रीय आदोलन ऐतिहासिक पृष्ठभूमि सास्कृतिक मूल्यो राजनीतिक परिस्थितयो स्थानीय विशेषताओ नेतृत्व व्यक्तित्व भौगोलिक एव अतराष्ट्रीय व्यवस्थाओं से प्रभावित रहती है। भारत जैसे धर्म जाति, सस्कृति, परम्परा की विविधतापूर्व देश मे, जहॉ धर्म निरपेक्षता एव समाजवाद पर लोकतत्र की आधारशिला रखी गयी है विदेश नीति का निर्माण या निर्धारण एक जटिल कार्य है । महात्मा गाधी के शब्दो मे 'भारत इस पृथ्वी के एशियाई एव अन्य गैर-यूरोपीय जातियो के खोज की कुजी है' (Collected Work of Mahatma Gandhı (New Delhı,1969, vol 35, P 457)

जवाहरलाल नेहरू से लेकर इदिरागाधी तक भारत के पडोसी देशो से कैसे सम्बन्ध रहे, तुलनात्मक विवेचन करते हुए राजीव गाधी के प्रधानमत्रित्व काल मे पड़ोसी देशो से सम्बन्धो का मूल्याकन किया गया । राजीव गाधी की नई सोच, नई दिशा और नवोन्मेषक विचारो का प्रस्फुटन उनकी पड़ोसी देशो की यात्राओं, समझौता वार्ताओ और विभिन्न अतराष्ट्रीय मचो पर व्यक्त विचारो से होता है । अग्रिम दो अनुच्छेदो मे राजीव गाधी के पड़ोसी देशो के सम्बधो का सार सक्षेप प्रस्तुत करेगे।

5 जनवरी १९८५ को प्रधानमत्री का पद ग्रहण करने के बाद प्रधान मत्री का पद ग्रहण करने के बाद प्रधानमत्री राजीव गाधी ने पडोसी देशो के साथ मे मैत्रीपूर्ण सम्बध स्थापित करने के लिये व्याहारिकता पर बल दिया। अप्रैल, १९८५ मे उनकी ढाका यात्रा से भारत व बाग्लादेश के सम्बन्धो मे सुधार की प्रक्रिया शुरू हुई । १९८५ मे भारतीय प्रधानमत्री राजीव गाधी ने बाग्लादेश के राष्ट्रपति इरशाद से राष्ट्रमडल के नसाऊ (Nasau) सम्मेलन मे मुलाकात की । इस अवसर पर दोनो देशो के सिंचाई मत्रियो ने एक समझौते पर हस्ताक्षर किये जिसमे कि गगा के परनी के बटवारे की समस्या का समाधान निकाला जा सके । नवम्बर १९८५ मे भारत व बाग्लादेश मे एम० ओ० यू० पर तीन साल के लिये हस्ताक्षर किये जिसके अतर्गत प्राप्य पानी के ससाधनो का सयुक्त अध्ययन शुरू किया जा सके ताकि फरक्का बॉध मे गगा के पानी मे बढोत्तरी की समस्या का समाधान निकाला जा सके । यह एक महत्वपूर्ण कदम था ।

पडोसी देशो से बेहतर सम्बध बनाने के उद्देश्य से राजीव गाधी दिसम्बर १९८५ मे सार्क के प्रथम शिखर सम्मेलन के दौरान राष्ट्रपति इरशाद से मुलाकात की । इस मुलाकात के दौरान द्विपक्षीय सम्बधो को सुधारने के दिशा मे तीन बीघा गलियारे पर समझौते को शीघ्र लागू करने की वचनवद्धता दोहरायी गयी । कानूनी अडचनो के बाबजूद भी तत्कालीन सरकार ने दहाग्राम व अगारपोटा, बगलादेश

को प्रवेश की सूविधा प्रदान करना प्रस्तावित किया। इतने सबके के बाबजूद भारत-बगलादेश के बीच तनाव का मुख्य कारण बगलादेश के गैर कानूनी बगलादेशियो का भारत मे प्रवेश बरकरार रहा। ४५ ००० चकमा शरणार्थियो को भारत से बगलादेश वापस करने के सदर्भ मे बातचीत का नया सिलसिला शुरू हुआ।

राजीव गाधी के प्रधानमत्रित्व काल मे भारत के मैत्रीपूर्ण सम्बध रहे। 3 नवम्बर 1988 को जब भाडे के विदेशी सैनिको ने माले पर आक्रमण किया तो माले सरकार के अनुरोध पर भारतीय सैनिको ने स्थिति पर काबू कर माले की स्वतत्रता व सम्प्रभुता की रक्षा की। राष्ट्रपति गयूम 7 व 8 दिसम्बर को भारत यात्रा पर आये और माले की सम्प्रभुता की रक्षा के लिये भारत के प्रति आभार प्रकट किया।

भारत-पाकिस्तान विभाजन के समय से ही दोनो देशो के मध्य तनाव बढता गया। विभिन्न सरकारो ने इस खाई को पाटने की कोशिश की, किन्तु जब भारत मे युवा और वैज्ञानिक सोच सम्पन्न प्रधानमत्री राजीव गाधी सत्ता मे आये तो इस दिशा मे प्रयास तेज हो गया। इसका एक प्रमुख कारण यह भी था कि भारत की ही तरह पाकिस्तान की सत्ता भी जुल्फिकार अली भुट्टो की बेटी बेनजीर के युवा हाथो मे थी। सार्क के चौथे शिखर सम्मेलन (दिसम्बर,1988) इस्लामाबाद मे राजीव गाधी ने बेनजीर भुटटो के साथ द्विपक्षीय एव अन्य समझौतो पर खुल कर बातचीत की, जिसके परिणाम स्वरूप

तीन महत्वपूर्ण समझौतो पर हस्ताक्षर किये गये

१ दोनो देश एक-दूसरे के आणविक प्रतिष्ठानो पर आक्रमण नही करेगे।

२ सास्कृतिक सहयोग

३ अन्तर्राष्ट्रीय वायु परिवहन मे प्राप्त आय के दोहरे कराधान का परिहार।

भारत और पाकिस्तान दोनो देशो के प्रधानमत्रियो ने शिमला समझौते की बात दोहरायी। बेनजीर भुट्टो ने इस समझौते को करीबी से देखा था जिसका वर्णन उन्होने अपनी आत्मकथा ' पूरब की बेटी ' मे किया है । किन्तु उनके सामने घरेलू उलझने थी सैनिक समुदाय मे कटुता पैदा होने का भय था या उसके अभिन्न मित्र अमरीका तथा चीन के सैनिक एव सामरिक हितो पर प्रतिकूल प्रभाव पड़ने की आशका थी। इन परिस्थितियो मे बेनजीर भुट्टो शिमला समझौते को जोखिम नही उठा पाईं।

पूर्व प्रधानमत्रियो के विपरीत राजीव गाधी और बेनजीर भुटटो एक दूसरे के खिलाफ बयानबाजी से परहेज करते रहे। मुद्दो का निपटारा करने के लिये तथा भारत के साथ सम्बध सामान्य बनाने के लिये सावधानीपूर्ण साहस तथा इच्छा शक्ति की आवश्यकता थी ।बेनजीर अपने वालिद द्वारा किये गये शिमला समझौते की दुहाई तो देती रहीं लेकिन लागू करने मे राजनीतिक मनोबल नही जुटा पाई । यही वजह थी कि सियाचीन ग्लैसियर, आणविक शस्त्रो की होड़ और कश्मीर समस्या जैसे मुद्दे अछूते रह गये ।

लाहौर मे २६ दिसम्बर,१९८८ को बरिष्ठ सम्पादको को

सम्बोधित करते हुए बेनजीर भुटटो से स्पष्ट किया था कि कश्मीर समस्या का समाधान भारतीय उपमहाद्वीप की शाति के लिए बहुत आवश्यक है।

सियाचीन के मामले पर रक्षा सचिव स्तर पर मई व दिसम्बर १९८८ मे वार्ता शुरू हुई परन्तु पाकिस्तान द्वारा आतकवादियो को भौतिक व नैतिक समर्थन देना जारी रहने के कारण सम्बध सामान्य नही हो सके और यह मसला लटका रह गया।

राजीव गाधी के प्रधान मत्रित्व काल मे पडोसी देशो के साथ सम्बधो का विश्लषण करने पर स्पष्ट हो जाता है कि इस दौरान भारत की विदेश नीति मे जहॉ युवा प्रधानमत्री की नवोन्मेषक दृष्टि थी वही परम्परा का अपेक्षित निर्वाह भी था। समय की माग को दृष्टिगत रखते हुए राष्ट्रहित मे राजीव गाधी ने अमरीका के साथ तकनीक, प्रतिरक्षा एव आर्थिक सहयोग को बढावा देने मे रचनात्मक भूमिका निभाई। इसके अतिरिक्त सोबियत सघ के साथ विशेष सामरिक सम्बधो की निरन्तरता बनाये रखकर महाशक्तियो के साथ सम्बधो मे बेहतर तालमेल बनाये रखा। इस काल मे असलग्न आदोलन को गतिशीलता प्रदान की गयी। सार्क सगठन को और अधिक मजबूत बनाकर इसे गति दिशा एव शक्ति सम्पन्न बनाने मे भारत का सक्रिय सहयोग रहा। अन्तर्राष्ट्रीय क्षेत्र मे आणविक रासायनिक एव जैविक हथियारो पर प्रतिबध लगाने की दिशा मे विभिन्न मचो के माध्यम से भारत ने प्रभावशाली भूमिका निभाई।

परन्तु राजीव गाधी के प्रधानमत्रित्व काल मे समान सस्कृति धर्म परम्परा और रीति-रिवाज वाले राष्ट्र नेपाल के साथ मधुर सम्बध नही स्थापित हो सके। चीन के साथ सम्बधो को सामान्य बनाने एव भविष्य के लिये अपेक्षित सामजस्य बनाये रखने के लिये राजीव गाधी की दिसम्बर १९८८ की चीन यात्रा मील का पत्थर साबित हुई। निकटतम पडोसी देशो से तमाम वार्ताओ समझौतो व अन्य सार्थक प्रयासो के बावजूद सम्बध सामान्य नही बन सके। निष्कर्षत यह कहा जा सकता है कि कुछ गम्भीर त्रुटियो के बाबजूद भी राजीव गाधी की विदेश नीति सफल कही जा सकती है।

BOOKS

1 Appadoraai Domestic Roots of India's Foreign Policy

2 Anthony H Richmond The colour Problem

3 Appadorai and M S Rajan India's Foreign Policy and Relations

4 Appadorai India's Foreign Policy

5 Kapur India s Nuclear Option Atomic Diplomacy and Decision Making

6 Braine India Stay in the Common Wealth

7 Bimal Prasad India's Foreign Policy Studues in Continuity and change

8 Jain South Asian India and United States

9 Bhawani Sen Gupta Rajiv Gandhi a Political Study

10 Bimal Prasad The Origins of Indian Foreign Policy The Indian National Congress and World Affairs

11 Nanda Ed Indian Foreign Policy The Nehru years

12 Chandra R Barman The Asean and India India Quarterly

13 C Ned Somvajan Formulation and Practice of India's Foreign Policy

14 Levy straaus Race and History

15 Carrasmary Indira Gandhi In the Crucible of leadership

16 Chester Bowles The New Dimension of Peace

17 Durgadas India and the World

18 Dilip Mukherjee Dealing with Nepal (Times of India, June 6 1990)

19 Dom Morees Mr Gandhi

20 Drieberg Indira Gandhi

21 Defence of India ed Chanchal Sarkar Press Institute of India

22 Devendra Khanna Mother and Son

23 Mankekar Twenty two Fateful Days

24 Frank Moraes Jawahar Lal Nehru

25 Gopal Krishna (One Prety to minance) Development and trends

26 Jansen Afro Asia and Non alignment

27 Telang Indo China Dispute

28 Government of India White Paper on Indo China Relations

29 Mirchandani India's Nuclear Diploma

30 Hans J Morenthau Dilemmas of Politics

31 Harish Chandra Rajiv Gandhi Many Facts

32 Henery Kissinger The White House Years

33 Healy Katleen Rajiv Gaandhi The Year of Power

34 James N Rosenau (ed) International Politics and Foreign Policy A Reader in Research and Theory

35 Kacharoo India and the Commonwealth

36 Bandyopaadhyay India China Relation Out look for the 1980 Foreign Affairs Reports (New Delhi)

37 J C Kundra Indian Foreign Policy

38 Gunther Inside Asia

39 Keith Horsefield The real cost of the War

40 Bains India's International Dispute

41 Jawaharlal Nehru (1) India's Foreign Policy (2) The Discovery of India

42 Subramanyam Our National Security

43 Panikar India and the Indian Ocean

44 Murty Indian Foreign Policy

45 Mishra Ed Studies in Indian Foreign Policy

46 Mishra Ed Janta's Foreign Policy

47 Krishna Kant "Border Security Belt A Must" The Hindustan Times August

48 Rustamji Closing in on Terrorists 'August 19 1986

49 Mishra Ed Jantaa's Foreign Policy

50 Karunakar Gupta India's Foreign Policy

51 Karunakaran ed Outside the Contest A Study of Non alignment and the Foreign Policies of Some Non aligned countries

52 Karunakaran India in the World Affairs (2 vols)

53 Mishra Ed Non Alignment Frontiers and Dynamics

54 Singh India's Foreign Policy The Shastri Period

55 Marguard The Peoples and Policies of South Africa

56 Natrajan The American Shadow Over India

57 Mani Sankar Ayayer Rajiv's Footprints one year in Parliament

58 Shah Rajiv Gandhi in Parliament

59 Ismail India and their Neighbours

60 Madan Gopal India as a world Power

61 Martin Deming Levis (Ed) Gandhi Maker of Modern India

62 Mıchael Brecher Nehru A Polıtıcal Bıography

63 Mohammad Yunus Persons Passıons and Polıtıcs

64 Moraŋee Desaı The story of my lıfe

65 Mrs Vıjay Laxmı Pandıt The Scope of Happıness A personal Memoır

66 M V Kamath Indıa at the Unıted Natıons

67 Madan Gopal Gupta Internatıonal Relatıons sınce 1919 Three parts

68 Nehru Independence and After

69 Nıcholas Nagent Rajıv Gandhı s son of a Dynasty

70 Oxford Illustrated Encyclopedıa The Physıcal World Edıtor Sır Vıvıan Fuch 1985

71 Rao Defence Wıthout Drıft

72 Chakravartı Indıa Chına Relatıons

73 Rajnı Kotharı The Congress System ın Indıa" from Party System and Electıon Studıes

74 Berkes and M S Bedı The Dıplomacy of Indıa Indıan Foreıgn Polıcy ın the Unıted Natıons

75 Rama Kant Nepal Chına and Indıa

76 Rıchard Attenborough In Search of Gandhı, 1982

77 Reader's Dıgest Great Events of the 20th Century How they change our lıves

78 Karanjıa The Mıd of Mr Nehru 1960

79 Raj Mohan Gandhi Will the Real Rajiv Stand Up ? Indian Express Delhi 12 August 1986

80 Raj Mohan Sri Lanka the Fractured Island Penguin 1989

81 Horn "Afghanistan and the Soviet Indian Influence Friendship Asian Survey

82 Arora American Foreign Policy Towards India

83 Suffinal Dutt With Nehru in the Foreign Policy

84 Burke Mainspring of India and Pakistan Foreign Policy

85 Tharoor Reasons of State Political Development and Foreign Policy Under Indira Gandhi

86 Patel Foreign Policy of India

87 Chopra Ed Studies in India's Foreign Policy

88 Swaraj Paul Indira Gandhi 1985

89 Mulgaokar A Question of Rights 'Indian Express Delhi" August 1986

90 Seventh Conference of heads of State or Government of Nonaligned Countries New Delhi 1983

91 Khera India s Defence Problem

92 Sir Anthony Eden The memoirs of Full circle

93 Sumer Kaul Reagan s Spots and Stripes " In Indian Express 26 July 1986

94 Simi Garewal India's Rajiv

95 Mukherjee India's Role in World Peace

96 Dutt India Foreign Policy

97 Dutt China's Foreign Policy

98 Chipman India's Foreign Policy

99 Levi Free India in Asia

100 Wayland Young Strategy for survivaal